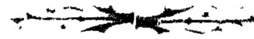
ऋग्वेद-संहिता

[सरल हिन्दी-टीका-सहित]

प्रथम अष्टक (प्रथम खण्ड)



टीकाकार

पण्डित रामगोविन्द त्रिवेदी वेदान्तशास्त्री

("दर्शन-परिचय," "हिन्दी-विष्णु-पुराण," "हिन्दीपुस्तक-कोष," "राजर्षि प्रह्लाद," "भक्त ध्रुव," "महासती मदालसा," "रत्नावली" आदिके लेखक "आर्यमहिला" (बनारस), "विश्वदूत" (रंगून), "सेनापति" (कलकत्ता), "गङ्गा" (सुलतानगंज) आदिके भूतपूर्व सम्पादक, "गीता-प्रचारक-महामण्डल" (मोरिशस)के जन्मदाता, "दक्षिण अफ्रीकन सनातन-धर्म-महामण्डल" (डरबन, नेटाल)के आजीवन सभापति तथा भारतधर्ममहामण्डल (बनारस)के महोपदेशक)

— और —

पण्डित गौरीनाथ झा व्याकरणतीर्थ

(प्राइवेट सेक्रेटरी, बनैलीराज्याधिपति साहित्य-विभूषण कुमार कृष्णानन्द सिंह बहादुर तथा "गङ्गा" और "वैदिक-पुस्तकमाला"के अन्यतम जन्मदाता एवम् अध्यक्ष)



प्रकाशक

पण्डित गौरीनाथ झा व्याकरणतीर्थ

सञ्चालक, "वैदिकपुस्तकमाला," सुलतानगंज (ई० आई० आर०)

मूल्य ६) | ज्येष्ठ, १९९२ विक्रमीय | प्रथम संस्करण २०००

...ढ़ना चाहिये।

...सलिये कि—

... है।

...ाचीन पुस्तक है।

... देशसेवा, सत्य, त्याग आदि मनुष्यजातिकी ...का वेदमें बड़ा ही सुन्दर विवरण है।

... इतिहास, कला, विज्ञान, धर्म-प्रेम, समाज-व्यवस्था, राष्ट्रधर्म, यज्ञ-रहस्य आदिको दर्पणकी तरह दिखाता है।

इसलिये जिस प्रकार हर एक ईसाई बाइबिलको और हर एक मुसलमान कुरानको, गाड और खुदाकी विमल वाणी समझकर, अपने पास रखता है, उसी प्रकार ईश्वरका पवित्र उपदेश जानकर वेदको अपने पास रखना हर एक हिन्दूका आवश्यक कर्त्तव्य है।

लज्जाकी बात है कि, जर्मनी, फ्रांस, अमेरिका, इंगलैंड आदिके विद्वानोंने तो वेदकी सारी पुस्तकोंको छपा डाला और हिन्दीमें एक भी ऋग्वेदका सरल अनुवाद नहीं। इसी अभावकी पूर्तिके लिये हमने "वैदिक-पुस्तकमाला" द्वारा सरस-सरल हिन्दीमें चारो वेदोंका अनुवाद कराना निश्चित किया है। अबतक ऋग्वेदके चार अष्टक निकल चुके हैं और पाँचवें अष्टकका प्रथम खण्ड (चार अध्याय) आपके सामने है। चार अष्टकोंका मूल्य ८) रु० और पाँचवें अष्टकके प्रथम खण्डका मूल्य १) रु० है।

॥) देकर "वैदिक-पुस्तकमाला"के स्थायी ग्राहक बननेवालोंको कभी भी डाक खर्च नहीं देना होता है और पुस्तक निकलते ही वी०पी० से भेज दी जाती है।

व्यवस्थापक, "वैदिक-पुस्तकमाला," सुलतानगंज (ई० आई० आर०)

ऋग्वेद-संहिता

(सरल-हिन्दी-टीका-सहित)

पञ्चम अष्टक (प्रथम खण्ड)



टीकाकार

पण्डित रामगोविन्द त्रिवेदी वेदान्तशास्त्री

(“दर्शन-परिचय”, “हिन्दी-विष्णुपुराण”, “हिन्दीपुस्तक कोष”, “राजर्षि प्रह्लाद”, “भक्त ध्रुव”, “महासती मदालसा”, “रत्नावली” आदिके लेखक, “आर्यमहिला” (बनारस), “विश्वदूत” (रंगून), “सेनापति” (कलकत्ता) “गङ्गा” (सुलतानगंज) आदिके भूतपूर्व सम्पादक, “गीता-प्रचारक-महामण्डल” (मोरिशस) के जन्मदाता, “दक्षिण अफ्रीकन सनातन-धर्म-महामण्डल” (डरबन, नेटाल)के आजीवन सभापति तथा भारतधर्ममहामण्डल (बनारस) के महोपदेशक)

—*और*—

पण्डित गौरीनाथ झा व्याकरणतीर्थ

(प्राइवेट सेक्रेटरी, बनैलीराज्याधिपति साहित्य-विभूषण कुमार कृष्णानन्द सिंह बहादुर तथा “गङ्गा” और “वैदिकपुस्तकमाला”के अन्यतम जन्मदाता एवम् अध्यक्ष)



प्रकाशक

पण्डित गौरीनाथ झा व्याकरणतीर्थ

संचालक, “वैदिकपुस्तकमाला”, सुलतानगंज (ई० आई० आर०)



मूल्य १) | ज्येष्ठ, १९९२ विक्रमीय | प्रथम संस्करण २०००

मिथिला प्रेस,

खलीफाबाग, भागलपुरमें मुद्रित

प्राथमिकी

चतुर्थ अष्टकके "आत्म-निवेदन"के अनुसार यह पञ्चम अष्टकका प्रथम खण्ड (प्रथम चार अध्याय) आपके सामने है। पञ्चम अष्टकके पञ्चम अध्यायसे अष्टम अध्याय तकका द्वितीय खण्ड होगा। इसी क्रमसे प्रत्येक अष्टकके दो-दो खण्ड होंगे और एक-एक मासमें एक-एक खण्ड निकला करेगा। खण्ड शब्द हमारा है- -वेदका पारिभाषिक शब्द नहीं। सुभीतेके लिये हमने इस शब्दको रखा है।

ऋग्वेदमें ६४ अध्याय और ८ अष्टक हैं। प्रत्येक अष्टक ८ अध्यायोंका है। अष्टम अष्टक अर्थात् सम्पूर्ण ऋग्वेद निकल जानेपर एक अलग खण्डमें वर्णानुक्रमिक मन्त्र-सूची, कठिन शब्दोंकी सूची (अर्थ-सहित), वैदिक देवताओंकी सविवरण सूची आदिका समावेश किया जायगा। उसके अनन्तर प्रथम अष्टकमें विज्ञापित "वेद-रहस्य" नामका प्रकाण्ड ग्रन्थ प्रकाशित किया जायगा। हम जानते हैं कि, हमारे अतीव संक्षिप्त अक्षरानुवादको पढ़ते समय अनेक पाठकोंको कितने ही सन्देह होते होंगे मरुद्गण वलय और हार कैसे पहन सकते हैं ? अश्व, पर्वत, वृक्ष, प्रस्तर, धनुष, चाबुक, लगाम आदिकी स्तुति क्यों की गयी हैं ? ऋषियों और स्तोताओंने गृह, पुत्र, धन, शत्रु-संहारकी बार-बार याचना क्यों की है ? सर्वत्र पुनरुक्ति क्यों की गयी है ? अष्टक, मण्डल, अध्याय, अनुवाक, सूक्त, वर्ग, देवता, ऋषि, छन्द, विनियोग और यज्ञका क्या रहस्य है ? सोमरसका इतना प्रचलन क्यों था ? आजकलकी दुनियामें वेदाध्ययनकी अनिवार्यता क्यों है ? वेदके प्रचारके बिना हिन्दूजातिका अधःपतन क्योंकर हुआ ? इस तरहके और भी अनेक प्रश्न उठते होंगे। वेदको शीघ्र प्रकाशित कर देने और मूल्य कम रखनेके खयालसे ही हमने अपने अनुवादके साथ ऐसे प्रश्नोंका उत्तर देनेकी चेष्टा नहीं की है और "वेद-रहस्य"में ही सबका विस्तृत उत्तर देनेका निश्चय किया हैं। हाँ, हमारे द्वारा सम्पादित "गङ्गा"के विशेषाङ्क ("वेदाङ्क") में ऐसे कितने ही प्रश्नोंका उत्तर दिया गया है। उसका मूल्य २॥) रु० है।

प्रेसके भूतोंकी दयासे २५ सूक्तके ५ वें मन्त्र (पृष्ठ ६७) की हिन्दी छूट गयी है और ६ ठे मन्त्रके अनुवादमें ५ अङ्क पड़ गया है। ४४ सूक्तके ५ वें मन्त्र (पृष्ठ १०२) की हिन्दी भी छपनेसे रह गयी है। इन दोनों मन्त्रोंकी हिन्दी यहाँ दी जाती है—

७ मण्डल, २५ सूक्त, ५ मन्त्र (पृष्ठ ६७) का अर्थ—

५ हम हर्यश्व इन्द्रके लिये सुखावह स्तोत्र करके और इन्द्रके समीप देव-प्रेरित बलकी याचना करके, सारे दुर्गोंको पार करते हुए, बल प्राप्त करेंगे। शूर, तुम सदा हमें शत्रु-बधमें समर्थ करना।

७ मण्डल, ४४ सूक्त, ५ मन्त्र (पृष्ठ १०२)का अर्थ—

५ अश्व-रूप दधिका देवता यज्ञ मार्गका अनुगमन करनेवाले हमारे स्थानको जलसे सींचें। दिव्य बलवाले अग्नि हमारे आह्वानको सुनें। महान् और विद्वान् समस्त देवता हमारे आह्-वानको सुनें।

इस भूलके लिये पाठकोंसे क्षमा-याचना है।

गङ्गा दशहरा, १९९२
कृष्णगढ़, सुलतानगंज

रामगोविन्द त्रिवेदी
गौरीनाथ झा

पञ्चम अष्टक (प्रथम खण्ड) की कुछ जानने योग्य बातें

अश्विनीकुमारोंका अश्वों द्वारा मरुदेशको लँघाना ६।६२।२
" " तुग्रपुत्र भुज्युको समुद्रसे बाहर निकालना ६।६२।६
शान्त राजाका अश्विद्वयके स्तोताओंको हिरण्मय दस रथ और पुरुष देना ६।६३।९
पुरुपन्था राजाका सैंकड़ों-हजारों अश्व देना ६।६३।१०
मरुतोंके सोनेके अलङ्कारके रथ ६।६६।२
सारथि, अश्व और पाशसे रहित मरुतोंके रथका द्युलोकमें गमन ६।६६।७
"सम्राट्" वरुण ६।६८।९
बृहस्पतिका असुर-पुरियोंको नष्ट करना ६।७३।२
लौहमय कवचका धारण ६।७५।१
धनुष्, ज्या, धनुष्कोटि, वाण, लगाम, चाबुक, हस्तघ्न (हस्त-रक्षा-चर्म), विषाक्त वाण आदिका वर्णन ६।७५ पूरा सूक्त
औरस पुत्र ७।१।२१
असुर शब्दका विविध अर्थोंमें व्यवहार (टिप्पणीमें) ७।२।३
अग्निका यव (जौ) भक्षण करना ७।३।४
लौहमय और सुवर्णमय असीम पुरियाँ ७।३।७
अरणिद्वय (काठों)से अग्निकी उत्पत्ति ७।४।२
अनौरस सन्तानकी अनिच्छा ७।४।७
दत्तक पुत्रकी अप्रशंसा ७।४।८
अनार्योंका बाहर निकाला जाना ७।५।६
नहुष राजाका करदाता बनाया जाना ७।६।५
गौओंके विभाजक और हजार गौओंवाले वसिष्ठ ७।८।६
कवि (प्राज्ञ) अग्निका सलिलसे उत्पन्न होना ७।९।३
चार वर्णों और निषाद (पञ्चजन) का उल्लेख ७।१५।२
लौह-निर्मित शतगुणपुरी ७।१५।१४
सौ नगरियोंकी बात ७।१६।१०
"क्रान्तकर्मा" अर्थमें कवि शब्द ७।१८।२
परुष्णी (वर्त्तमान रावी) की विकट धारा ७।१८।५
इन्द्रका सोमपानसे मत्त होना ७।१८।७
कवि (च्यवमानके पुत्र) का मारा जाना ७।१८।८
सुदास राजा द्वारा इक्कीस मनुष्योंका बध ७।१८।११
सुदासके लिये ६६०६६ व्यक्तियोंका इन्द्र द्वारा बध ७।१८।१४
इन्द्र द्वारा छागसे सिंहका बध ७।१८।१७
नास्तिक (भेद) का उल्लेख ७।१८।१८
इन्द्रने उपहारमें अश्वोंके सिर पाये थे ७।१८।१९
वसिष्ठका सुदास राजासे दो सौ गायों और दो रथोंका पाना ७।१८।२२
इन्द्र द्वारा शम्बरकी निन्यानवे पुरियोंका विनाश और सौवींपर अधिकार ७।१९।५
यदुवंशीका उल्लेख ७।१९।८
नारी और कश्यपसे इन्द्रका जन्म ७।२०।५
पितासे धन प्राप्त कर पुत्रका दूरदेश-गमन ७।२०।७
ज्येष्ठका कनिष्ठको और कनिष्ठका ज्येष्ठको धन देना ७।२०।७
शिश्नदेव (अब्रह्मचारी) की बात ७।२१।५
सोमकी अभिषव-विधि ७।२२।१
प्राचीन और नवीन ऋषियों द्वारा मन्त्रोंकी उत्पत्ति ७।२२।९

शिप्र (उष्णीष वा चादर) का उल्लेख ७।२५।३
सौ यज्ञ करनेवाले इन्द्र ७।३०।३
विश्वकर्मा (बढ़ई) का उल्लेख ७।३२।२०
वसिष्ठके पुत्रोंका शिरके दक्षिण भागमें चूड़ा धारण करना ७।३३।१
"दाशराज्ञयुद्ध" की बात ७।३३।३
स्तोत्रसे पितरोंकी तृप्ति ७।३३।४
दस राजाओंके संग्राममें वसिष्ठका ऊपर उठाया जाना ७।३३।५
वसिष्ठका तृत्सुओंके भारतोंका पुरोहित होना ७।३३।६
सहस्र शाखाओंवाला संसार ७।३३।९
वसिष्ठका उर्वशीसे जन्म ७।३३।१२
मित्र और वरुणका कुम्भमें रेतःस्खलन तथा अगस्त्य और वसिष्ठका कुम्भसे जन्म ७।३३।१३
सोनेके हाथवाले इन्द्र ७।३४।४
राष्ट्रोंके राजा वरुण ७।३४।११
गौ, अश्व, ओषधि, पर्वत, नदी, वृक्ष आदिकी अर्चना ७।३५ पूरा सूक्त
नदियोंकी माता सिन्धु नदी ७।३६।६
दूध, दही और सत्तूमें मिला सोमरस ७।३७।१
देवयानसे गमन ७।३९।८
भग देवताकी पूजा ७।३२।४ और ७।४१ पूरासूक्त
पिङ्गलवर्ण अश्व ७।४४।३
विद्युत् और इन्द्रकी सहस्रों ओषधियाँ ७।४६।३
वसुओंके साथ इन्द्रका सोमरससे मत्त होना ७।४७।२
जल-देवियोंका उल्लेख ७।४९।३
नाना विष और सर्प-विष ७।५० पूरा सूक्त
वास्तोष्पति (गृह-पालक) देवकी स्तुति ७।५४ पूरा सूक्त
देव-कुक्कुरोंके वंशज वास्तोष्पति (सारमेय) ७।५५।१
चोर और डाकूकी बात ७।५५।३
सूअरका उल्लेख ७।५५।४
हर्म्य (कोठा) ७।५५।६
आँगन, वाहन और बिस्तरेपर सोनेवाली तथा पुण्य-गन्धा स्त्रियाँ ७।५५।८
श्वेतवर्ण मरुत् ७।५६।४
मरुतोंका वलय और हार ७।५६।१३
स्वर्गका उल्लेख ७।५८।१
नीलवर्ण हंस ७।५९।७
बदरीफल ७।५९।१२

वैदिक पुस्तकमाला--पञ्चम पुष्प



ऋग्वेद-संहिता

(हिन्दी-टीका-सहित)

५ अष्टक । ६ मण्डल । १ अध्याय । ६ अनुवाक ।

६२ सूक्त

अश्वि-द्वय देवता । भरद्वाज ऋषि । अनुष्टुप् छन्द ।

स्तुषे नरा दिवो अस्य प्रसन्ताश्विना हुवे जरमाणो अर्कैः ।

या सद्य उस्रा व्युषि ज्मो अन्तान्युयूषतः पर्युरू वरांसि ॥१॥

१ जो क्षण मात्रमें शत्रुओंको हराते हैं और प्रभातमें पृथिवी-पर्यन्त प्रभूत अन्धकार दूर करते हैं, उन्हीं द्युलोकके नेता और भुवनोंके ईश्वर अश्विनीकुमारोंकी मैं स्तुति करता हूँ और मन्त्रों द्वारा स्तुति करता हुआ उन्हें बुलाता हूँ ।

ता यज्ञमा शुचिभिश्चक्रमाणा रथस्य भानुं रुरुचू रजोभिः ।
पुरू वरांस्यमिता मिमानापो धन्वान्यति याथो अज्रान् ॥२॥
ता ह त्यद्वर्तिर्यदरध्रमुग्रेत्था धिय ऊहथुः शश्वदश्वैः ।
मनोजवेभिरिषिरैः शयध्यै परि व्यथिर्दाशुषो मर्त्यस्य ॥३॥
ता नव्यसो जरमाणस्य मन्मोप भूषतो युयुजानसप्ती ।
शुभं पृक्षमिषमूर्जं वहन्ता होता यक्षत्प्रत्नो अध्रुग्युवाना ॥४॥
ता वल्गू दस्रा पुरुशाकतमा प्रत्ना नव्यसा वचसा विवासे ।
या शंसते स्तुवते शम्भविष्ठा बभूवतुर्गृणते चित्रराती ॥५॥
ता भुज्युं विभिरद्भ्यः समुद्रात्तुग्रस्य सूनुमूहथू रजोभिः ।
अरेणुभिर्योजनेभिर्भुजन्ता पतत्रिभिरर्णसो निरुपस्थात् ॥६॥
वि जयुषा रथ्या यातमद्रिं श्रुतं हवं वृषणा वध्रिमत्याः ।
दशस्यन्ता शयवे पिप्यथुर्गामिति च्यवाना सुमतिं भुरण्यू ॥७॥

---

२ अश्विनीकुमार यज्ञकी ओर आते हुए, निर्मल तेजोबलसे, रथकी दीप्ति प्रकट करते हैं और असीम रूपसे तेजोंका निर्माण करते हुए जलके लिये अश्वोंको, मरुदेशको लँघाकर, ले गये ।

३ अश्विद्वय, उग्र तुमलोग उस असमृद्ध गृहमें जाते हो । इस प्रकार वाञ्छनीय और मनके समान वेगवान् अश्वों द्वारा स्तोताओंको स्वर्ग ले जाओ । हव्य दाता मनुष्यके हिंसकको दीर्घ निद्रामें सुला दो ।

४ अश्विद्वय अश्व जोतते हुए सुन्दर अन्न, पुष्टि और रसका वहन करते हुए अभिनव स्तोताकी मनोज्ञ स्तुतिके समीप आवें । वे युवक हैं । होता, द्रोह-रहित और प्राचीन अग्नि उनका याग करें ।

५ जो स्तुतिकारी (शस्त्र—स्तोता) और स्तोत्रकर्त्ता व्यक्तिको सुखी करते हैं और स्तुति-कर्त्ताको बहुविध दान देते हैं , उन्हीं रुचिर, बहुकर्मा, प्राचीन और दर्शनीय अश्विद्वयकी, नयी स्तुतिसे, मैं परिचर्या करता हूँ ।

६ तुमने तुग्रके पुत्र भुज्युको नौका-रहित हो जानेपर धूलि-रहित मार्गमें रथ-युक्त और गमनशील अश्वों द्वारा जलके उत्पत्ति-स्थान समुद्रके जलसे बाहर किया था ।

७ रथारोही अश्विनी-कुमारो, विजयी रथके द्वारा मार्गमें स्थित पर्वतका विनाश करो । तुम काम-वर्षी हो । पुत्रार्थिनीका आह्वान सुनो । स्तोताओंका मनोरथ पूर्ण करते हो । तुम स्तोताकी निवृत्त-प्रसवा गायको दुग्धशालिनी करो । इस प्रकार शुभ्रशाली होकर सर्वत्रगामी बनो ।

यद्रोदसी प्रदिवो अस्ति भूमा हेळो देवानामुत मर्त्यत्रा ।
तदादित्या वसवो रुद्रियासो रक्षोयुजे तपुरघं दधात ॥८॥
य ईं राजानावृतुथा विदधद्रजसो मित्रो वरुणश्चिकेतत् ।
गम्भीराय रक्षसे हेतिमस्य द्रोघाय चिद्वचस आनवाय ॥९॥
अन्तरैश्चक्रैस्तनयाय वर्तिर्द्युमता यातं नृवता रथेन ।
सनुत्येन त्यजसा मर्त्यस्य वनुष्यतामपि शीर्षा ववृक्तम् ॥१०॥
आ परमाभिरुत मध्यमाभिर्नियुद्भिर्यातमवमाभिरर्वाक् ।
दृळ्हस्य चिद्गोमतो वि व्रजस्य दुरो वर्तं गृणते चित्रराती ॥११॥



६३ सूक्त

अश्विद्वय देवता । भरद्वाज ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

क्व १ त्या वल्गू पुरुहूताद्य दूतो न स्तोमोऽविदन्नमस्वान् ।
आ यो अर्वाङ्नासत्या ववर्त प्रेष्ठा ह्यसथो अस्य मन्मन् ॥१॥

८ प्राचीन द्यावापृथिवी आदित्यो, वसुओ और रुद्रपुत्रो, अश्विद्वयके परिचारक मनुष्योंके प्रति देवताओंका जो महान् क्रोध है उस तापकारी क्रोधको राक्षस-पतिको मारनेके काममें लाओ।

९ जो व्यक्ति लोकोंके राजा इन अश्विनीकुमारोंकी यथासमय परिचर्या करता है, उसे मित्र और वरुण जानते हैं। वह व्यक्ति महाबली राक्षसके विरुद्ध अस्त्र फेंकता है। वह अभिद्रोहात्मक मनुष्योंके वचनानुसार अस्त्र-क्षेप करता है।

१० अश्विद्वय, तुम उत्तम चक्र, दीप्ति और सारथिवाले रथपर चढ़कर सन्तान देनेके लिये हमारे घरमें आओ और क्रोध छोड़ते हुए मनुष्योंके विघ्न-कर्त्ताओंके मस्तक छिन्न करो

११ अश्विद्वय, उत्कृष्ट मध्यम और साधारण घोड़ोंके साथ हमारे सामने आओ। दृढ़ और गौओंसे भरी गोशालाका दरवाजा खोलो। मैं स्तुति करता हूँ। मुझे विचित्र धन दो।

---

१ अनेकाहूत और मनोहर अश्विनीकुमार जहाँ ठहरते हैं, वहाँ हव्ययुक्त पञ्चदशादि स्तोम दूतकी तरह उन्हें प्राप्त करे। इसी स्तोमने अश्विद्वयको मेरी ओर घुमाया था। अश्विद्वय, स्तोताकी स्तुतिपर तुम प्रसन्न होते हो।

अरं मेगन्तं हवनायास्मै गृणाना यथा पिबाथो अन्धः ।
परि ह त्यद्वर्तिर्याथो रिषो न यत्परो नान्तरस्तुतुर्यात् ॥२॥
अकारि वामन्धसो वरीमन्नस्तारि बर्हिः सुप्रायणतमम् ।
उत्तानहस्तो युवयुर्ववन्दा वां नक्षन्तो अद्रय आञ्जन् ॥३॥
ऊर्ध्वो वामग्निरध्वरेष्वस्थात्प्र रातिरेति जूर्णिनी घृताची ।
प्र होता गूर्तमना उराणोऽयुक्त यो नासत्या हवीमन् ॥४॥
अधि श्रिये दुहिता सूर्यस्य रथं तस्थौ पुरुभुजा शतोतिम् ।
प्र मायाभिर्मायिना भूतमत्र नरा नृतू जनिमन्यज्ञियानाम् ॥५॥
युवं श्रीभिर्दर्शताभिराभिः शुभे पुष्टिमूहथुः सूर्यायाः ।
प्र वां वयो वपुषेऽनु पप्तन्नक्षद्वाणी सुष्टुता धिष्ण्या वाम् ॥६॥
आ वां वयोऽश्वासो वहिष्ठा अभि प्रयो नासत्या वहन्तु ।
प्र वां रथो मनोजवा असर्जीषः पृक्ष इषिधो अनु पूर्वीः ॥७॥

२ अश्विद्वय, हमारे आह्वानके अनुसार भली भाँति गमन करो। स्तुति किये जानेपर सोम पान करो। शत्रुसे हमारे घरको बचाओ पास या दूरका शत्रु हमारे घरको नष्ट न करने पावे।

३ सोमका विस्तृत अभिषव, तुम्हारे लिये, प्रस्तुत किया गया है। मृदुतम कुश बिछाये गये हैं। तुम्हारी कामनासे होता हाथ जोड़कर तुम्हारी स्तुति करता है। पत्थरोंने तुम्हें व्याप्त करके सोम रस प्रकट किया है।

४ तुम्हारे यज्ञके लिये अग्नि ऊपर उठते, यज्ञमें जाते तथा हव्य और घृत वाले बनते हैं। जो स्तोता अश्विद्वयका स्तोत्र-युक्त करता है, वही बहुकर्मा और अतीव उद्युक्त-मना होता है।

५ अनेकोंके रक्षक अश्विद्वय, सूर्यपुत्री तुम्हारे बहु रक्षक रथको सुशोभित करनेके लिये अधिष्ठित हुई थी। तुम देवोंकी इसी जन्मकी प्रज्ञासे प्राज्ञ नेता और नृत्यशाली बनो।

६ इस दर्शनीय कान्ति द्वारा तुम सूर्याकी शोभाके लिये पुष्टि प्राप्त करो। शोभाके लिये तुम्हारे घोड़े भली भाँति अनुगमन करते हैं। स्तवनीय अश्विद्वय, भली भाँति की गयी स्तुतियाँ तुम्हें व्याप्त करें।

७ अश्विनी-कुमारो गतिशील और ढोनेमें अत्यन्त चतुर घोड़े तुम्हें अन्नकी ओर ले आवें। मनकी तरह वेगशाली तुम्हारा रथ सम्पर्कके योग्य और अभिलषणीय प्रभूत अन्नके लिये छोड़ा गया है।

पुरु हि वां पुरुभुजा देष्णं धेनुं न इषं पिन्वतमसक्राम् ।
स्तुतश्च वां माध्वी सुष्टुतिश्च रसाश्च वामनु रातिमग्मन् ॥८॥
उत म ऋज्रे पुरयस्य रघ्वी सुमीळ्हे शतं पेरुके च पक्वा ।
शाण्डो दाद्धिरणिन स्मद्दिष्टीन्दश वशास अभिषाच ऋष्वान् ॥९॥
सं वां शता नासत्या सहस्राश्वानां पुरुपन्था गिरे दात् ।
भरद्वाजाय वीर नू गिरे दाद्धता रक्षांसि पुरुदंससा स्युः ॥१०॥
आ वां सुम्ने वरिमन्त्सूरिभिः ष्याम् ॥११॥

६४ सूक्त

उषा देवता । भरद्वाज ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

उदु श्रिय उषसो रोचमाना अस्थुरपां नोर्मयो रुशन्तः ।
कृणोति विश्वा सुपथा सुगान्यभूदु वस्वी दक्षिणा मघोनी ॥१॥
भद्रा ददृक्ष उर्विया वि भास्युत्ते शोचिर्भानवो द्यामपप्तन् ।
आविर्वक्षः कृणुषे शुम्भमानोषो देवि रोचमाना महोभिः ॥२॥

---

८ बहु-पालक अश्विनीकुमारो, तुम्हारे पास बहुत धन है; इसलिये हमारे लिये प्रीति-करी और दूसरे स्थानपर न जानेवाली धेनु तथा अन्न दो। मादयिता अश्विद्वय, तुम्हारे लिये स्तोता हैं, स्तुतियां हैं और जो तुम्हारे दानके उद्देश्यसे जाते हैं, वे सोमरस भी है ।

९ पुरयकी सरल गति और शीघ्रगामिनी दो वड़वाएँ मेरे पास हैं; सुमीढ़की सौ गायें मेरे पास हैं। पेरुकके पक्व अन्न भी मेरे पास हैं । शान्त नामके राजाने अश्विद्वयके स्तोताओंको हिरण्ययुक्त और सुदृश्य दश रथ या अश्व दिये और उनके अनुरूप ही शत्रु-नाशक तथा दर्शनीय पुरुष भी दिये थे

१० नासत्यद्वय, तुम्हारे स्तोताको पुरुपन्था नामके राजा सैकड़ो और हजारो अश्व देते हैं। वीर अश्विद्वय, वह स्तोता भरद्वाजको भी शीघ्र दें। बहुकर्म शाली अश्विनीकुमारो, राक्षस विनष्ट हों।

११ अश्विद्वय, मैं, विद्वान् व्यक्तियोंके साथ, तुम्हारे सुखद धनसे परिवेष्टित बनूं ।

---

१ दीप्तिमती और शुक्लवर्ण उषाएँ, शोभाके लिये, जल-लहरीकी तरह, उत्थित होती हैं। समस्त स्थानोंको उषा सुपथवाले और सरलतासे जाने योग्य बनाती हैं। धनवती उषा प्रशस्ता और समृद्धि-मती है ।

२ उषा देवी, तुम कल्याणीकी तरह दिखाई दे रही हो और विस्तृत होकर शोभा पा रही हो। तुम्हारी दीप्तिमती किरणें शोभा पा रही हैं। तुम्हारी दीप्तिमती किरणें अन्तरीक्षमें उठ रही हैं। तुम तेजोंसे शोभमाना और दीप्यमाना होकर रूप प्रकाश कर रही हो।

वहन्ति सीमरुणासो रुशन्तो गावः सुभगामुर्विया प्रथानाम् ।
अपेजते शूरो अस्तेव शत्रून्बाधते तमो अजिरो नवोह्ला ॥३॥
सुगोत ते सुपथा पर्वतेष्ववाते अपस्तरसि स्वभानो ।
सा न आ वह पृथुयामन्नृष्वे रयिं दिवो दुहितरिषयध्यै ॥४॥
सा वह योक्षभिरवातोषो वरं वहसि जोषमनु ।
त्वं दिवो दुहितर्या ह देवी पूर्वहूतौ मंहना दर्शता भूः ॥५॥
उत्ते वयश्चिद्वसतेरपप्तन्नरश्च ये पितुभाजो व्युष्टौ ।
अमा सते वहसि भूरि वाममुषो देवि दाशुषे मर्त्याय ॥६॥

६५ सूक्त

उषा देवता । भरद्वाज ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

एषा स्या नो दुहिता दिवोजाः क्षितीरुच्छन्ती मानुषीरजीगः ।
या भानुना रुशता राम्यास्वज्ञायि तिरस्तमसश्चिदक्तून् ॥१॥
वि तद्ययुररुणयुग्भिरश्वैश्चित्रं भान्त्युषसश्चन्द्ररथाः ।
अग्रं यज्ञस्य बृहतो नयन्तीर्वि ता बाधन्ते तम ऊर्म्यायाः ॥२॥

३ लोहित-वर्ण और दीप्तिमान् रश्मियाँ सुभगा, विस्तीर्ण और प्रथमा उषा देवताको वहन करती हैं जैसे शस्त्र फेंकनेमें निपुण वीर शत्रुको दूर करता है, वैसे ही उषा अन्धकारको दूर करती है तथा शीघ्रगामी सेनापतिकी तरह अन्धकारको रोकती हैं।

४ पर्वत और वायु रहित प्रदेश तुम्हारे लिये सुपथ और सुगम हैं। हे स्वप्रकाश-युक्ता, तुम अन्तरीक्षको पार कर डालती हो। विशाल रथवाला और सुदृश्य द्युलोक-दुहिता, हमें अभिलषणीय धन दो।

५ उषा देवी मुझे धन दो। तुम अप्रतिगत होकर प्रीति-पूर्वक अश्व द्वारा धन ढोती हो। हे द्युलोक-पुत्रि, तुम दीप्तिमती हो। प्रथम आह्वानमें पूजनीया हो। इस लिये तुम दर्शनीया होओ।

६ उषा देवि तुम्हारे प्रकट होनेपर चिड़ियाँ घोंसलोंसे निकलती हैं और अन्नके उपार्जक मनुष्य सोकर उठते हैं। सन्निधिमें वर्तमान हव्यदाता मनुष्यको यथेष्ट धन देती हो।

१ जो उषा दीप्तिमान् किरणोंसे युक्त होकर रात्रिमें तेजःपदार्थ (नक्षत्रादि) और अन्धकारको तिरस्कृत करती दिखाई देती है, वही द्युलोकोत्पन्ना पुत्री उषा हमारे लिये अन्धकार दूर करके प्रजागणको प्रकाशित करती है।

२ कान्तियुक्त रथवाली उषा देवी उसी समय बृहत् यज्ञका प्रथम चरण सम्पादित करके लाल रंगके घोड़ोंसे विस्तृत रूपसे गमन करती हैं। वह विचित्र रूपसे शोभा पाती हैं और रात्रिके अन्धकारको भली भाँति दूर हटाती हैं।

श्रवो वाजमिषमूर्जं वहन्तीर्नि दाशुष उषसो मर्त्याय ।
मघोनीर्वीरवत्पत्यमाना अवो धात विधते रत्नमद्य ॥३॥

इदा हि वो विधते रत्नमस्तीदा वीराय दाशुष उषासः ।
इदा विप्राय जरते यदुक्था नि ष्म मावते वहथा पुरा चित् ॥४॥

इदा हि त उषो अद्रिसानो गोत्रा गवामङ्गिरसो गृणन्ति ।
व्य१र्केण बिभिदुर्ब्रह्मणा च सत्या नृणामभवद्देवहूतिः ॥५॥

उच्छा दिवो दुहितः प्रत्नवन्नो भरद्वाजवद्विधते मघोनि ।
सुवीरं रयिं गृणते रिरीह्युरुगायमधि धेहि श्रवो नः ॥६॥

६६ सूक्त

मरुद्गण देवता । भरद्वाज ऋषि त्रिष्टुप् छन्द ।

वपुर्नु तच्चिकितुषे चिदस्तु समानं नाम धेनु पत्यमानम् ।
मर्तेष्वन्यद्दोहसे पीपाय । सकृच्छुक्रं दुदुहे पृश्निरूधः ॥१॥

३ उषा देवियो, तुम हव्यदाता मनुष्यको कीर्त्ति, बल, अन्न और रस दान करती हो। तुम धनशालिनी और गमनशीला हो। आज परिचर्या करनेवालेको पुत्र-पौत्र आदिसे युक्त अन्न और धन दो।

४ उषा देवियो, तुम्हारी परिचर्या करनेवालेके लिये इस समय धन है इस समय वीर हव्य-दाताके लिये तुम्हारे पास धन है। इस समय प्राज्ञ स्तोताके लिये तुम्हारे पास धन है जिस विप्रमें उक्थ नामक मन्त्र हैं, ऐसे मेरे समान व्यक्तिको, पहलेकी तरह, वही धन दो।

५ गिरितट-प्रिय उषा देवो, अङ्गिरा लोगोंने तुम्हारी कृपासे तुरत ही गायोंको छोड़ दिया था और पूजनीय स्तोत्र द्वारा अन्धकारका विनाश किया था। नेता अङ्गिरा लोगोंकी स्तुति सत्य-फलवती हुई थी।

६ द्युलोक-पुत्री उषा, प्राचीन लोगोंको तरह हमारे लिये अन्धकार दूर करो। धनशालिनी उषा, भरद्वाजकी तरह स्तुति करनेवाले मुझे पुत्र-पौत्र आदिसे युक्त धन दो। हमें अनेकोंके गन्तव्य अन्न दो।

१ मरुतोंके समान, स्थिर पदार्थोंमें भी स्थिर प्रीतिकर और गतिपरायण रूप, विद्वान् स्तोताके निकट, शीघ्र प्रकट हो। वह अन्तरीक्षमें एक बार शुक्लवर्ण जल क्षरण करता और मर्त्यलोकमें अन्य पदार्थ दोहन करनेके लिये बढ़ता है।

ये अग्नयो न शोशुचन्निधाना द्विर्यत्त्रिर्मरुतो वावृधन्त ।
अरेणवो हिरण्ययास एषां साकं नृम्णैः पौंस्येभिश्च भूवन् ॥२॥
रुद्रस्य ये मीळ्हुषः सन्ति पुत्रा यांश्चो नु दाधृविर्भरध्यै ।
विदे हि माता महो मही षा सेत् पृश्निः सुभ्वे गर्भमाधात् ॥३॥
न य ईषन्ते जनुषोऽया न्वन्तः सन्तोऽवद्यानि पुनानाः ।
निर्यद् दुह्रे शुचयोऽनु जोषमनु श्रिया तन्वमुक्षमाणाः ॥४॥
मक्षू न येषु दोहसे चिदया आ नाम धृष्णु मारुतं दधानाः ।
न ये स्तौना अयासो मह्ना नू चित्सुदानुरव यासदुग्रान् ॥५॥
त इदुग्राः शवसा धृष्णुषेणा उभे युजन्त रोदसी सुमेके ।
अध स्मैषु रोदसी स्वशोचिरामवत्सु तस्थौ न रोकः ॥६॥

२ जो धनी अग्निके समान दीप्त होते हैं, जो इच्छानुसार द्विगुण और त्रिगुण बढ़ते हैं, उन मरुतोंके रथ धूलि-शून्य और सुवर्णालङ्कारवाले हैं। वे ही मरुत् धन और बलके साथ प्रादुर्भूत होते हैं।

३ सेचनकारी रुद्रके जो मरुद्गण पुत्र हैं और जिनको धारण-कर्त्ता अन्तरीक्ष धारण करनेमें समर्थ है, उन्हीं महान् मरुतोंकी माता (पृश्नि) महती है। वह माता मनुष्य उत्पत्तिके लिये गर्भ या जल धारण करती है।

४ जो स्तोताओंके पास यानपर नहीं जाते; परन्तु उनके अन्तःकरणमें रहकर पापोंको विनष्ट करते हैं, जो दीप्तिमान् हैं, जो स्तोताओंकी अभिलाषाके अनुसार जल दूह लेते हैं, जो दीप्तियुक्त होकर अपनेको प्रकाशित करते हैं और भूमिको सींचते हैं।

५ जिनको उद्देश करके इस समय समीपवर्ती स्तोता मरुत्सञ्ज्ञक शब्दका उच्चारण करते हुए शीघ्र मनोरथ प्राप्त करते हैं, जो आहरण-कर्त्ता, गमनशील और महत्त्वयुक्त हैं, उन्हीं उग्र मरुतोंको इस समय दानकर्त्ता यजमान क्रोध-शून्य करता है।

६ वे उग्र और बलशाली हैं। वे घर्षण करनेवाली सेनाको सुरूपिणी द्यावा-पृथिवीके सहित योजित करते हैं। इनकी रोदसी (माध्यमिकी वाक्) स्वदीप्तिसे संयुक्त है। इन बलवान् मरुतोंमें दीप्ति नहीं है।

अनेनो वो मरुतो यामो अस्त्वनश्वश्चिद्यमजत्यरथीः ।
अनवसो अनभीशू रजस्तूर्वि रोदसी पथ्या याति साधन् ॥७॥
नास्य वर्ता न तरुता न्वस्ति मरुतो यमवथ वाजसातौ ।
तोके वा गोषु तनये यमप्सु स व्रजं दर्ता पार्ये अध द्योः ॥८॥
प्र चित्रमर्कं गृणते तुराय मारुताय स्वतवसे भरध्वम् ।
ये सहांसि सहसा सहन्ते रेजते अग्ने पृथिवी मखेभ्यः ॥९॥
त्विषीमन्तो अध्वरस्येव दिद्युत्तृषुच्यवसो जुह्वो नाग्नेः ।
अर्चत्रयो धुनयो न वीरा भ्राजज्जन्मानो मरुतो अधृष्टाः ॥१०॥
तं वृधन्तं मारुतं भ्राजदृष्टिं रुद्रस्य सूनुं हवसा विवासे ।
दिवः शर्धाय शुचयो मनीषा गिरयो नाप उग्रा अस्पृध्रन् ॥११॥

६७ सूक्त

मित्र और वरुण देवता। भरद्वाज ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

विश्वेषां वः सतां ज्येष्ठतमा गीर्भिर्मित्रा वरुणा वावृधध्यै ।
सं या रश्मेव यमतुर्यमिष्ठा द्वा जनाँ असमा बाहुभिः स्वैः ॥१॥

---

७ मरुतो, तुम्हारा रथ पाप-रहित हो। सारथि न होकर भी स्तोता जिसे चलाता है, वही रथ अश्व-रहित होकर भी, भोजन-शून्य और पाशरहित होकर भी, जल-प्रेरक और अभीष्टप्रद होकर द्यावापृथिवी और अन्तरीक्षमें गमन करता है।

८ मरुतो, तुम लोग संग्राममें जिसकी रक्षा करते हो, उसका कोई प्रेरक नहीं होता और न उसकी कोई हिंसा ही होती है। तुम पुत्र, पौत्र, गौ और जलके संचरणमें जिसकी रक्षा करते हो, वह संग्राममें शत्रुओंके गो समूहको विदीर्ण करता है।

९ अग्नि, जो बल द्वारा शत्रुओंका बल दबा देते हैं, जिन महान् मरुतोंसे पृथिवी काँपती है, उन्हीं शब्दकर्त्ता शीघ्र बलवान् मरुतोंको दर्शनीय अन्न दो।

१० मरुद्गण यज्ञकी तरह प्रकाशमान हैं। जो शीघ्रगामी अग्नि-शिखाकी तरह दीप्तिमान और पूजनीय हैं, वे शत्रुओंके प्रकम्पक व्यक्तियोंकी तरह वीर, दीप्त शरीरसे युक्त और अनभिभूत हैं।

११ मैं उन्हीं वर्द्धमान और दीप्तिमान्, खड्गसे युक्त रुद्रपुत्र मरुतोंकी स्तोत्र द्वारा परिचर्या करता हूँ। स्तोताकी निर्मल स्तुतियाँ उग्र होकर मेघकी तरह मरुतोंके बलकी बराबरी करती हैं।

१ सारे विश्वमें श्रेष्ठ मित्र और वरुण, तुम्हें मैं स्तुति द्वारा वर्द्धित करता हूँ। तुम दोनों विषम और यन्तृ-श्रेष्ठ हो। रज्जुकी तरह अपनी भुजाओं द्वारा तुम मनुष्योंको संयत करते हो।

इयं मद्वां प्रस्तृणीते मनीषोप प्रिया नमसा बर्हिरच्छ।
यन्तं नो मित्रावरुणावधृष्टं छर्दिर्यद्वां वरूथ्यं सुदानू ॥२॥
आ यातं मित्रावरुणा सुशस्त्युप प्रिया नमसा हूयमाना।
सं यावप्नःस्थो अपसेव जनाञ्छ्रुधीयतश्चिद्यतथो महित्वा ॥३॥
अश्वा न या वाजिना पूतबन्धू ऋता यद्गर्भमदितिर्भरध्यै।
प्र या महि महान्ता जायमाना घोरा मर्ताय रिपवे नि दीधः ॥४॥
विश्वे यद्वां मंहना मन्दमानाः क्षत्रं देवासो अदधुः सजोषाः।
परि यद्भूथो रोदसी चिदुर्वी सन्ति स्पशो अदब्धासो अमूराः ॥५॥
ता हि क्षत्रं धारयेथे अनु द्यून्दृंहेथे सानुमुपमादिव द्योः।
दृह्लो नक्षत्र उत विश्वदेवो भूमिमातान्द्यां धासिनायोः ॥६॥
ता विग्रं धैथे जठरं पृणध्या आ यत्सद्म सभृतयः पृणन्ति।
न मृष्यन्ते युवतयोऽवाता वि यत्पयो विश्वजिन्वा भरन्ते ॥७॥

---

२ प्रिय मित्र और वरुण, हमारी यही स्तुति तुम्हें प्रच्छादित करती है। हव्यके साथ तुम्हारे पास यही स्तुति जाती है और तुम्हारे यज्ञकी ओर जाती है। हे सुन्दर दानवाले मित्र और वरुण, हमें शीत आदिका निवारक और अनभिभूत गृह दो।

३ प्रिय मित्र और वरुण, अन्न और स्तोत्र द्वारा आहूत होकर आओ। जैसे कर्म-नियुक्त कर्म द्वारा अन्नार्थी व्यक्तियोंको संयत करता है, वैसे ही तुम भी अपनी महिमा द्वारा करो।

४ जो अश्वकी तरह बली, पवित्र स्तोत्रसे युक्त और सत्यरूप हैं, उन्हीं गर्भभूत मित्र और वरुणको अदितिने धारण किया था। जन्म लेनेके साथ ही जो महान्से भी महान् और हिंसक मनुष्यके घातक हुए, उन्हें अदितिने धारण किया था।

५ परस्पर प्रीतियुक्त होकर समस्त देवोंने, तुम्हारी महिमाका कीर्त्तन करते हुए, बल धारण किया है। तुम लोग विस्तीर्ण द्यावापृथिवीको परिभूत करते हो। तुम्हारी रश्मि अहिंसित और अगूढ़ हैं।

६ तुम प्रतिदिन बल धारण करते हो। अन्तरीक्षके उन्नत प्रदेश (मेघ अथवा सूर्य) को खूँटेकी तरह दृढ़ रूपसे धारण करो। तुम्हारे द्वारा दृढ़ीकृत मेघ अन्तरीक्षमें व्याप्त होता है और विश्वदेव (सूर्य) मनुष्यके हव्यसे तृप्त होकर भूमि और द्युलोकमें व्याप्त होते हैं।

७ सोम द्वारा उदर पूर्ण करनेके लिये तुम लोग प्राज्ञ व्यक्तिको धारण करते हो। हे विश्वजिन्वा मित्र और वरुण, जिस समय ऋत्विक् लोग यज्ञ-गृह पूर्ण करते हैं और तुम जल भेजते हो, उस समय युवतियाँ (नदियाँ अथवा दिशाएँ) धूलिसे नहीं भरतीं; परञ्च अशुष्क और अवात होकर विभूति धारण करती हैं।

ता जिह्वाया सदमेदं सुमेधा आ यद्वां सत्यो अरतिर्ऋते भूत्।
तद्वां महित्वं घृतान्नावस्तु युवं दाशुषे वि चयिष्टमंहः ॥८॥
प्र यद्वां मित्रावरुणा स्पूर्धन्प्रिया धाम युवधिता मिनन्ति।
न ये देवास ओहसा न मर्ता अयज्ञसाचो अप्यो न पुत्राः ॥९॥
वि यद्वाचं कीस्तासो भरन्ते शंसन्ति के चिन्निविदो मनानाः।
आद्वां ब्रवाम सत्यान्युक्था नकिर्देवेभिर्यतथो महित्वा ॥१०॥
अवोरित्था वां छर्दिषो अभिष्टौ युवोर्मित्रावरुणावस्कृधोयु।
अनु यद्गावः स्फुरानृजिप्यं धृष्णुं यद्रणे वृषणं युनजन् ॥११॥



६८ सूक्त

इन्द्र और वरुण देवता। भरद्वाज ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

श्रुष्टी वां यज्ञ उद्यतः सजोषा मनुष्वद्वृक्तबर्हिषो यजध्यै।
आ य इन्द्रावरुणाविषे अद्य महे सुम्नाय मह आववर्तत् ॥१॥

८ मेधावी व्यक्ति तुमसे सदा वचन द्वारा इस जलकी याचना करता है। हे घृतान्नयुक्त मित्र और वरुण, जैसे तुम्हारा अभिगन्ता यज्ञमें माया-रहित होता है, वैसी ही तुम्हारी महिमा हो। हव्यदाताका पाप विनष्ट करो।

९ मित्र और वरुण, जो लोग स्पर्द्धा करके तुम्हारे द्वारा विहित और तुम्हारे प्रिय कर्ममें विघ्न करते हैं, जो देवता और मनुष्य स्तोत्र-रहित हैं, जो कर्मशील होकर भी यज्ञ सम्पन्न नहीं हैं और जो पुत्र-रूप नहीं हैं, उन्हें विनष्ट करो।

१० जिस समय मेधावी लोग स्तुतिका उच्चारण करते हैं, कोई-कोई स्तुति करते हुए सूक्त पाठ करते हैं, और जब हम तुम्हें लक्ष्यकर, सत्य मन्त्रोंका पाठ करते हैं, उस समय तुम लोग महिमान्वित होकर देवोंके साथ नहीं चला जाना।

११ रक्षक वरुण और मित्र, जिस समय स्तुतियाँ उच्चारित होती हैं और जब सरलगामी, धर्षक तथा अभीष्टवर्षी सोमको यज्ञमें संयुक्त किया जाता है, उस समय गृह-दानके लिये तुम्हारे आनेपर तुम्हारा दातव्य गृह अविच्छिन्न होता है, यह सत्य है।

---

१ महान् इन्द्र और वरुण, मनुकी तरह कुश-विस्तारक यजमानके अन्न और सुखके लिये जो यज्ञ आरम्भ होता है, आज, तुम लोगोंके लिये, वही क्षिप्र यज्ञ ऋत्विकों द्वारा प्रवृत्त किया गया है।

ता हि श्रेष्ठा देवताता तुजा शूराणां शविष्टा ता हि भूतम् ।
मघोनां मंहिष्ठा तुविशुष्म ऋतेन वृत्रतुरा सर्वसेना ॥२॥
ता गृणीहि नमस्येभिः शूषैः सुम्नेभिरिन्द्रावरुणा चकाना ।
वज्रेणान्यः शवसा हन्ति वृत्रं सिषक्त्यन्यो वृजनेषु विप्रः ॥३॥
ग्नाश्च यन्नरश्च वावृधन्त विश्वे देवासो नरां स्वगूर्ताः ।
प्रैभ्य इन्द्रावरुणा महित्वा द्यौश्च पृथिवि भूतमुर्वी ॥४॥
स इत्सुदानुः स्ववाँ ऋतावेन्द्रा यो वां वरुण दाशति त्मन् ।
इषा स द्विषस्तरेद्दास्वान्वंसद्रयिं रयिवतश्च जनान् ॥५॥
यं युवं दाश्वध्वराय देवा रयिं धत्थो वसुमन्तं पुरुक्षुम् ।
अस्मे स इन्द्रावरुणावपि ष्यात् प्र यो भनक्ति वनुषामशस्तीः ॥६॥
उत नः सुत्रात्रो देवगोपाः सूरिभ्य इन्द्रावरुणा रयिः ष्यात् ।
येषां शुष्मः पृतनासु साह्वान्प्र सद्यो द्युम्ना तिरते ततुरिः ॥७॥

२ तुम श्रेष्ठ हो, यज्ञमें धन देनेवाले हो और वीरोंमें अतीव बलवान् हो। दाताओंमें श्रेष्ठ दाता तथा बहु-बलशाली सत्यके द्वारा शत्रुओंके हिंसक और सब प्रकारकी सेनाओंवाले हो।

३ स्तुति, बल और सुखके द्वारा स्तुत इन्द्र और वरुणकी स्तुति करो। उनमेंसे एक (इन्द्र) वृत्रका बध करते है, दूसरे प्रजा-युक्त (वरुण) उपद्रवोंसे रक्षा करनेके लिये बलशाली होते हैं।

४ इन्द्र और वरुण, मनुष्योंमें पुरुष और स्त्री एवम् समस्त देवगण स्वतः उद्यत होकर जब तुम्हें स्तुति द्वारा वर्द्धित करते हैं, तब महिमान्वित होकर तुम लोग उनके प्रभु बनो। विस्तीर्ण द्यावापृथिवी, तुम इनके प्रभु बनो।

५ इन्द्र और वरुण, जो यजमान तुम्हें स्वयं हवि देता है, वह सुन्दर दानवाला धनवान् और यज्ञशाली होता है। वही दाता, जय-प्राप्त अन्नके साथ, शत्रुके हाथसे उद्धार पाता तथा धन और सम्पत्तिशाली पुत्र प्राप्त करता है।

६ देव, इन्द्र और वरुण, तुम हव्यदाताको धनानुगामी और बहु-अन्नशाली जो धन देते हो और जो शत्रु-कृत अयशको दूर करता है, वही धन हमें मिले।

७ इन्द्र और वरुण, हम तुम्हारे स्तोता हैं। जो धन सुरक्षित है और जिसके रक्षक देवगण हैं, वही धन हम स्तोताको हो। हमारा बल संग्राममें शत्रुओंको दबानेवाला और हिंसक होकर तुरत उनके यशको तिरस्कृत करे।

नू न इन्द्रावरुणा गृणाना पृङ्क्तं रयिं सौश्रवसाय देवा ।
इत्था गृणन्तो महिनस्य शर्धोऽपो न नावा दुरिता तरेम ॥८॥
प्र सम्राजे बृहते मन्म नु प्रियमर्च देवाय वरुणाय सप्रथः ।
अयं य उर्वी महिना महिव्रतः क्रत्वा विभात्यजरो न शोचिषा ॥९॥
इन्द्रावरुणा सुतपाविमं सुतं सोमं पिबतं मद्यं धृतव्रता ।
युवो रथो अध्वरं देववीतये प्रति स्वसरमुप याति पीतये ॥१०॥
इन्द्रावरुणा मधुमत्तमस्य वृष्णः सोमस्य वृषणा वृषेथाम् ।
इदं वामन्धः परिषिक्तमस्मे आसद्यास्मिन्बर्हिषि मादयेथाम् ॥११॥

६९ सूक्त

इन्द्र और विष्णु देवता । भरद्वाज ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

सं वां कर्मणा समिषा हिनोमीन्द्राविष्णू अपसस्पारे अस्य ।
जुषेथां यज्ञं द्रविणं च धत्तमरिष्टैर्नः पथिभिः पारयन्ता ॥१॥

८ इन्द्र और वरुण, तुम लोग स्तुत होकर सुअन्नके लिये हमें शीघ्र धन दो। देवो, तुम लोग महान् हो। हम इस प्रकार तुम्हारे बलकी स्तुति करते हैं। हम नौका द्वारा जलकी तरह पापोंको पार कर सकें।

९ जो वरुण महिमान्वित, महाकर्मा, प्रज्ञा-युक्त, तेजःसम्पन्न और अजर हैं, जो विस्तीर्ण द्यावापृथिवीको विभासित करते हैं, उन्हीं सम्राट् और विराट् वरुणको लक्ष्य कर आज मनोहर और सब प्रकारसे विशालस्तोत्र पढ़ो ।

१० इन्द्र और वरुण, तुम सोमका पान करनेवाले हो; इसलिये इस मादक और अभिषुत सोमका पान करो। हे धृत-व्रत मित्र और वरुण, देवोंके पानके लिये तुम्हारा रथयज्ञकी ओर आता है।

११ हे काम-वर्षी इन्द्र और वरुण, तुम अतीव मधुर और मनोरथ-वर्षक सोमका पान करो। तुम्हारे लिये हमने इस सोम-रूप अन्नको ढाला है; इसलिये इसमें बैठकर इस यज्ञमें सोमपानसे मत्त होओ।



१ इन्द्र और विष्णु, तुम्हें लक्ष्य कर स्तोत्र और हवि मैं प्रेरित करता हूँ। इस कर्मके समाप्त होनेपर तुम लोग यज्ञकी सेवा करो। उपद्रव-शून्य मार्ग द्वारा हमें पार करते हो। तुम हमें धन दो ।

या विश्वासां जनितारा मतीनामिन्द्राविष्णू कलशा सोमधाना ।
प्र वां गिरः शस्यमाना अवन्तु प्र स्तोमासो गीयमानासो अर्कैः ॥२॥
इन्द्राविष्णू मदपती मदानामा सोमं यातं द्रविणो दधाना ।
सं वामञ्जन्त्वक्तुभिर्मतीनां सं स्तोमासः शस्यमानास उक्थैः ॥३॥
आ वामश्वासो अभिमातिषाह इन्द्राविष्णू सधमादो वहन्तु ।
जुषेथां विश्वा हवना मतीनामुप ब्रह्माणि शृणुतं गिरो मे ॥४॥
इन्द्राविष्णू तत्पनयाय्यं वां सोमस्य मद उरु चक्रमाथे ।
अकृणुतमन्तरिक्षं वरीयोऽप्रथतं जीवसे नो रजांसि ॥५॥
इन्द्राविष्णू हविषा वावृधानाग्राद्वाना नमसा रातहव्या ।
घृतासुती द्रविणं धत्तमस्मे समुद्रः स्थः कलशः सोमधानः ॥६॥
इन्द्राविष्णू पिबतं मध्वो अस्य सोमस्य दस्रा जठरं पृणेथाम् ।
आ वामन्धांसि मदिराण्यग्मन्नुप ब्रह्माणि शृणुतं हवं मे ॥७॥

२ इन्द्र और विष्णु, तुम स्तुतियोंके जनक हो। तुम कलश-स्वरूप और सोमके निधान-भूत हो कहे जानेवाले स्तोत्र तुम्हें प्राप्त हों। स्तोताओं द्वारा गीयमान स्तोत्र तुम्हें प्राप्त हों।

३ इन्द्र और विष्णु, तुम सोमोंके अधिपति हो। धन देते हुए तुम सोमके अभिमुख आओ। स्तोताओंके स्तोत्र, उक्थोंके साथ, तुम्हें तेज द्वारा वर्द्धित करें।

४ इन्द्र और विष्णु, हिंसाकारियोंको हरानेवाले और एकत्र मत्त अश्वगण तुम्हें वहन करें स्तोताओंके सारे स्तोत्रोंका तुम सेवन करो। मेरे स्तोत्रों और वचनोंको भी सुनो।

५ इन्द्र और विष्णु, सोमका मद या हर्ष उत्पन्न होनेपर तुम लोग विस्तृत रूपसे परिक्रमा करते हो। तुमने अन्तरीक्षको विस्तृत किया है। तुमने लोकोंको हमारे जीनेके लिये प्रसिद्ध किया है। तुम्हारे ये सब कर्म प्रशंसाके योग्य है।

६ घृत और अन्नसे युक्त इन्द्र और विष्णु, तुम सोमसे बढ़ते हो और सोमके अग्र भागका भक्षण करते हो। नमस्कारके साथ यजमान लोग तुम्हें हव्य देते हैं। तुम हमें धन दो। तुम लोग समुद्रकी तरह हो। तुम सोमकी खान और कलशके रूप हो।

७ दर्शनीय इन्द्र और विष्णु, तुम इस मदकारी सोमको पियो और उदर भरो। तुम्हारे पास मद-कर सोम-रूप अन्न जाय। मेरा स्तोत्र और आह्वान सुनो।

उभा जिग्यथुर्न परजयेथे न पराजिग्ये कतरश्चनैनोः ।
इन्द्रश्च विष्णा यदपस्पृधेथां त्रेधा सहस्रं वि तदैरयेथाम् ॥८॥

७० सूक्त

द्यावापृथिवी देवता । भरद्वाज ऋषि । जगती छन्द ।

घृतवती भुवनानामभिश्रियोर्वी पृथ्वी मधुदुघे सुपेशसा ।
द्यावापृथिवी वरुणस्य धर्मणा विष्कभिते अजरे भूरिरेतसा ॥१॥
असश्चन्ती भूरिधारे पयस्वती घृतं दुहाते सुकृते शुचिव्रते ।
राजन्ती अस्य भुवनस्य रोदसी अस्मे रेतः सिञ्चतं यन्मनुर्हितम् ॥२॥
यो वामृजवे क्रमणाय रोदसी मर्तो ददाश धिषणे स साधति ।
प्र प्रजाभिर्जायते धर्मणस्परि युवोः सिक्ता विषुरूपाणि सव्रता ॥३॥
घृतेन द्यावापृथिवी अभीवृते घृतश्रिया घृतपृचा घृतावृधा ।
उर्वी पृथ्वी होतृवूर्ये पुरोहिते ते इद्विप्रा ईळते सुम्नमिष्टये ॥४॥

८ इन्द्र और विष्णु, तुम विजयी हो; कभी पराजित नहीं होते। तुम दोनोंमेंसे कोई भी पराजित होनेवाला नहीं है। तुमने जिस वस्तुके लिये असुरोंके साथ स्पर्द्धा की है, वह यद्यपि त्रिधा (लोक, वेद और वचनके रूपमें) स्थित और असङ्ख्य है, तथापि तुमने अपने विक्रमसे उसे प्राप्त किया है।

---

१ हे द्यावापृथिवी, तुम जलवती, भूतोंके आश्रय-स्थल, विस्तीर्णा, प्रसिद्धा, जलदोहन-कर्त्री, सुरूपा, वरुणके धारण द्वारा पृथक् रूपसे धारिता, नित्या और बहुकर्मा हो।

२ असङ्गता, बहुधारावती, जलवती और शुचिकर्मा द्यावापृथिवी, सुकृती व्यक्तिको तुम, जल देती हो। हे द्यावापृथिवी, तुम भुवनकी राज्ञी हो। तुम मनुष्योंका हितैषी वीर्य हमें दान दो।

३ सर्व-निवासभूता द्यावापृथिवी, जो मनुष्य तुम्हें, सरल गमनके लिये, यह देता है, वह सिद्ध-मनोरथ होता और अपत्योंके साथ बढ़ता है। कर्मोंके ऊपर तुम्हारे द्वारा सिक्तरेत नाना रूप है और वह समानकर्मा उत्पन्न होता है।

४ द्यावापृथिवी जल द्वारा ढकी हुई हैं और और जलका आश्रय करती हैं। वह जलसे ओत प्रोत हैं, जलवर्षा विधायिनी और विस्तृता हैं, प्रसिद्धा और यज्ञमें पुरस्कृता हैं। यज्ञके लिये विद्वान् उनसे सुखकी याचना करता है।

मधु नो द्यावापृथिवी मिमिक्षतां मधुश्चुता मधुदुघे मधुव्रते ।
दधाने यज्ञं द्रविणं च देवता महि श्रवो वाजमस्मे सुवीर्यम् ॥५॥
ऊर्जं नो द्यौश्च पृथिवी च पिन्वतां पिता माता विश्वविदा सुदंससा ।
संरराणे रोदसी विश्वशम्भुवा सनिं वाजं रयिमस्मे समिन्वताम् ॥६॥

७१ सूक्त

सविता देवता भरद्वाज ऋषि जगती और त्रिष्टुप् छन्द ।

उदु ष्य देवः सविता हिरण्यया बाहू अयंस्त सवनाय सुक्रतुः ।
घृतेन पाणी अभिप्रुष्णुते मखो युवा सुदक्षो रजसो विधर्मणि ॥१॥
देवस्य वयं सवितुः सवीमनि श्रेष्ठे स्याम वसुनश्च दावने ।
यो विश्वस्य द्विपदो यश्चतुष्पदो निवेशने प्रसवे चासि भूमनः ॥२॥
अदब्धेभिः सवितः पायुभिष्ट्वं शिवेभिरद्य परि पाहि नो गयम् ।
हिरण्यजिह्वः सुविताय नव्यसे रक्षा माकिर्नो अघशंस ईशत ॥३॥
उदु ष्य देवः सविता दमूना हिरण्यपाणिः प्रतिदोषमस्थात् ।
अयोहनुर्यजतो मन्द्रजिह्व आ दाशुषे सुवति भूरि वामम् ॥४॥

---

५ जलका क्षरण करनेवाली, जल दुहने वाली, उदककर्मा देवी तथा हमें यज्ञ, धन, महान् यश, अन्न और वीर्य देनेवाली द्यावापृथिवी हमें मधुसे सींचे ।

६ पिता द्युलोक और माता पृथिवी, हमें अन्न दो । संसारको जानने वाली, सुकर्मा परस्पर रममाण और सबको सुख देनेवाली द्यावापृथिवी हमें पुत्रादि, बल और धन दें।



१ वही सुकृती सविता देवता दानके लिये हिरण्मय बाहुओंको ऊपर उठाते हैं । विशाल, तरुण और विद्वान् सविता, संसारकी रक्षाके लिये दोनों जलमय बाहुओंको प्रेरित करते हैं ।

२ हम उन्हीं सविताके प्रसव कर्म और प्रशस्त धनदानके विषयमें समर्थ हों । सविता, तुम सारे द्विपदों और चतुष्पदोंकी स्थिति और प्रसव (उत्पत्ति) में समर्थ हो ।

३ सविता, तुम आज अहिंसित और सुखावह तेजके द्वारा हमारे घरोंकी रक्षा करो । तुम हिरण्य-वाक् हो । नया सुख दो और हमारी रक्षा करो हमारा अहित करनेवाला व्यक्ति प्रभुत्वान करने पावे ।

४ शान्तमना, हिरण्य-हस्त, हिरण्मय हनु (जबड़ा) वाले, यज्ञके योग्य और मनोहर वचनवाले वही सविता देव रात्रिके अन्तमें उठें । वह हव्य-दाताके लिये, यथेष्ट अन्न प्रेरित करें ।

उदू अयां उपवक्तेव बाहू हिरण्यया सविता सुप्रतीका ।
दिवो रोहांस्यरुहत् पृथिव्या अरीरमत् पतयत् कच्चिदभ्वम् ॥५॥
वाममद्य सवितर्वाममु श्वो दिवेदिवे वाममस्मभ्यं सावीः ।
वामस्य हि क्षयस्य देव भूरेरया धिया वामभाजः स्याम ॥६॥



७२ सूक्त

इन्द्र और सोम देवता । भरद्वाज ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

इन्द्रासोमा महो तद्वां महित्वं युवं महानि प्रथमानि चक्रथुः ।
युवं सूर्यं विविदथुर्युवं स्वर्विश्वा तमांस्यहतं निदश्च ॥१॥
इन्द्रासोमा वासयथ उषासमुत्सूर्यं नयथो ज्योतिषा सह ।
उप द्यां स्कम्भथुः स्कम्भनेनाप्रथतं पृथिवीं मातरं वि ॥२॥
इन्द्रासोमा वहिमपः परिष्ठां हथो वृत्रमनु वां द्यौरमन्यत ।
प्राणांस्यैरयतं नदोनामासमुद्राणि पप्रथुः पुरूणि ॥३॥

---

५ सविता, अधिवक्ताकी तरह, हिरण्मय और शोभनांश, दोनों बाहुओंको उठावें। वह पृथिवीसे द्युलोकके उन्नत प्रदेशमें चढ़ते हैं। गतिशील, जो कुछ महान् वस्तुएँ हैं, सबको वह प्रसन्न करते हैं।

६ सविता, आज हमें धन दो। कल हमें धन देना। प्रतिदिन हमें धन देना। हे देव, तुम निवास-भूत प्रचुर धनके दाता हो; इसलिये हम इसी स्तुतिके द्वारा धन प्राप्त करेंगे।



१ इन्द्र और सोम, तुम्हारी महिमा महान् है। तुमने महान् और मुख्य भूतोंको बनाया है। तुमने सूर्य और जलको प्राप्त किया है। तुमने सारे अन्धकारों और निन्दकोंका बध किया है।

२ इन्द्र और सोम, तुम उषाको प्रकाशित करो और सूर्यको ज्योतिके साथ ऊपर उठाओ तथा अन्तरीक्षके द्वारा द्युलोकको स्तम्भित करो। माता पृथिवीको प्रसिद्ध करो।

३ इन्द्र और सोम, जलको रोकनेवाले अहि (मारक) वृत्रका बध करो। द्युलोकने तुम्हें संवर्द्धित किया था। नदीके जलको प्रेरित करो। जल द्वारा समुद्रको पूर्ण करो।

इन्द्रासोमा पक्वमामास्वन्तर्नि गवामिद्दधथुर्वक्षणासु ।
जगृभथुरनपिनद्धमासु रुशच्चित्रासु जगतीष्वंतः ॥४॥
इन्द्रासोमा युवमङ्ग तरुत्रमपत्यसाचं श्रुत्यं रराथे ।
युवं शुष्मं नर्यं चर्षणिभ्यः सं विव्यथुः पृतनाषाहमुग्रा ॥५॥

७३ सूक्त

बृहस्पति देवता। भरद्वाज ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

यो अद्रिभित् प्रथमजा ऋतावा बृहस्पतिराङ्गिरसो हविष्मान् ।
द्विबर्हज्मा प्राघर्मसत् पिता न आ रोदसी वृषभो रोरवीति ॥१॥
जनाय चिद्य ईवत उ लोकं बृहस्पतिर्देवहूतौ चकार ।
घ्नन्वृत्राणि वि पुरो दर्दरीति जयञ्छत्रूँरमित्रान् पृत्सु साहन् ॥२॥
बृहस्पतिः समजयद्वसूनि महो व्रजान् गोमतो देव एषः ।
अपः सिषासन्त्स्वरप्रतीतो बृहस्पतिर्हन्त्यमित्रमर्कैः ॥३॥

४ इन्द्र और सोम, तुमने गायोंके लिये अपक्व अन्तर्देशमें पक्व दुग्ध रखा है । नाना वर्ण गौओंके बीच तुमने अबद्ध और शुक्ल वर्ण दुग्ध धारण किया है।

५ इन्द्र और सोम, तुम लोग तारक, सन्तान-युक्त और श्रवणयोग्य धन हमें शीघ्र दो। उग्र इन्द्र और सोम, मनुष्योंके लिये हितकर और शत्रुसेनाको हरानेवाले बलको तुम वर्द्धित करो।

१ जिन बृहस्पतिने पर्वतको तोड़ा था, जो सबसे प्रथम उत्पन्न हुए थे, जो सत्य ..., अङ्गिरा और यज्ञ-पात्र हैं, जो दोनों लोकोंमें भली भाँति जाते हैं, जो प्रदीप्त स्थानमें रहते हैं और जो हम लोगोंके पालक हैं, वही बृहस्पति, वर्षक होकर, द्यावापृथिवीमें गर्जन करते हैं।

२ जो बृहस्पति यज्ञमें स्तोताको स्थान देते हैं, वह वृत्रों या आवरक अन्धकारोंको विनष्ट करते, युद्धमें शत्रुओंको जीतते, द्वेषियोंको अभिभूत करते और असुर-पुरियोंको अच्छी तरह छिन्न-भिन्न करते हैं।

३ इन्हीं बृहस्पतिदेवने असुरोंका धन और गौओंके साथ गोचरोंको जीता था। अप्रतिगत होकर यज्ञ-कर्म द्वारा, भोग करनेकी इच्छा करके, बृहस्पति स्वर्गके शत्रुका, अर्चना-साधन मन्त्र द्वारा, वध करते हैं।

७४ सूक्त

सोम और रुद्र देवता। भरद्वाज ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

सोमारुद्रा धारयेथामसुर्यं प्रवामिष्टयोरमश्नुवन्तु ।
दमेदमे सप्त रत्ना दधाना शं नो भूतं द्विपदे शं चतुष्पदे ॥१॥
सोमारुद्रा वि बृहतं विषूचीममीवा या नो गयमाविवेश ।
आरे बाधेथां निर्ऋतिं पराचैरस्मे भद्रा सौश्रवसानि सन्तु ॥२॥
सोमारुद्रा युवमेतान्यस्मे विश्वातनूषु भेषजानि धत्तम् ।
अव स्यतं मुंचतं यन्नो अस्ति तनूषु बद्धं कृतमेनो अस्मत् ॥३॥
तिग्मायुधौ तिग्महेती सुशेवौ सोमारुद्राविह सुमृलतं नः ।
प्र नो मुञ्चतं वरुणस्य पाशाद्गोपायतं नः सुमनस्यमाना ॥४॥

१ सोम और रुद्र, तुम हमें असुर-सम्बन्धी बल दो। सारे यज्ञ तुम्हें प्रतिगृहमें अच्छी तरह व्याप्त करें। तुम सप्तरत्न धारण करते हो; इसलिये हमारे लिये तुम सुखकर होओ और द्विपदों और चतुष्पदोंके लिये भी कल्याणवाही बनो।

२ सोम और रुद्र, जो रोग हमारे घरमें पैठा है, उसी संक्रामक रोगको विदूरित करो। ऐसी बाधा दो, जिससे दरिद्रता पराङ्मुखी हो। हमारे पास सुखावह अन्न हो।

३ सोम और रुद्र, हमारे शरीरके लिये सब प्रसिद्ध औषध धारण करो। हमारे किया पाप, जो शरीरमें निबद्ध है, उसे शिथिल करो—हमसे हटा दो।

४ सोम और रुद्र, तुम्हारे पास दीप्त धनुष् और तीक्ष्ण शर है। तुम लोग सुन्द सुख देने हो। शोभन स्तोत्रकी अभिलाषा करते हुए हमें इस संसारमें खूब सुखी करो। तुम हमें वरुणके पाशसे छुड़ाओ और हमारी रक्षा करो।



७५ सूक्त

प्रथम मन्त्रके वर्म, द्वितीयके धनु, तृतीयकी ज्या, चतुर्थकी अर्त्नी, पञ्चमके इषुधि, षष्ठके पूर्वार्द्धके सारथि और उत्तरार्द्धकी रश्मि, सप्तमके अश्व, अष्टमके रथ, नवमके रथगोपगण दशमके स्तोता, पिता, सोम्य, द्यावा, पृथिवी और पूषा, एकादश और द्वादशके इषु, त्रयोदशके प्रतोद, चतुर्दशके हस्तघ्न, पञ्चदश और षोड़शके इषु, सप्तदशकी युद्धभूमि, ब्रह्मणस्पति और अदित, अष्टादशके कवच, सोम और वरुण तथा ऊनविंशके देवगण और ब्रह्म देवता हैं। भरद्वाज-पुत्र पायु ऋषि। अनुष्टुप्, पङ्क्ति और त्रिष्टुप् छन्द।

जीमूतस्येव भवति प्रतीकं यद्वर्मी याति समदामुपस्थे।
अनाविद्धया तन्वा जय त्वं स त्वा वर्मणो महिमा पिपर्तु ॥१॥
धन्वना गा धन्वनाजिं जयेम धन्वना तीव्राः समदो जयेम।
धनुः शत्रोरपकामं कृणोति धन्वना सर्वाः प्रदिशो जयेम ॥२॥
वक्ष्यन्तीवेदा गनीगन्ति कर्णं प्रियं सखायं परिषस्वजाना।
योषेव शिङ्क्ते वितताधि धन्वन् ज्या इयं समने पारयन्ती ॥३॥
ते आचरन्ती समनेव योषा मातेव पुत्रं बिभृतामुपस्थे।
अप शत्रून्विध्यतां संविदाने आर्त्नी इमे विष्फुरन्ती अमित्रान् ॥४॥

१ युद्ध छिड़ जानेपर यह राजा जिस समय लौहमय कवच पहन कर जाता है, उस समय मालूम पड़ता है कि, यह साक्षात् मेघ है। राजन्, अविद्ध शरीर रह कर जय प्राप्त करो। वर्म (कवच) की वह महिमा तुम्हारी रक्षा करे।

२ हम धनुषके द्वारा शत्रुओंकी गायोंको जीतेंगे, युद्ध जीतेंगे और मदोन्मत्त शत्रु-सेनाका बध करेंगे। शत्रुकी अभिलाषा धनुष् नष्ट करे। हम इस धनुषसे समस्त दिशाओंमें स्थित शत्रुओंको जीतेंगे।

३ धनुषकी यह ज्या, युद्ध-वेलामें युद्धसे पार ले जानेकी इच्छा करके मानो प्रिय वचन बोलनेके लिये ही धनुर्द्धारीके कानके पास आती है। जैसे स्त्री प्रिय पतिका आलिङ्गन करके बात करती है, वैसे ही यह ज्या भी बाणका आलिङ्गन करके ही शब्द करती है।

४ वे दोनों धनुषकी टयाँ, अन्यमनस्का स्त्रीकी तरह, आचरण करके शत्रुके ऊपर आक्रमण करते समय माताकी तरह पुत्र-तुल्य राजाकी रक्षा करें और अपने कार्यको भली भाँति जानकर जाते हुए इस राजाके द्वेषियोंका बध कर शत्रुओंको छेद डालें।

बह्वीनां पिता बहुरस्य पुत्रश्चिश्चा कृणोति समनावगत्य ।
इषुधिः संकाः पृतनाश्च सर्वाः पृष्ठे निनद्धो जयति प्रसूतः ॥५॥
रथे तिष्ठन्नयति वाजिनः पुरो यत्रयत्र कामयते सुषारथिः ।
अभीशूनां महिमानं पनायत मनः पश्चादनु यच्छन्ति रश्मयः ॥६॥
तीव्रान् घोषान् कृण्वते वृषपाणयोश्वा रथेभिः सह वाजयन्तः ।
अवक्रामन्तः प्रपदैरमित्रान् क्षिणन्ति शत्रूँरनपव्ययन्तः ॥७॥
रथवाहनं हविरस्य नाम यत्रायुधं निहितमस्य वर्म ।
तत्रा रथमुप शग्मं सदेम विश्वाहा वयं सुमनस्यमानाः ॥८॥
स्वादुषंसदः पितरो वयोधाः कृच्छ्रेश्रितः शक्तीवन्तो गभीराः ।
चित्रसेना इषुबला अमृध्राः सतोवीरा उरवो व्रातसाहाः ॥९॥
ब्राह्मणासः पितरः सोम्यासः शिवे नो द्यावापृथिवी अनेहसा ।
पूषा नः पातु दुरितादृतावृधो रक्षा माकिर्नो अघशंस ईशत ॥१०॥

---

५ यह तूणीर अनेक वाणोंका पिता है। कितने ही वाण इसके पुत्र हैं । वाण निकालनेके समय यह तूणीर "चिश्चा" शब्द करता है। यह योद्धाके पृष्ठ—देशमें निबद्ध रह कर युद्ध-कालमें वाणोंका प्रसव करता हुआ सारी सेनाको जीत डालता है।

६ सुन्दर सारथि रथमें अवस्थान करके आगेके घोड़ोंको, जहाँ इच्छा होती है, वहाँ, ले जाता है। रस्सियाँ अश्वोंके कण्ठ तक फैलकर और अश्वोंके पीछे फैलकर सारथिके मनके अनुकूल नियुक्त होती हैं। रस्सियोंकी महिमा बखानो ।

७ अश्व टापोंसे धूलि उड़ाते हुए और रथके साथ सवेग जाते हुए हिनहिनाते हैं तथ पलायन न करके हिंसक शत्रुओंको टापोंसे पीटते हैं।

८ जैसे हव्य अग्निको बढ़ाता है, वैसे ही इस राजाके रथ द्वारा ढोया जानेवाला धन इसे वर्द्धित करे । रथपर इस राजाके अस्त्र, कवच आदि रहते हैं। हम सदा प्रसन्न-चित्तसे उस सुखावह रथके पास जाते हैं।

९ रथके रक्षक शत्रुओंके सुस्वादु अन्नको नष्ट करके अपने पक्षके लोगोंको अन्न दान करते है। विपत्तिके समय इनका आश्रय लिया जाता है । ये शक्तिमान्, गम्भीर, विचित्र सेनासे युक्त, वाण-बल-सम्पन्न, अहिंसक, वीर, महान् और अनेक शत्रुओंको जीतनेमें समर्थ हैं ।

१० हे ब्राह्मणो, पितरो और यज्ञ-वर्द्धक सोम-सम्पादक, तुम हमारी रक्षा करो । पाप-शून्या द्यावापृथिवी हमारे लिये सुखकारी हों । पूषा हमें पापसे बचावें हमारा पापी शत्रु प्रभुत्व न करने पावे ।

सुपर्णं वस्ते मृगो अस्या दन्तो गोभिः सन्नद्धा पतति प्रसूता ।
यत्रा नरः संच विच द्रवन्ति तत्रास्मभ्यमिषवः शर्म यन्सन् ॥११॥
ऋजीते परि वृङ्ग्धि नोऽश्मा भवतु नस्तनूः ।
सोमो अधि ब्रवीतु नोऽदितिः शर्म यच्छतु ॥१२॥
आ जङ्घन्ति सान्वेषां जघनाँ उप जिघ्नते ।
अश्वाजनि प्रचेतसोऽश्वान्त्समत्सु चोदय ॥१३॥
अहिरिव भोगैः पर्येति बाहुं ज्याया हेतिं परिबाधमानः ।
हस्तघ्नो विश्वा वयुनानि विद्वान् पुमान्पुमांसं परि पातु विश्वतः ॥१४॥
आलाक्ता या रुरुशीर्ष्ण्यथो यस्या अयो मुखम् ।
इदं पर्जन्यरेतस इष्वै देव्यै बृहन्नमः ॥१५॥
अवसृष्टा परापत शरव्ये ब्रह्मसंशिते ।
गच्छामित्रान् प्र पद्यस्व मामीषां कं चनोच्छिषः ॥१६॥

११ वाण शोभन पंख धारण करता है । इसका दाँत मृग-शृङ्ग है। यह ज्या अथवा गोचर्म (ताँत) से अच्छी तरह बद्ध है। यह प्रेरित होकर पतित होता है । जहाँ नेता लोग एकत्र वा पृथक् रूपसे विचरण करते हैं, वहाँ वाण हमें शरण दे ।

१२ वाण, हमें परिवर्जित करो । हमारा शरीर पाषाणकी तरह हो । सोम हमारे पक्षपर बोले । अदिति सुख दें ।

१३ कशा (चाबुक), प्रकृष्ट ज्ञानी सारथि लोग तुम्हारे द्वारा अश्वोंके उरु और जघनमें मारते हैं। संग्राममें तुम अश्वोंको प्रेरित करो ।

१४ हस्तघ्न (ज्याके आघातसे हाथको बचानेके लिये बँधा हुआ चर्म) ज्याके आघातका निवारण करता हुआ सर्पकी तरह शरीरके द्वारा प्रकोष्ठ (जानुसे मणिबन्ध तक) को परिवेष्टित करता है, सारे ज्ञातव्य विषयोंको जानता है और पौरुषशाली होकर चारो ओरसे रक्षा करता है ।

१५ जो विषाक्त है, जिसका अग्र भाग हिंसक है और जिसका मुख लौहमय है, उसी पर्जन्यसे उत्पन्न विशाल वाण-देवताको नमस्कार ।

१६ मन्त्र द्वारा तेज किये गये और हिंसा-निपुण वाण, तुम छोड़े जाकर गिरो, जाओ और शत्रुओंको मिलो । किसी भी शत्रुको जीते जी नहीं छोड़ना ।

यत्र वाणाः सम्पतन्ति कुमारा विशिखा इव ।
तत्रा नो ब्रह्मणस्पतिरदितिः शर्म यच्छतु विश्वाहा शर्म यच्छतु ॥१७॥
मर्माणि ते वर्मणा छादयामि सोमस्त्वा राजामृतेनानु वस्ता ।
उरोर्वरीयो वरुणस्ते कृणोतु जयन्तं त्वानु देवा मदन्तु ॥१८॥
यो नः स्वो अरणो यश्च निष्ट्यो जिघांसति ।
देवास्तं सर्वे धूर्वन्तु ब्रह्म वर्म ममान्तरम् ॥१९॥

१७ मुण्डित कुमारोंकी तरह जिस युद्धमें वाण गिरते हैं, उसमें हमें ब्रह्मणस्पति सदा सुख दें, अदिति सुख दें।

१८ राजन्, तुम्हारे शरीरके मर्मस्थानोंको कवचसे आच्छादित कर रहा हूँ। सोम राजा तुम्हें अमृत द्वारा आच्छादित करें, वरुण तुम्हें श्रेष्ठसे भी श्रेष्ठ सुख दें। तुम्हारे विजयी होनेपर देवगण हर्ष मनावें।

१९ जो कुटुम्बी हमारे प्रति प्रसन्न नहीं और जो अलग रहकर हमारे बधकी इच्छा करता है, उसे सारे देवगण मारें। हमारे लिये तो मन्त्र ही वाण-निवारक कवच है।

षष्ठ मण्डल समाप्त



सप्तम मण्डल

१ अनुवाक। १ सूक्त। अग्नि देवता। वसिष्ठ ऋषि। विराट् और त्रिष्टुप् छन्द।

अग्निं नरो दीधितिभिररण्योर्हस्तच्युती जनयन्त प्रशस्तम्।
दूरेदृशं गृहपतिमथर्युम् ॥१॥
तमग्निमस्ते वसवो न्यृण्वन्त्सुप्रतिचक्षमवसे कुतश्चित्।
दक्षाय्यो यो दम आस नित्यः ॥२॥
प्रेद्धो अग्ने दीदिहि पुरो नोऽजस्रया सूर्म्या यविष्ठ।
त्वां शश्वन्त उप यन्ति वाजाः ॥३॥
प्र ते अग्नयोऽग्निभ्यो वरं निः सुवीरासः शोशुचन्त द्युमन्तः।
यत्रा नरः समासते सुजाताः ॥४॥
दा नो अग्ने धिया रयिं सुवीरं स्वपत्यं सहस्य प्रशस्तम्।
न यं यावा तरति यातुमावान् ॥५॥

---

१ नेता ऋत्विक् लोग प्रशस्त, दूरस्थित, गृहपति और गतिशील अग्निको दो काठोंसे हस्तगति और अङ्गुलियोंके द्वारा, उत्पन्न करते हैं।

२ जो अग्नि गृहमें नित्य पूजनीय थे, उन्हीं सुद्रश्य अग्निको, सब प्रकारके भयोंसे बचानेके लिये, वसिष्ठगणने गृहमें रखा था।

३ तरुणतम अग्नि, भली भाँति समृद्ध होकर, सतत ज्वालाके साथ, हमारे आगे प्रदीप्त होओ। तुम्हारे पास बहुत अन्न जाता है।

४ सुजन्मा नेता या ऋत्विक् लोग जिन अग्निके पास बैठते हैं, वह लौकिक अग्नियोंसे अधिक दीप्तिमान, कल्याणवाही, पुत्र-पौत्र-प्रद और विशेष रूपसे दीप्ति प्राप्त करनेवाले हैं।

५ अभिभवनिपुण अग्नि, हिंसक शत्रु जिसमें बाधा न दे सकें, ऐसी कल्याणकर, पुत्रपौत्रप्रद और सुन्दर सन्ततिसे युक्त धन, स्तोत्र सुनकर, हमें दो।

उप यमेति युवतिः सुदक्षं दोषा वस्तोर्हविष्मती घृताची ।
उप स्वैनमरमतिर्वसूयुः ॥६॥
विश्वा अग्नेऽप दहारातीर्येभिस्तपोभिरदहो जरूथम् ।
प्र निस्वरं चातयस्वामीवाम् ॥७॥
आ यस्ते अग्न इधते अनीकं वसिष्ठ शुक्र दीदिवः पावक ।
उतो न एभिः स्तवथैरिह स्याः ॥८॥
वि ये ते अग्ने भेजिरे अनीकं मर्ता नरः पित्र्यासः पुरुत्रा ।
उतो न एभिः सुमना इह स्याः ॥९॥
इमे नरो वृत्रहत्येषु शूरा विश्वा अदेवीरभि सन्तु मायाः ।
ये मे धियं पनयन्त प्रशस्ताम् ॥१०॥
मा शूने अग्ने नि षदाम नृणां माशेषसोऽवीरता परि त्वा ।
प्रजावतीषु दुर्यासु दुर्य ॥११॥
यमश्वी नित्यमुपयाति यज्ञं प्रजावन्तं स्वपत्यं क्षयं नः ।
स्वजन्मना शेषसा वावृधानम् ॥१२॥

६ हव्ययुक्ता युवती जुहू कुशल अग्निके पास दिन-रात आती है। स्वकीय दीप्ति धनाभिलाषी होकर उसके निकट आती है।

७ अग्नि, जिस तेजसे तुम कठोर-शब्द-कर्त्ता राक्षसको जलाते हो, उसी तेजके बलसे सारे शत्रुओंको जलाओ। उपताप दूर करके रोगको नष्ट करो।

८ हे श्रेष्ठ, शुभ्र, दीप्त और पावक अग्नि, जो तुम्हें समिद्ध करते हैं, उन्हींके समान हमारे इस स्तोत्रसे भी प्रसन्न होकर इस यज्ञमें ठहरो।

९ अग्नि, जो पितृ-हितैषी और (कर्म-नेता) मनुष्योंने तुम्हारे तेजको अनेक देशोंमें विभक्त किया है, उन्हींके समान हमारे इस स्तोत्रसे प्रसन्न होकर इस यज्ञमें ठहरो।

१० जो मनुष्य मेरे श्रेष्ठ कर्मकी स्तुति करते हैं, वही वीर नेता संग्रामोंमें सारी आसुरी मायाको दबा दें।

११ अग्नि, हम शून्य गृहमें नहीं रहेंगे; दूसरेके घरमें भी नहीं रहेंगे। गृहके हितैषी अग्निदेव, हम पुत्र-शून्य और वीर रहित हैं। तुम्हारी परिचर्या करते हुए हम प्रजासे सम्पन्न घरमें रहें।

१२ जिस यज्ञाश्रय गृहमें अश्ववाले अग्नि नित्य जाते हैं, हमें वही, नौकर आदिसे युक्त, सुन्दर सन्तानवाले तथा औरसजात पुत्रके द्वारा वर्द्धमान गृह दो।

पाहि नो अग्ने रक्षसो अजुष्टात् पाहि धूर्तेरररुषो अघायोः ।
त्वा युजा पृतनायूँरभिष्याम् ॥१३॥
सेदग्निरग्नींरत्यस्त्वन्यान्यत्र वाजी तनयो वीळुपाणिः ।
सहस्रपाथा अक्षरा समेति ॥१४॥
सेदग्निर्यो वनुष्यतो निपाति समेद्धारमंहस उरुष्यात् ।
सुजातासः परि चरन्ति वीराः ॥१५॥
अयं सो अग्निराहुतः पुरुत्रा यमीशानः समिदिन्धे हविष्मान् ।
परि यमेत्यध्वरेषु होता ॥१६॥
त्वे अग्न आहवनानि भूरीशानास आ जुहुयाम नित्या ।
उभा कृण्वन्तो वहतू मियेधे ॥१७॥
इमो अग्ने वीततमानि हव्याजस्रो वक्षि देवतातिमच्छ ।
प्रति न ईं सुरभीणि व्यन्तु ॥१८॥

१३ हमें अप्रीतिकर राक्षससे बचाओ। अदाता और पापी हिंसकसे बचाओ । हम तुम्हारी सहायतासे सेनाके अभिलाषी व्यक्तिको पराजित करेंगे।

१४ बलवान्, दृढ़हस्त, प्रभूत अन्नवाला हमारा पुत्र क्षय-रहित स्तोत्र द्वारा जिस अग्निकी सेव करता है, वही अग्नि दूसरेके अग्निको आविर्भूत करें ।

१५ जो यज्ञकर्त्ता प्रबोधकको हिंसा और पापसे बचाते हैं और जिनकी सेवा कुलीन वीरगण करते हैं, वही अग्नि हैं।

१६ जिन्हें समृद्ध और हविष्मान् व्यक्ति भली भाँति दीप्त करता है और यज्ञमें जिनकी परिक्रमा होता (देवोंको बुलानेवाला) करता है. वेही ये अग्नि अनेक देशोंमें बुलाये जाते हैं।

१७ अग्निदेव, धनपति होकर हम तुम्हें लक्ष्य करके नित्य स्तोत्र और उक्थ द्वारा यज्ञमें प्रभूत हव्य देंगे ।

१८ अग्नि, देवताओंके पास तुम सदा इस अतीव कमनीय हव्यको ले जाओ और गमन करो। प्रत्येक देवता हमारे इस शोभन हव्यकी इच्छा करता है ।

मा नो अग्नेऽवीरते परा दा दुर्वाससेऽमतये मा नो अस्यै ।
मा नः क्षुधे मा रक्षस ऋतावो मा नो दमे मा वन आ जुहूर्थाः ॥१६॥
नू मे ब्रह्माण्यग्न उच्छसाधि त्वं देव मघवद्भ्यः सुषूदः ।
रातौ स्यामोभयास आ ते यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥२०
त्वमग्ने सुहवा रण्वसन्दृक् सुदीती सूनो सहसो दिदीहि ।
मा त्वे सचा तनये नित्य आधङ्मा वीरो अस्मन्नर्यो वि दासीत् ॥२१॥
मा नो अग्ने दुर्भृतये सचैषु देवेद्धेष्वग्निषु प्र वोचः ।
मा ते अस्मान्दुर्मतयो भृमाच्चिद्देवस्य सूनो सहसो नशन्त ॥२२॥
स मर्तो अग्ने स्वनीक रेवानमर्त्ये य आजुहोति हव्यम् ।
स देवता वसुवनिं दधाति यं सूरिरर्थी पृच्छमान एति ॥२३॥

१६ अग्नि, हमें निःसन्तान नहीं करना । खराब कपड़े नहीं देना । हमें कुबुद्धि नहीं देना । हमें भूख नहीं देना । हमें राक्षसके हाथमें नहीं देना । हे सत्यवान् अग्नि, हमें न घरमें मारना, न वनमें ।

२० अग्नि, हमारा अन्न विशेष रूपसे शोधित करना । देव, याज्ञिकोंको अन्न देना । हम दोनों (स्तोता और यजमान) तुम्हारे दानमें रहें । तुम सदा हमें स्वस्ति द्वारा पालन करो ।

२१ अग्नि, तुम सुन्दर आह्वानवाले और रमणीय-दर्शन हो । शोभन दीप्तिके साथ प्रदीप्त होओ । सहायक बनो और औरस पुत्रको नहीं जलाओ । हमारा मनुष्योंका हितैषी पुत्र नष्ट न होने पावे ।

२२ अग्नि, तुम सहायक होओ; और, ऋत्विकों द्वारा समिद्ध अग्निगणको कहो कि, वे सुखके साथ हमारा भरण करें । बलके पुत्र अग्नि, तुम्हारी दुर्बुद्धि भ्रमसे भी हमें व्याप्त न करे ।

२३ सुतेजा और देवात्मा अग्नि, जो मनुष्य तुम्हें हव्य देता है, वही धनी होता है । जिसके पास धनाभिलाषी स्तोता जाननेकी इच्छासे जाता है, वही अग्निदेव यजमानकी रक्षा करते हैं ।

महो नो अग्ने सुवितस्य विद्वान्रयिं सूरिभ्य आ वहा बृहन्तम् ।
येन वयं सहसावन्मदेमाविक्षितास आयुषा सुवीराः ॥२४॥
नू मे ब्रह्माण्यग्न उच्छशाधि त्वं देव मघवद्भ्यः सुषूदः ।
रातौ स्यामोभयास आ ते यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥२५॥

२४ अग्नि, तुम हमारे महान् कल्याणवाले कार्यको जानते हो। बलके पुत्र, हम तुम्हारे स्तोता हैं। जिससे हम अक्षय, पुर्णायु और कल्याणकर पुत्र-पौत्र आदिसे सम्पन्न होकर प्रसन्न हो सकें, ऐसा महान् धन हमें दो।

२५ अग्निदेव, हमारे अन्नका भली भाँति शोधन करो। देव, तुम याज्ञिकोंको अन्न दो। हम दोनों (स्तोता और यजमान) तुम्हारे दानमें रहें। तुम हमें सदा कल्याण द्वारा पालन करो।



प्रथम अध्याय समाप्त

द्वितीय अध्याय

२ सूक्त

आप्री देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

जुषस्व नः समिधमग्ने अद्य शोचा बृहद्यजतं धूममृण्वन्।
उप स्पृश दिव्यं सानु स्तूपैः सं रश्मिभिस्ततनः सूर्यस्य ॥१॥
नराशंसस्य महिमानमेषामुप स्तोषाम यजतस्य यज्ञैः।
ये सुक्रतवः शुचयो धियन्धाः स्वदन्ति देवा उभयानि हव्या ॥२॥
ईळेन्यं वो असुरं सुदक्षमन्तर्दूतं रोदसी सत्यवाचम्।
मनुष्वदग्निं मनुना समिद्धं समध्वराय सदमिन्महेम ॥३॥

---

१ अग्नि आज हमारी समिधाको ग्रहण करो। यज्ञके योग्य धुआँ देते हुए अतीव दीप्त होओ। तब ज्वाला-मालासे अन्तरीक्षका तट-प्रदेश स्पर्श करो और सूर्यकी किरणोंके साथ मिलित होओ।

२ जो सुकर्मा शुचि और कर्मोंके धारक देवगण सोमिक और हविःसंस्थादि, दोनोंका भक्षण करते हैं, उनके बीच हम स्तोत्र द्वारा यजनीय और नर-प्रशस्य अग्निकी महिमाकी स्तुति करते हैं।

३ यजमानो, तुम स्तुतियोग्य, असुर (बली)*, सुदक्ष, द्यावापृथिवीके बीच दूत, सत्यवक्ता, मनुष्यकी तरह मनु द्वारा समिद्ध अग्निदेवकी सदा पूजा करो।

---

* पञ्चम अष्टकमें असुर शब्दका इस प्रकार आठ बार व्यवहार हुआ है—

७ मण्डल	२	सूक्त	३	ऋचा	असुर	शब्द	अग्निके सम्बन्धमें
"	६	"	१	"	"	"	वैश्वानरके "
"	१३	"	१	"	असुरघ्न	"	अग्निके "
"	३०	"	३	"	असुर	"	" के "
"	३६	"	२	"	"	"	मित्र और वरुणके "
"	५६	"	२४	"	"	"	वीरके "
"	६५	"	२	"	"	"	मित्र और वरुणके "
"	६६	"	५	"	"	"	वर्चो "

सपर्यवो भरमाणा अभिज्ञु प्र वृञ्जते नमसा बर्हिरग्नौ ।
आजुह्वाना घृतपृष्ठं पृषद्वदध्वर्यवो हविषा मर्जयध्वम् ॥४॥
स्वाध्यो वि दुरो देवयन्तोऽशिश्रयू रथयुर्देवताता ।
पूर्वी शिशुं न मातरा रिहाणे सम ग्रुवो न समनेष्वञ्जन् ॥५॥
उत योषणे दिव्ये मही न उषासानक्ता सुदुघेव धेनुः ।
बर्हिषदा पुरुहूते मघोनी आ यज्ञिये सुविताय श्रयेताम् ॥६॥
विप्रा यज्ञेषु मानुषेषु कारू मन्ये वां जातवेदसा यजध्यै ।
ऊर्ध्वं नो अध्वरं कृतं हवेषु ता देवेषु वनथो वार्याणि ॥७॥
आ भारती भारतीभिः सजोषा इला देवैर्मनुष्येभिरग्निः ।
सरस्वती सारस्वतेभिरर्वाक् तिस्रो देवीर्बर्हिरेदं सदन्तु ॥८॥
तन्नस्तुरीपमध पोषयित्नु देवत्वष्टर्वि रराणः स्यस्व ।
यतो वीरः कर्मण्यः सुदक्षो युक्तग्रावा जायते देवकामः ॥९॥

४ सेवाभिलाषी लोग घुटने टेककर पात्र पूर्ण करते हुए अग्निको हव्यके साथ बर्हि दान करते हैं। अध्वर्यु ओ, घृत पृष्ठ और स्थूल बिन्दुसे युक्त बर्हि हवन करते हुए उसे प्रदान करो।

५ सुकर्मा, देवाभिलाषी और रथेच्छुक लोगोंने यज्ञमें द्वारका आश्रय किया है। जैसे गायें बछड़ोंको चाटती हैं, वैसे ही चाटनेवाले और पूर्वाभिलाषी (जुहू और उपभृति) को अध्वर्युगण नदीकी तरह यज्ञमें सिक्त करते हैं।

६ युवती, दिव्या, महती, कुशोंपर बैठी हुई, बहु-स्तुता, धनवती और यज्ञार्हा अहोरात्रि, कामदुघा धेनुकी तरह, कल्याणके लिये, हमें आश्रय करें।

७ हे विप्र और जातधन तथा मनुष्योंके यज्ञमें कर्मकर्त्ता, यज्ञ करनेके लिये मैं तुम्हारी स्तुति करता हूँ। स्तुति हो जानेपर हमारे अकुटिल यज्ञको देवाभिमुख करो। देवोंके बीच विद्यमान वरणीय धनका विभाग कर दो।

८ भारतीगण (सूर्य-सम्बन्धियों)के साथ भारती (अग्नि) आवें। देवों और मनुष्योंके साथ इला (अग्नि) भी आवें। सारस्वतों (अन्तरीक्षस्थ वचनों) के साथ सरस्वती आवें। ये तीनों देवियाँ आकर इन कुशोंपर बैठें।

९ अग्निरूप त्वष्टा देव, जिससे वीर, कर्मकुशल, बलशाली, सोमाभिषवके लिये प्रस्तर-हस्त और देवाभिलाषी पुत्र उत्पन्न हो सके, तुम सन्तुष्ट होकर हमें वैसा ही रक्षा-कुशल और पुष्टिकारी वीर्य प्रदान करो।

वनस्पतेऽव सृजोप देवानग्निर्हविः शमिता सूदयाति ।
सेदु होता सत्यतरो यजाति यथा देवानां जनिमानि वेद ॥१०॥
आ याह्यग्ने समिधानो अर्वाङिन्द्रेण देवैः सरथं तुरेभिः ।
बर्हिर्न आस्तामदितिः सुपुत्राः स्वाहा देवा अमृता मादयन्ताम् ॥११॥



३ सूक्त

अग्नि देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

अग्निं वो देवमग्निभिः सजोषा यजिष्ठं दूतमध्वरे कृणुध्वम् ।
यो मर्त्येषु निध्रुविर्ऋतावा तपुर्मूर्धा घृतान्नः पावकः ॥१॥
प्रोथदश्वो न यवसेऽविष्यन्यदा महः संवरणाद्व्यस्थात् ।
आदस्य वातो अनु वाति शोचिरध स्म ते व्रजनं कृष्णमस्ति ॥२॥

---

१० अग्निरूप वनस्पति, देवोंको पास ले आओ । पशुके संस्कारक अग्नि वनस्पति देवोंके लिये हव्य दें । वे ही यज्ञ-रूप देवता लोगोंको बुलानेवाले अग्नि यज्ञ करें; क्योंकि वे ही देवोंका जन्म जानते हैं ।

११ अग्नि, तुम दीप्ति-शाली होकर इन्द्र और शीघ्रताकारी देवोंके साथ एक रथपर हमारे सामने आओ । सुपुत्र-युक्ता अदिति हमारे कुशपर बैठें । नित्य देवगण अग्निरूप स्वाहाकारवाले होकर तृप्ति प्राप्त करें ।



१ देवो, जो अग्नि मनुष्योंमें स्थिर भावसे रहते हैं, जो यज्ञवान्, तापक, तेजः—शाली, घृतान्न-सम्पन्न और शोधक हैं, जो याज्ञिकोंमें श्रेष्ठ है और अन्य अग्नि-समूहके साथ मिलित होते हैं, उन्हीं अग्निदेवको यज्ञमें तुम दूत बनाओ ।

२ जिस समय अश्वकी तरह घासका भक्षण और शब्द करते हुए महान् निरोधके साथ वृक्षोंमें दारु-रूप अग्नि अवस्थित रहते हैं, उस समय उनकी दीप्ति प्रवाहित होती है । इसके अनन्तर, अग्निदेव, तुम्हारा मार्ग काला (धुआँवाला) हो जाता है ।

उद्यस्य ते नवजातस्य वृष्णोग्ने चरन्त्यजरा इधानाः ।
अच्छा द्यामरुषो धूम एति सं दूतो अग्न ईयसे हि देवान् ॥३॥
वि यस्य ते पृथिव्यां पाजो अश्रेत्तृषु यदन्ना समवृक्त जम्भैः ।
सेनेव सृष्टा प्रसितिष्ट एति यवं नदस्म जुह्वा विवेक्षि ॥४॥
तमिद्दोषा तमुषसि यविष्ठमग्निमत्यं न मर्जयन्त नरः ।
निशिशाना अतिथिमस्य योनौ दीदाय शोचिराहुतस्य वृष्णः ॥५॥
सुसन्दृक्ते स्वनीक प्रतीकं वि यद्रुक्मो न रोचस उपाके ।
दिवो न ते तन्यतुरेति शुष्मश्चित्रो न सूरः प्रति चक्षि भानुम् ॥६॥
यथा वः स्वाहाग्नये दाशेम परीळाभिर्घृतवद्भिश्च हव्यैः ।
तेभिर्नो अग्ने अमितैर्महोभिः शतं पूर्भिरायसीभिर्नि पाहि ॥७॥
या वा ते सन्ति दाशुषे अधृष्टा गिरो वा याभिर्नृवतीरुरुष्याः ।
ताभिर्नः सूनो सहसो नि पाहि स्मत्सूरीञ्जरितॄञ्जातवेदः ॥८॥

३ अग्नि, नवजात और वर्षक तुम्हारी जो अजर ज्वाला समिद्ध होकर ऊपर उठती है, उसका रोचक धूम द्युलोकमें जाता है। अग्निदेव, दूत होकर तुम देवोंको प्राप्त होते हो।

४ अग्नि, जिस समय तुम दाँतों (ज्वालाओं) से काष्ठादि अन्नोंका भक्षण करते हो, उस समय तुम्हारा तेज पृथिवीमें मिल जाता है। सेनाकी तरह विमुक्त होकर तुम्हारी ज्वाला जाती है। अग्निदेव, अपनी ज्वालासे जौकी तरह काष्ठ आदिका भक्षण करते हो।

५ तरुण अतिथिकी तरह पूज्य अग्निकी, उनके स्थानपर, रात और दिनमें, पूजा करते हुए मनुष्य सदागामी अश्वकी तरह अग्निकी सेवा करते हैं। आहुत और अभीष्टवर्षी अग्निकी शिखा प्रदीप्त होती है।

६ सुन्दर तेजवाले अग्नि, जिस समय तुम सूर्यकी तरह समीपमें दीप्ति पाते हो, उस समय तुम्हारा रूप दर्शनीय हो जाता है। अन्तरीक्षसे तुम्हारा तेज बिजलीकी तरह निकलता है। दर्शनीय सूर्यकी तरह ही तुम भी स्वयं अपना प्रकाश करते हो।

७ अग्नि, जैसे हमलोग गव्य और घृत-युक्त हव्यके द्वारा तुम्हें स्वाहा दान करते हैं, अग्नि, तुम भी वैसे ही, असीम तेजोबलके साथ, अपरिमित लौहमय अथवा सुवर्णमय पुरियों द्वारा, हमारी रक्षा करना।

८ बलके पुत्र और जातधन अग्नि, तुम दानशील हो, तुम्हारी जो शिखाएँ हैं और जिन वाक्यों द्वारा पुत्रवान् प्रजागणकी तुम रक्षा करते हो, इन दोनोंसे हमारी रक्षा करो। प्रशस्त और हव्य-दाता स्तोताओंकी रक्षा करो।

निर्यत्पूतेव स्वधितिः शुचिर्गात् स्वया कृपा तन्वा रोचमानः ।
आ यो मात्रोरुशेन्यो जनिष्ट देवयज्याय सुक्रतुः पावकः ॥९॥
एता नो अग्ने सौभगा दिदीह्यपि क्रतुं सुचेतसं वतेम ।
विश्वा स्तोतृभ्यो गृणते च सन्तु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥१०॥



४ सूक्त

अग्नि देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

प्र वः शुक्राय भानवे भरध्वं हव्यं मतिं चाग्नये सुपूतम् ।
यो दैव्यानि मानुषा जनूंष्यन्तर्विश्वानि विद्मना जिगाति ॥१॥
स गृत्सो अग्निस्तरुणश्चिदस्तु यतो यविष्ठो अजनिष्ट मातुः ।
सं यो वना युवते शुचिदन्भूरि चिदन्ना समिदत्ति सद्यः ॥२॥

९ जिस समय विशुद्ध अग्नि अपने शरीर द्वारा कृपा–परवश और रोचक होकर तीक्ष्ण फरसे-की तरह काष्ठसे निकलते हैं, उस समय वह यज्ञके योग्य होते हैं। सुन्दर, सुकृती और शोधक अग्नि मातृ-रूप दो काष्ठोंसे उत्पन्न हुए हैं।

१० अग्नि, हमें यही सुन्दर धन दो। हम याज्ञिक और विशुद्धान्तःकरण पुत्र प्राप्त कर सकें। सारा धन उद्गाताओं और स्तोताओंका हो। तुम सदा हमें कल्याण-कार्यके द्वारा पालन करो।



१ हविवालो, तुम शुभ्र और दीप्त अग्निको शुद्ध हव्य और स्तुति प्रदान करो। अग्नि देवों और मनुष्योंके समस्त पदार्थोंके बीच प्रज्ञा द्वारा गमन करते हैं।

२ दो काष्ठों (अरणि-द्वय)से, तरुणतम होकर, अग्नि उत्पन्न हुए हैं; इसलिये वही मेधावी अग्नि तरुण बनें। दीप्तशिख अग्नि वनोंको जलाते और क्षणमात्रमें ही यथेष्ट अन्नका भक्षण कर डालते हैं।

अस्य देवस्य संसद्यनीके यं मर्तासः श्वेतं जगृभ्रे ।
नि यो गृभं पौरुषेयीमुवोच दुरोकमग्निरायवे शुशोच ॥३॥
अयं कविरकविषु प्रचेता मर्तेष्वग्निरमृतो नि धायि ।
स मा नो अत्र जुहुरः सहस्वः सदा त्वे सुमनसः स्याम ॥४॥
आ यो योनिं देवकृतं ससाद क्रत्वा ह्य१ग्निरमृताँ अतारीत् ।
तमोषधीश्च वनिनश्च गर्भं भूमिश्च विश्वधायसं बिभर्ति ॥५॥
ईशे ह्य१ग्निरमृतस्य भूरेरीशे रायः सुवीर्यस्य दातोः ।
मा त्वा वयं सहसावन्नवीरा माप्सवः परिषदाम मादुवः ॥६॥
परिषद्यं ह्यरणस्य रेक्णो नित्यस्य रायः पतयः स्याम ।
न शेषो अग्ने अन्यजातमस्त्यचेतानस्य मा पथो वि दुक्षः ॥७॥
नहि ग्रभायारणः सुशेवोऽन्योदर्यो मनसा मन्तवा उ ।
अधा चिदोकः पुनरित्स एत्या नो वाज्यभीषाळेतु नव्यः ॥८॥

३ मनुष्य जिन शुभ्र अग्निको मुख्य स्थानमें परिग्रहण करते हैं और जो पुरुषों द्वारा गृहीत वस्तुकी सेवा करते हैं, वही मनुष्योंके लिये शत्रुओंको दुःसेव्य रूपसे दीप्ति पाते हैं ।

४ कवि, प्रकाशक और अमर अग्नि अकवि मनुष्योंके बीच निहित हैं । अग्नि, हम तुम्हारे लिये सदा सुबुद्धि रहेंगे । हमें नहीं मारना ।

५ अग्निने प्रज्ञा द्वारा देवोंको तारा है; इसलिये वह देवोंके स्थानपर बैठते हैं । ओषधियाँ, वृक्ष, धारक और गर्भमें वर्त्तमान अग्निका धारण करते हैं; पृथ्वी भी अग्निको धारण करती है ।

६ अग्नि अधिक अमृत देनेमें समर्थ हैं; सुन्दर अमृत देनेमें समर्थ हैं । बली अग्नि, हम पुत्रादिसे शून्य होकर नहीं बैठें; रूप-रहित होकर न बैठें; सेवा-शून्य होकर भी नहीं बैठें ।

७ ऋण–रहित व्यक्तिके पास यथेष्ट धन रहता है; इसलिये हम नित्य धनके पति होंगे । अग्नि, हमारी सन्तान अन्यजात (अनौरस) न हो । मूर्खका मार्ग नहीं जानना ।

८ अन्यजात (दत्तक पुत्र) पुत्र सुखावह होनेपर भी उसे पुत्र कहकर ग्रहण नहीं किया जा सकता या नहीं समझा जा सकता; क्योंकि वह फिर अपने ही स्थानपर जा पहुँचता है । इसलिये अन्नवान्, शत्रु-हन्ता और नवजात शिशु हमें प्राप्त हो ।

त्वमग्ने वनुष्यतो नि पाहि त्वमु नः सहसावन्नवद्यात् ।
सं त्वा ध्वस्मन्वदभ्येतु पाथः सं रयिः स्पृहयाय्यः सहस्री ॥९॥
एता नो अग्ने सौभगा दिदीह्यपि क्रतुं सुचेतसं वतेम ।
विश्वा स्तोतृभ्यो गृणते च सन्तु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥१०॥



५ सूक्त

वैश्वानर अग्नि देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

प्राग्नये तवसे भरध्वं गिरं दिवो अरतये पृथिव्याः ।
यो विश्वेषाममृतानामुपस्थे वैश्वानरो वावृधे जागृवद्भिः ॥१॥
पृष्टो दिवि धाय्यग्निः पृथिव्यां नेता सिन्धूनां वृषभः स्तियानाम् ।
स मानुषीरभि विशो विभाति वैश्वानरो वावृधानो वरेण ॥२॥
त्वद्भिया विश आयन्नसिक्नीरसमना जहतीर्भोजनानि ।
वैश्वानर पूरवे शोशुचानः पुरो यदग्ने दरयन्नदीदेः ॥३॥

९ अग्नि, तुम हमें हिंसकसे बचाओ। बली अग्नि, तुम हमें पापसे बचाओ। निर्दोष अन्न तुम्हारे पास जाय। अभिलषणीय हजारों प्रकारके धन हमें प्राप्त हों।

१० अग्नि, हमें यही सुन्दर धन दो। हम यज्ञ-सेवी और विशुद्धान्तःकरण पुत्र प्राप्त करें। सारा धन उद्गाताओं और स्तोताओंका हो। तुम लोग सदा हमें कल्याण-कार्यके द्वारा पालन करो।

१ जो वैश्वानर अग्नि यज्ञमें जागे हुए सारे देवोंके साथ बढ़ते हैं, उन्हीं प्रवृद्ध और अन्तरीक्ष तथा पृथिवीपर गतिशील अग्निको लक्ष्य कर स्तुति करो।

२ जो नदियोंके नेता, जलवर्षक और पूजित अग्नि अन्तरीक्ष और पृथिवीपर निकले हैं, वही वैश्वानर नामक अग्नि हव्यद्वारा वर्द्धित होकर मनुष्य-प्रजाके सामने शोभा पाते हैं।

३ वैश्वानर अग्नि, जिस समय तुम पुरुके पास दीप्त होकर उनके शत्रुकी पुरीको विदीर्ण कर प्रज्वलित हुए थे, उस समय तुम्हारे डरसे असितवर्ण प्रजा, परस्पर असमान होकर, भोजन छोड़कर आयी थी।

तव त्रिधातु पृथिवी उत द्यौर्वैश्वानर व्रतमग्ने सचन्त ।
त्वं भासा रोदसी आ ततन्थाजस्रेण शोचिषा शोशुचानः ॥४॥
त्वामग्ने हरितो वावशाना गिरः सचन्ते धुनयो घृताचीः ।
पतिं कृष्टीनां रथ्यं रयीणां वैश्वानरमुषसां केतुमह्नाम् ॥५॥
त्वे असुर्यं वसवोन्यृण्वन् क्रतुं हि ते मित्रमहो जुषन्त ।
त्वं दस्यूँरोकसो अग्न आज उरु ज्योतिर्जनयन्नार्याय ॥६॥
स जायमानः परमे व्योमन्वायुर्न पाथः परि पासि सद्यः ।
त्वं भुवना जनयन्नभि क्रन्नपत्याय जातवेदो दशस्यन् ॥७॥
तामग्ने अस्मे इषमेरयस्व वैश्वानर द्युमतीं जातवेदः ।
यया राधः पिन्वसि विश्ववार पृथु श्रवो दाशुषे मर्त्याय ॥८॥
तं नो अग्ने मघवद्भ्यः पुरुक्षुं रयिं नि वाजं श्रुत्यं युवस्व ।
वैश्वानर महि नः शर्म यच्छ रुद्रेभिरग्ने वसुभिः सजोषाः ॥९॥

---

४ वैश्वानर अग्नि, अन्तरीक्ष, पृथिवी और द्युलोक तुम्हारे लिये प्रीतिजनक कर्म करते हैं। तुम सतत प्रकाश द्वारा विभासित होकर अपनी दीप्तिसे द्यावापृथिवीको विस्तृत करते हो।

५ वैश्वानर अग्नि, तुम मनुष्योंके स्वामी, धनोंके नेता और उषा तथा दिनके महान् केतु-स्वरूप हो। अश्वगण कामना करके तुम्हारी सेवा करते हैं। पाप-नाशक और घृत-युक्त वाक्य तुम्हारी सेवा करते हैं।

६ मित्रोंके पूजयिता अग्नि, वसुओंने तुममें बल स्थापित किया है; तुम्हारे कर्मकी सेवा की है। आर्य (कर्म-निष्ठ)के लिये अधिक तेज उत्पन्न करते हुए दस्युओं (अनार्यों) को उनके स्थानोंसे बाहर निकाल दिया है।

७ तुम दूरस्थ अन्तरीक्षमें सूर्य-रूपसे प्रकट होकर वायुकी तरह सबसे पहले सदा सोम पान करते हो। जातवे[illegible]ग्नि, जल उत्पन्न करते हुए अपत्यकी तरह पालनीय व्यक्तिको अभिलाषाएँ देते हुए विद्युद्रूपसे गर्जन करते हो।

८ सबके वरणीय अग्निदेव, जिस अन्नके द्वारा धनकी रक्षा करते हो और हव्यदाता मनुष्यके विस्तृत यशकी रक्षा करते हो, हमें तुम वही दीप्तिमान् अन्न दो।

९ अग्नि, हम हविर्दाताओंको प्रभूत अन्न, धन और श्रवणीय बल दो। वैश्वानर अग्नि, तुम रुद्रों और वसुओंके साथ हमें महान् सुख दो।

६ सूक्त

वैश्वानर अग्नि देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

प्र सम्राजो असुरस्य प्रशस्तिं पुंसः कृष्टीनामनुमाद्यस्य।
इन्द्रस्येव प्र तवसस्कृतानि वन्दे दारुं वन्दमानो विविक्मि ॥१॥
कविं केतुं धासिं भानुमद्रेर्हिन्वन्ति शं राज्यं रोदस्योः।
पुरन्दरस्य गीर्भिरा विवासेऽग्नेर्व्रतानि पूर्व्या महानि ॥२॥
न्यक्रतून् ग्रथिनो मृध्रवाचः पणीँरश्रद्धाँ अवृधाँ अयज्ञान्।
प्रप्र तान्दस्यूँरग्निर्विवाय पूर्वश्चकारापराँ अयज्यून् ॥३॥
यो अपाचीने तमसि मदन्तीः प्राचीश्चकार नृतमः शचीभिः।
तमीशानं वस्वो अग्निं गृणीषेऽनानतं दमयन्तं पृतन्यून् ॥४॥
यो देह्यो अनमयद्वधस्नैर्यो अर्यपत्नीरुषसश्चकार।
स निरुध्या नहुषो यह्वो अग्निर्विशश्चक्रे बलिहृतः सहोभिः ॥५॥

१ मैं पुरियोंके भेदकोंकी वन्दना करता हूँ। वन्दन करके सम्राट्, असुर, वीर और मनुष्योंकी स्तुतिके योग्य तथा बलवान् इन्द्रकी तरह उन्हीं वैश्वानरकी स्तुति और कर्मोंका कीर्त्तन करता हूँ।

२ अग्निदेव प्राज्ञ, प्रज्ञापक, पर्वतधारी, दीप्तिशाली, सुखदाता और द्यावापृथिवीके राजा हैं। देवगण उन्हीं अग्निको प्रसन्न करते हैं। मैं पुरी-विदारक अग्निके प्राचीन और महान् कर्मोंकी, स्तुति द्वारा, कीर्त्ति गाता हूँ।

३ अग्नि यज्ञ-शून्य, जल्पक, हिंसित-वचन, श्रद्धा-रहित, वृद्धि-शून्य और यज्ञ-रहित पणिनायक दस्युओंको विदूरित करें। अग्नि मुख्य होकर अन्य यज्ञ-शून्योंको हेय बनावें।

४ नेतृतम अग्निने अप्रकाशमान अन्धकारमें निमग्न प्रजाको प्रसन्न करते हुए प्रज्ञा द्वारा प्रजाको सरल-गामिनी किया था। मैं उन्हीं धनाधिपति, अनत और योद्धाओंका दमन करनेवाले अग्निकी स्तुति करता हूँ।

५ जिन्होंने आसुरी विद्याको आयुधसे हीन किया है और जिन्होंने सूर्यपत्नी उषाकी सृष्टि की है, उन्हीं अग्निने प्रजाको बल द्वारा रोककर नहुष राजाको करदाता बनाया था।

यस्य शर्मन्नुप विश्वे जनास एवैस्तस्थुः सुमतिं भिक्षमाणाः ।
वैश्वानरो वरमा रोदस्योराग्निः ससाद पित्रोरुपस्थ ॥६॥
आ देवो ददे बुध्न्या वसूनि वैश्वानर उदिता सूर्यस्य ।
आ समुद्रादवरादा परस्मादाग्निर्ददे दिव आ पृथिव्याः ॥७॥



७ सूक्त

अग्नि देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

प्र वो देवं चित् सहसानमग्निमश्वं न वाजिनं हिषे नमोभिः ।
भवा नो दूतो अध्वरस्य विद्वान् त्मना देवेषु विविदे मितद्रुः ॥१॥
आ याह्यग्ने पथ्या अनु स्वा मन्द्रो देवानां सख्यं जुषाणः ।
आ सानु शुष्मैर्नदयन् पृथिव्या जम्भेभिर्विश्वमुशधग्वनानि ॥२॥

६ सारे मनुष्य, सुखके लिये, जिनकी कृपा पानेके अर्थ हव्यके साथ उपस्थित होते हैं, वही वैश्वानर अग्नि पितृ-मातृ-तुल्य द्यावापृथिवीके बीच स्थित अन्तरीक्षमें आये हैं ।

७ वैश्वानर अग्नि सूर्यके उदय होनेपर अन्तरीक्षके अन्धकारको लेते हैं । अग्नि निम्नस्थ अन्तरीक्षका अन्धकार ग्रहण करते हैं । वे पर समुद्रसे द्युलोकमें और पृथिवीसे अन्धकार ग्रहण करते हैं ।



१ अग्निदेव, तुम राक्षसादिकोंके अभिभविता और अश्वकी तरह वेगशाली हो । अग्नि, तुम विद्वान् हो । हमारे यज्ञके दूत बनो । तुम स्वयं देवोंमें "द्रुधद्रुम" कहकर विख्यात हो ।

२ अग्नि, तुम स्तुति-योग्य हो और देवोंके साथ तुम्हारी मित्रता है । तुम अपने तेजोबलसे पृथिवीके तटप्रदेश (तृणगुल्मादि) को शब्दायमान करते हुए अपनी ज्वालाओंसे सारे वनको जलाकर अपने मार्ग द्वारा आओ ।

प्राचीनो यज्ञः सुधितं हि बर्हिः प्रीणीते अग्निरीलितो न होता ।
आ मातरा विश्ववारे हुवानो यतो यविष्ठ जज्ञिषे सुशेवः ॥३॥
सद्यो अध्वरे रथिरं जनन्त मानुषासोय विचेतसोय एषाम् ।
विशामधायि विश्पतिर्दुरोणेऽग्निर्मन्द्रो मधुवचा ऋतावा ॥४॥
असादि वृतो वह्निराजगन्वानग्निर्ब्रह्मा नृषदने विधर्ता ।
द्यौश्च यं पृथिवी वावृधाते आ यं होता यजति विश्ववारम् ॥५॥
एते द्युम्नेभिर्विश्वमातिरन्त मन्त्रं ये वारं नर्या अतक्षन् ।
प्र ये विशस्तिरन्त श्रोषमाणा आ ये मे अस्य दीधयन्नृतस्य ॥६॥
नू त्वामग्न ईमहे वसिष्ठा ईशानं सूनो सहसो वसूनाम् ।
इषं स्तोतृभ्यो मघवद्भ्य आनड्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥७॥



३ तरुणतम अग्नि, जिस समय तुम सुन्दर सुखवाले होकर उत्पन्न होते हो, उस समय यज्ञ किया जाता और कुश रखा जाता है। स्तुति-योग्य अग्नि और होता तृप्त होते हैं और सबके लिये स्वीकरणीय मातृ-भूत द्यावापृथिवी बुलायी जाती हैं।

४ विद्वान् लोग यज्ञमें नेता, अग्निको तुरत उत्पन्न करते हैं। जो इनका हव्य वहन करते हैं, वही विश्वपति, मादक, मधु-वचन और यज्ञवान् अग्नि मनुष्योंके घरोंमें निहित हैं।

५ जिन अग्निको द्युलोक और पृथिवी वर्द्धित करती है और जिन विश्व-स्वीकरणीय अग्निका होता यज्ञ करता है, वही हव्यवाहक, ब्रह्मा और सबके धारक अग्नि द्युलोकसे आकर मनुष्योंके घरोंमें बैठे हुए हैं।

६ जिन मनुष्योंने यथेष्ट मन्त्र-संस्कार किया है, जो श्रवणेच्छु होकर वर्द्धित करते हैं और जिन्होंने सत्यभूत अग्निको प्रदीप्त किया है, वे अन्न द्वारा सारे पोष्य वृन्दको वर्द्धित करते हैं।

७ बलके पुत्र अग्नि, तुम वसुओंके पति हो। वसिष्ठगण तुम्हारे स्तोता हैं। तुम स्तोता और हविष्मान्‌को अन्न द्वारा शीघ्र व्याप्त करो। हमें सदा स्वस्ति द्वारा पालन करो।



८ सूक्त

अग्नि देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

इन्धे राजा समर्यो नमोभिर्यस्य प्रतीकमाहुतं घृतेन।
नरो हव्येभिरीलते सबाध अग्निरग्र उषसामशोचि ॥१॥
अयमुष्य सुमहाँ अवेदि होता मन्द्रो मनुषो यह्वो अग्निः।
वि भा अकः ससृजानः पृथिव्यां कृष्णपविरोषधीभिर्ववक्षे ॥२॥
कया नो अग्ने वि वसः सुवृक्तिं कामु स्वधामृणवः शस्यमानः।
कदा भवेम पतयः सुदत्र रायो वन्तारो दुष्टरस्य साधोः ॥३॥
प्रप्रायमग्निर्भरतस्य शृण्वे वि यत्सूर्यो न रोचते बृहद्भाः।
अभि यः पूरुं पृतनासु तस्थौ द्युतानो दैव्यो अतिथिः शुशोच ॥४॥
असन्नित्त्वे आहवनानि भूरि भुवो विश्वेभिः सुमना अनीकैः।
स्तुतश्चिदग्ने शृण्विषे गृणानः स्वयं वर्धस्व तन्वं सुजात ॥५॥

१ जिन अग्निका रूप घृतसे आहुत होता है और हव्यके साथ बाधा-युक्त होकर जिनकी स्तुति नेता लोग करते हैं, वही राजा और स्वामी अग्नि स्तुतिके साथ समिद्ध होते हैं। उषाके आगे अग्नि दीप्त होते हैं।

२ यही होता, मादक और विशाल अग्नि मनुष्यों द्वारा महान् गिने जाते हैं। अग्नि दीप्ति फैलाते हैं। यह कृष्णमार्ग अग्नि पृथिवीपर सृष्ट होकर ओषधियों द्वारा परिवर्द्धित होते हैं।

३ अग्नि, तुम किस हविद्वारा हमारी स्तुतिको व्याप्त करोगे? स्तूयमान होकर तुम कौन स्वधा प्राप्त करोगे? शोभन दानवाले अग्निदेव, हम कब दुस्तर समीचीन धनके पति और विभाग-कारी होंगे?

४ जिस समय यह अग्नि सूर्यकी तरह विशाल प्रतापशाली होकर प्रकाश पाते हैं, उस समय वह भरत (यजमान) द्वारा प्रसिद्ध होते हैं। जिन्होंने युद्धोंमें पुरुको अभिभूत किया है, वही दीप्तमान और देवोंके अतिथि अग्नि प्रज्वलित हुए।

५ अग्नि, तुम्हें यथेष्ट हव्य प्रदत्त हुआ है। सारे तेजोंके लिये प्रसन्न होओ और स्तोताका स्तोत्र सुनो। सुजन्मा अग्नि, स्तूयमान होकर स्वयं शरीर वर्द्धित करो।

इदं वचः शतसाः संसहस्रमुदग्नये जनिषीष्ट द्विबर्हाः ।
शं यत्स्तोतृभ्य आपये भवाति द्युमदमीवचातनं रक्षोहा ॥६॥
नू त्वामग्न ईमहे वसिष्ठा ईशानं सूनो सहसा वसूनाम् ।
इषं स्तोतृभ्यो मघवद्भ्य आनड्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥७॥



६ सूक्त

अग्नि देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

अबोधि जार उषसामुपस्थाद्धोता मन्द्रः कवितमः पावकः ।
दधाति केतुमुभयस्य जन्तोर्हव्या देवेषु द्रविणं सुकृत्सु ॥१॥
स सुक्रतुर्यो वि दुरः पणीनां पुनानो अर्कं पुरुभोजसन्नः ।
होता मन्द्रो विशां दमूनास्तिरस्तमो ददृशे राम्याणाम् ॥२॥

६ सौ गौओंके विभागकारी और हजार गौओंसे संयुक्त तथा विद्या और कर्मसे महान् वसिष्ठने इस स्तोत्रको अग्निके लिये उत्पन्न किया है।

७ बल-पुत्र अग्नि, तुम वसुओंके पति हो। वसिष्ठगण तुम्हारे स्तोता हैं। तुम स्तोता और हविष्मान्को अन्न द्वारा शीघ्र व्याप्त करो। हमें सदा स्वस्ति द्वारा पालन करो।



१ अग्नि सब प्राणियोंके जार, होता, मदयिता, प्राज्ञतम और शोधक हैं। वह उषाके बीच जागे हैं। वह देवों और मनुष्योंकी प्रज्ञा धारण करते हैं। देवोंमें हव्य और पुण्यात्माओंमें धन धारण करते हैं।

२ जिन अग्निने पणियोंका द्वार खोला था, वही सुकृती हैं। वह हमारे लिये बहु-क्षीर-युक्त और अर्चनीय गायोंका हरण करते हैं। वह देवोंको बुलानेवाले, मदयिता और शान्तमना हैं। अग्नि रात्रि और यजमानका अन्धकार दूर करते देखे जाते हैं।

अमूरः कविरदितिर्विवस्वान्त्सुसंसन्मित्रो अतिथिः शिवो नः ।
चित्रभानुरुषसां भात्यग्रेऽपां गर्भः प्रस्व आ विवेश ॥३॥
ईळेन्यो वो मनुषो युगेषु समनगा अशुचज्जातवेदाः ।
सुसन्दृशा भानुना यो विभाति प्रति गावः समिधानं बुधन्त ॥४॥
अग्ने याहि दूत्यं मा रिषण्यो देवाँ अच्छा ब्रह्मकृता गणेन ।
सरस्वतीं मरुतो अश्विनापो यक्षि देवान्रत्नधेयाय विश्वान् ॥५॥
त्वामग्ने समिधानो वसिष्ठो जरूथं हन्यक्षि राये पुरन्धिम् ।
पुरुणीथा जातवेदो जरस्व यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥६॥



३ अमूढ़, प्राज्ञ (कवि), अदीन, दीप्तिमान्, शोभन गृहसे युक्त, मित्र, अतिथि और हमारे मङ्गल-विधायक अग्नि, विशिष्ट दीप्तिसे युक्त होकर, उषाके मुखमें शोभा पाते और सलिलके गर्भ-रूपसे उत्पन्न होकर ओषधियोंमें प्रवेश करते हैं ।

४ अग्नि, तुम मनुष्योंके यज्ञ-कालमें स्तुति-योग्य हो । जातधन अग्नि युद्धमें सङ्गत होकर दीप्ति पाते हैं । वह दर्शनीय तेज द्वारा शोभा पाते हैं । स्तुतियाँ समिद्ध अग्निको प्रतिबोधित करती हैं ।

५ अग्नि, तुम देवोंके सामने दूत-कार्यके लिये जाओ । सङ्घके साथ स्तोताओंको नहीं मारना । हमें रत्न देनेके लिये तुम सरस्वती, मरुद्गण, अश्विद्वय, जल आदि सारे देवोंका यज्ञ करते हो ।

६ अग्नि, वसिष्ठ तुम्हें समिद्ध करते हैं । तुम कठोर-भाषी राक्षसोंको मारो । जातवेद अग्नि, अनेक स्तोत्रोंसे देवोंकी स्तुति करो । तुम हमें सदा स्वस्ति द्वारा पालन करो ।



१० सूक्त

अग्नि देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

उषो न जारः पृथु पाजो अश्रेद्दविद्युतद्दीद्यच्छोशुचानः।
वृषा हरिः शुचिरा भाति भासा धियो हिन्वान उशतीरजीगः ॥१॥
स्वर्ण वस्तोरुषसामरोचि यज्ञं तन्वाना उशिजो न मन्म।
अग्निर्जन्मानि देव आ वि विद्वान्द्रवद्दूतो देवयावा वनिष्ठः ॥२॥
अच्छा गिरो मतयो देवयन्तीरग्निं यन्ति द्रविणं भिक्षमाणाः।
सुसंदृशं सुप्रतीकं स्वञ्चं हव्यवाहमरतिं मानुषाणाम् ॥३॥
इन्द्रं नो अग्ने वसुभिः सजोषा रुद्रं रुद्रेभिरा वहा बृहन्तम्।
आदित्येभिरदितिं विश्वजन्यां बृहस्पतिमृक्वभिर्विश्ववारम् ॥४॥
मन्द्रं होतारमुशिजो यविष्ठमग्निं विश ईळते अध्वरेषु।
स हि क्षपावाँ अभवद्रयीणामतन्द्रो दूतो यजथाय देवान् ॥५॥

१ उषाके जार सूर्यकी तरह अग्नि विस्तीर्ण तेजका आश्रय ग्रहण करते हैं। अत्यन्त दीप्तिमान्, काम-वर्षी, हव्य-प्रेरक और शुद्ध अग्नि कर्मोंको प्रेरित करके दीप्ति द्वारा प्रकाश पाते हैं। अग्नि अभिलाषियोंको जगाते हैं।

२ दिनमें अग्नि उषाके आगे ही सूर्यकी तरह शोभा पाते हैं। यज्ञका विस्तार करते हुए ऋत्विक्गण मननीय स्तोत्रोंका पाठ करते हैं। विद्वान्, दूत, देवोंके पास गमनकर्त्ता और दातृ-श्रेष्ठ अग्निदेव प्राणियोंको द्रवीभूत करते हैं।

३ देवाभिलाषी, धन-याचक और गतिशील स्तुति-रूप वाक्य अग्निके सामने जाते हैं। वह अग्नि दर्शनीय, सुरूप, सुन्दर-गमनकारी, हव्य-वाहक और मनुष्योंके स्वामी हैं।

४ अग्नि, तुम वसुओंके साथ मिलकर हमारे लिये इन्द्रका आह्वान करो; रुद्रोंके साथ सङ्गत होकर महान् रुद्रका आह्वान करो; आदित्योंके साथ मिलकर विश्व-हितैषी अदितिको बुलाओ और स्तुत्य अङ्गिरा लोगोंके साथ मिल कर सबके वरणीय बृहस्पतिको बुलाओ।

५ अभिलाषी मनुष्य स्तुत्य, होता और तरुणतम अग्निकी यज्ञमें स्तुति करते हैं। अग्नि रात्रिवाले हैं। वह देवोंके यज्ञके लिये हव्य-दाताके तन्द्रा-शून्य दूत हुए थे।



११ सूक्त

अग्नि देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

महाँ अस्यध्वरस्य प्रकेतो न ऋते त्वदमृता मादयन्ते ।
आ विश्वेभिः सरथं याहि देवैर्न्यग्ने होता प्रथमः सदेह ॥१॥
त्वामीलते अजिरं दूत्याय हविष्मन्तः सदमिन्मानुषासः ।
यस्य देवैरासदो बर्हिरग्नेऽहान्यस्मै सुदिना भवन्ति ॥२॥
त्रिश्चिदक्तोः प्र चिकितुर्वसूनि त्वे अन्तर्दाशुषे मर्त्याय ।
मनुष्वदग्न इह यक्षि देवान् भवा नो दूतो अभिशस्तिपावा ॥३॥
अग्निरीशे बृहतो अध्वरस्याग्निर्विश्वस्य हविषः कृतस्य ।
क्रतुं ह्यस्य वसवो जुषन्ताथा देवादधिरे हव्यवाहम् ॥४॥
आग्ने वह हविरद्याय देवानिन्द्रज्येष्ठास इहमादयन्ताम् ।
इमं यज्ञं दिवि देवेषु धेहि यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥५॥

---

१ अग्नि, तुम यज्ञके प्रज्ञापक होकर महान् हो तुम्हारे विना देवलोग मत्त नहीं होते। तुम सारे देवोंके साथ रथ-युक्त होकर आओ और कुशोंपर, मुख्य होता बनकर, बैठो।

२ अग्नि, तुम गमनशील हो। हविर्दाता मनुष्य तुमसे सदा दौत्य-कार्यके लिये प्रार्थना करते हैं। जिस यजमानके कुशोंपर तुम देवोंके साथ बैठते हो, उसके दिन शोभन होते हैं।

३ अग्नि, ऋत्विक् लोग दिनमें तीन बार हव्यदाता मनुष्यके लिये तुम्हारे बीच हव्य फेंकते हैं। मनुकी तरह तुम इस यज्ञमें दूत होकर यज्ञ करो और हमें शत्रुओंसे बचाओ।

४ अग्नि महान् यज्ञके स्वामी हैं; अग्नि सारे संस्कृत हव्योंके पति हैं। वसु लोग इनके कर्मकी सेवा करते हैं और देवोंने अग्निको हव्यवाहक बनाया है।

५ अग्नि, हव्यका भक्षण करनेके लिये देवोंको बुलाओ। इस यज्ञमें इन्द्र आदि देवोंको प्रमत्त करो। इस यज्ञको द्युलोकमें, देवोंके पास, ले जाओ। सदा तुम स्वस्ति द्वारा हमारा पालन करो।



१२ सूक्त

अग्नि देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

अगन्म महा नमसा यविष्ठं यो दीदाय समिद्धः स्वे दुरोणे।
चित्रभानुं रोदसी अन्तरुर्वी स्वाहुतं विश्वतः प्रत्यञ्चम् ॥१॥
स मह्ना विश्वा दुरितानि साह्वानग्निष्टवे दम आ जातवेदाः।
स नो रक्षिषद्दुरितादवद्यादस्मान् गृणत उत नो मघोनः ॥२॥
त्वं वरुण उत मित्रो अग्ने त्वां वर्द्धन्ति मतिभिर्वसिष्ठाः।
त्वे वसु सुषणनानि सन्तु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥३॥



१३ सूक्त

वैश्वानर अग्नि देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

प्राग्नये विश्वशुचे धियन्धेऽसुरघ्ने मन्म धीतिं भरध्वम्।
भरे हविर्न बर्हिषि प्रीणानो वैश्वानराय यतये मतीनाम् ॥१॥

---

१ जो अपने गृहमें समिद्ध होकर दीप्ति पाते हैं, उन्हीं तरुणतम, विस्तीर्ण, द्यावापृथिवीके मध्यमें स्थित, विचित्र शिखावाले, सुन्दर रूपमें आहूत और सर्वत्र जानेवाले अग्निके पास हम नमस्कारके साथ गमन करते हैं।

२ जातधन अग्नि अपनी महिमा द्वारा सारे पापोंका अभिभव करते हैं। वह यज्ञ-गृहमें स्तुत होते हैं। वह हमें पाप और निन्दित कर्मसे बचावें। हम उनकी स्तुति और यज्ञ करते हैं।

३ अग्नि, तुम्हीं मित्र और वरुण हो। वसिष्ठवंशीय स्तुति द्वारा तुम्हें वर्द्धित करते हैं। तुममें विद्यमान धन सुलभ हो। तुम सदा हमें स्वस्ति द्वारा पालन करो।



१ सबके उद्दीपक, कर्मके धारक और असुर-विघातक अग्निको लक्ष्य कर स्तोत्र और कर्म करो। मैं प्रसन्न होकर मनोरथ-दाता वैश्वानर अग्निको लक्ष्य कर यज्ञमें, हव्यके साथ, स्तुति करता हूँ।

त्वमग्ने शोचिषा शोशुचान आ रोदसी अपृणा जायमानः ।
त्वं देवाँ अभिशस्तेरमुञ्चो वैश्वानर जातवेदोमहित्वा ॥२॥
जातो यदग्ने भुवना व्यख्यः पशून्न गोपा इर्यः परिज्मा ।
वैश्वानर ब्रह्मणे विन्द गातुं यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥३॥

१४ सूक्त

अग्नि देवता । वसिष्ठ ऋषि । बृहती और त्रिष्टुप् छन्द ।

समिधा जातवेदसे देवाय देवहूतिभिः ।
हविर्भिः शुक्रशोचिषे नमस्विनो वयं दाशेमाग्नये ॥१॥
वयं ते अग्ने समिधा विधेम वयं दाशेम सुष्टुती यजत्र ।
वयं घृतेनाध्वरस्य होतर्वयं देव हविषा भद्रशोचे ॥२॥
आ नो देवेभिरुप देवहूतिमग्ने याहि वषट्कृतिं जुषाणः ।
तुभ्यं देवाय दाशतः स्याम यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥३॥

२ अग्नि, तुमने दीप्ति द्वारा दीप्त और उत्पन्न होकर द्यावापृथिवीको पूर्ण किया है । जातधन वैश्वानर, अपनी महिमा द्वारा तुमने देवोंको शत्रुओंसे मुक्त किया है ।

३ अग्नि, तुम सूर्य-रूपसे उत्पन्न हो, स्वामी हो, सर्वत्र गमनशील हो । जैसे गोपालक पशुओंका सन्दर्शन करता है, वैसे ही तुम जिस समय भूतोंका सन्दर्शन करते हो, उस समय स्तोत्र-रूप फल प्राप्त करो । सदा तुम हमें स्वस्ति द्वारा पालन करो ।

१ हम हविवाले हैं । हम समिधा द्वारा जातवेदा अग्निकी सेवा करते हैं । देव-स्तुति द्वारा हम अग्निकी सेवा करेंगे । हव्य द्वारा शुभ्र दीप्ति अग्निकी सेवा करेंगे ।

२ अग्नि, समिधा द्वारा हम तुम्हारी सेवा करेंगे । हे यजनीय, हम स्तुति द्वारा तुम्हारी सेवा करेंगे । हे कल्याणमयी ज्वालावाले अग्नि, हम हव्य द्वारा तुम्हारी सेवा करेंगे ।

३ अग्नि, तुम हव्य (वषट्कृति) का सेवन करते हुए देवोंके सङ्ग हमारे यज्ञमें आओ । तुम प्रकाशमान हो; हम तुम्हारे सेवक बनें । तुम सदा हमें स्वस्ति द्वारा पालन करो ।

१५ सूक्त

अग्नि देवता । वसिष्ठ ऋषि । गायत्री छन्द ।

उपसद्याय मीढुष आस्ये जुहुता हविः । यो नो नेदिष्ठमाप्यम् ॥१॥

यः पञ्च चर्षणीरभि निषसाद दमेदमे । कविर्गृहपतिर्युवा ॥२॥

स नो वेदो अमात्यमग्नी रक्षतु विश्वतः । उतास्मान् पात्वंहसः ॥३॥

नवं नु स्तोममग्नये दिवः श्येनाय जीजनम् । वस्वः कुविद्वनाति नः ॥४॥

स्पार्हा यस्य श्रियो दृशे रयिर्वीरवतो यथा । अग्रे यज्ञस्य शोचतः ॥५॥

सेमां वेतु वषट्कृतिमग्निर्जुषत नो गिरः । यजिष्ठो हव्यवाहनः ॥६॥

नि त्वा नक्ष्य विश्पते द्युमन्तं देव धीमहि । सुवीरमग्न आहुत ॥७॥

क्षप उस्रश्च दीदिहि स्वग्नयस्त्वया वयम् । सुवीरस्त्वमस्मयुः ॥८॥

उप त्वा सातये नरो विप्रासो यन्ति धीतिभिः । उपाक्षरा सहस्रिणी ॥९॥

१ जो अग्नि हमारे समीपतम बन्धु हैं, उन्हीं पासमें बैठनेवाले और मनोरथवर्षक अग्निके लिये, उनके मुखमें, ऋत्विको, हव्य दो ।

२ प्राज्ञ, गृह-पालक और नित्य तरुण अग्नि पञ्चजनों (चार वर्णों और निषाद) के सामने घर-घर बैठते हैं ।

३ वही अग्नि हमारे मन्त्री हैं । बाधासे सारे धनकी रक्षा करें । हमें पापसे बचाओ ।

४ हम द्युलोकके, श्येन पक्षीकी तरह शीघ्रगामी अग्निको उद्देशकर नया मन्त्र उत्पन्न करते हैं । वह हमें बहुत धन दें ।

५ यज्ञके अग्रभागमें दीप्यमान अग्निकी दीप्तियाँ पुत्रवान् मनुष्यके धनकी तरह नेत्रोंको स्पृहणीय होती हैं ।

६ याज्ञिकोंके उत्तम हव्य-वाहक अग्नि इस हव्यकी अभिलाषा करें और हमारी स्तुतिकी सेवा करें ।

७ हे समीप जाने योग्य, विश्व-पति और यजमानों द्वारा बुलाये गये अग्निदेव, तुम प्रकाशमान और सुवीर हो । हमने तुम्हें स्थापित किया है ।

८ तुम दिन-रात प्रदीप्त होओ । इससे हम शोभन अग्निवाले होंगे । हमें चाहते हुए तुम सुवीर (सुन्दर स्तोत्रवाले) बनो ।

९ अग्नि, प्रतापी यजमान कर्म द्वारा, धन-लाभके लिये, तुम्हारे पास जाते हैं ।

अग्नी रक्षांसि सेधति शुक्रशोचिरमर्त्यः । शुचिः पावक ईड्यः ॥१०॥
स नो राधांस्याभरेशानः सहसो यहो । भगश्च दातु वार्यम् ॥११॥
त्वमग्ने वीरवद्यशो देवश्च सविता भगः । दितिश्च दाति वार्यम् ॥१२॥
अग्ने रक्षाणो अंहसः प्रतिष्म देव रीषतः । तपिष्ठैरजरो दह ॥१३॥
अधा मही न आयस्यनाधृष्टो नृपीतये । पूर्भवा शतभुजिः ॥१४॥
त्वं नः पाह्यंहसो दोषावस्तरघायतः । दिवा नक्तमदाभ्य ॥१५॥



१६ सूक्त

अग्नि देवता । वसिष्ठ ऋषि । बृहती और सती बृहती छन्द ।

एना वो अग्निं नमसोर्जो नपातमा हुवे ।
प्रियं चेतिष्ठमरतिं स्वध्वरं विश्वस्य दूतममृतम् ॥१॥
स योजते अरुषा विश्वभोजसा सदुद्रवत् स्वाहुतः ।
सुब्रह्मा यज्ञः सुशमी वसूनां देवं राधो जनानाम् ॥२॥

१० शुभ्र शिखावाले, अमर, स्वयंशुद्ध, शोधक और स्तुति-योग्य अग्नि, राक्षसोंको बाधा दो।

११ बलके पुत्र, तुम जगदीश्वर होकर हमें धन दो। भग देवता भी वरणीय धनदान करें।

१२ अग्नि, तुम पुत्रपौत्रादिसे युक्त अन्न दो। सविता देव भी वरणीय धन दें। भग और अदिति भी दें।

१३ अग्नि, हमें पापसे बचाओ। अजर देव, तुम हिंसकोंको अत्यन्त तापक तेज द्वारा जलाओ।

१४ तुम दुर्द्धर्ष हो। इस समय तुम हमारे मनुष्योंकी रक्षाके लिये महान् लौहसे निर्मित शतगुण पुरी बनाओ (ताकि लौह-नगरीमें शत्रु हमें न मार सकें)।

१५ अहिंसनीय रात्रिको अथवा अन्धकारको हटानेवाले अग्नि, तुम हमें पापसे और पाप-कामी व्यक्तिसे दिन-रात बचाओ।

---

१ तुम्हारे लिये बलके पुत्र, प्रिय विद्वच्छ्रेष्ठ, गतिशील सुन्दर यज्ञवाले, सबके दूत और नित्य अग्निको, इस स्तोत्रके द्वारा, मैं बुलाता हूँ।

२ अग्नि रुचिकर और सबके पालक हैं। वह दोनों अश्वोंको रथमें जोतते हैं। वह देवोंके प्रति अत्यन्त द्रुत-गमन करते हैं। वह सुन्दर रूपसे आहूत सुन्दर स्तुतिवाले, यजनीय और सुकर्मा हैं। वसिष्ठवंशीयोंका धन अग्निके पास जाय।

उदस्य शोचिरस्थादाजुह्वानस्य मीह्लुषः ।
उद्धूमासो अरुषासो दिविस्पृशः समग्निमिन्धते नरः ॥३॥
तं त्वा दूतं कृण्महे यशस्तमं देवाँ आ वीतये वह ।
विश्वा सूनो सहसो मर्तभोजना रास्व तद्यत्त्वेमहे ॥४॥
त्वमग्ने गृहपतिस्त्वं होता नो अध्वरे ।
त्वं पोता विश्ववार प्रचेता यक्षि वेषि च वार्यम् ॥५॥
कृधि रत्नं यजमानाय सुक्रतो त्वं हि रत्नधा असि ।
आ न ऋते शिशीहि विश्वमृत्विजं सुशंसो यश्च दक्षते ॥६॥
त्वे अग्ने स्वाहुत प्रियासः सन्तु सूरयः ।
यन्तारो ये मघवानो जनानामूर्वान्दयन्त गोनाम् ॥७॥
येषामिळा घृतहस्ता दुरोण आँ अपि प्राता निषीदति ।
ताँस्त्रायस्व सहस्य द्रुहो निदो यच्छा नः शर्म दीर्घश्रुत् ॥८॥

---

३ अभीष्टकारी और बुलाये जानेवाले इन अग्निका तेज ऊपर उठ रहा है। रुचिकर और आकाश छूनेवाले धुएँ उठ रहे हैं। मनुष्य अग्निको जला रहे हैं।

४ बल-पुत्र अग्नि, तुम यशः-शाली हो। हम तुम्हें दूत बनाते हैं। हव्य-भक्षणके लिये देवोंको बुलाओ। जिस समय तुम्हारी हम याचना करते हैं, उस समय मनुष्योंके भोग-योग्य धन हमें दो।

५ विश्व-माननीय अग्नि, तुम हमारे यज्ञमें गृह-पति हो। तुम होता, पोता और प्रकृष्ट-बुद्धि हो। वरणीय हव्यका यज्ञ करो और भक्षण करो।

६ सुन्दरकर्मा अग्नि, तुम यजमानको रत्न दो। तुम रत्न-दाता हो। हमारे यज्ञमें सबको तेज बनाओ। जो होता बढ़ता है, उसे बढ़ाओ।

७ सुन्दर रूपसे आहूत अग्नि, तुम्हारे स्तोता प्रिय हों। जो धनवान् दाता लोग जन-समुदाय और गो-समूह दान करते हैं, वे भी प्रिय हों।

८ जिन घरोंमें घृतहस्ता, अन्न-रूपा और हविर्लक्षणा देवी पूर्णा होकर बैठी हैं, उनको, हे बल-वान् अग्नि, द्रोहियों और निन्दकोंसे बचाओ। हमें बहुत समय तक स्तुति-योग्य सुख दो।

स मन्द्रया च जिह्वया वह्निरासा विदुष्टरः ।
अग्ने रयिं मघवद्भ्यो न आ वह हव्यदातिं च सूदय ॥९॥
ये राधांसि ददत्यश्व्या मघा कामेन श्रवसो महः ।
ताँ अंहसः पिपृहि पर्तृभिष्ट्वं शतं पूर्भिर्यविष्ठ्य ॥१०॥
देवो वो द्रविणोदाः पूर्णां विवष्ट्यासिचम् ।
उद्वा सिञ्चध्वमुप वा पृणध्वमादिद्वो देव ओहते ॥११॥
तं होतारमध्वरस्य प्रचेतसं वह्निं देवा अकृण्वत ।
दधाति रत्नं विधते सुवीर्यमग्निर्जनाय दाशुषे ॥१२॥



१७ सूक्त

अग्नि देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

अग्ने भव सुषमिधा समिद्ध उत बर्हिरुर्विया वि स्तृणीताम् ॥१॥
उत द्वार उशतीर्वि श्रयन्तामुत देवाँ उशत आ वहेह ॥२॥

९ अग्नि, तुम हव्य-वाहक और विद्वान् हो। मोदयित्री और मुखस्थिता जिह्वा द्वारा हमें धन दो। हम हव्यवाले हैं। हव्यदाताको कर्ममें प्रेरित करो।

१० तरुणतम अग्नि, जो यजमान महान् यशकी इच्छासे साधक-रूप और अश्वात्मक हव्य दान करते हैं, उन्हें पापसे बचाओ और सौ नगरियों द्वारा पालन करो।

११ धनदाता अग्निदेव तुम्हारे हविःपूर्ण स्रुक् वा चमसकी इच्छा करते हैं। सोमद्वारा तुम पात्र सिक्त करो, सोम दान करो। अनन्तर अग्निदेव तुम्हें वहन करते हैं।

१२ देवो, तुमने उत्तम-बुद्धि अग्निको यज्ञ-वाहक और होता बनाया है। वह अग्नि परिचर्याकारी हव्यदाता जनको शोभन वीर्यवाला और रमणीय धन दें।



१ अग्नि, शोभन समिधाके द्वारा समिद्ध होओ। अध्वर्यु भली भाँति कुश फैलावें।

२ देव-कामी द्वारोंको आश्रित करो और यज्ञाभिलाषी देवोंको इस यज्ञमें बुलाओ।

अग्ने वीहि हविषा यक्षि देवान्त्स्वध्वरा कृणुहि जातवेदः ॥३॥

स्वध्वरा करति जातवेदा यक्षद्देवाँ अमृतान्पिप्रयच्च ॥४॥

वंस्व विश्वा वार्याणि प्रचेतः सत्या भवन्त्वाशिषो नो अद्य ॥५॥

त्वामु ते दधिरे हव्यवाहं देवासो अग्न ऊर्ज आ नपातम् ॥६॥

ते ते देवाय दाशतः स्याम महो नो रत्ना वि दध इयानः ॥ ७॥



२ अनुवाक । १८ सूक्त

इन्द्र देवता हैं; किन्तु २२--२५ मन्त्रोंके सुदास देवता हैं । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

त्वे ह यत् पितरश्चिन्न इन्द्र विश्वा वामा जरितारो असन्वन् ।

त्वे गावः सुदुघास्त्वे ह्यश्वास्त्वं वसु देवयते वनिष्ठः ॥१॥

राजेव हि जनिभिः क्षेष्येवाव द्युभिरभि विदुष्कविः सन् ।

पिशा गिरो मघवन् गोभिरश्वैस्त्वायतः शिशीहि राये अस्मान् ॥२॥

३ जातधन अग्नि, देवोंके सामने जाओ । हव्यद्वारा देवोंका यज्ञ करो और देवोंको शोभन यज्ञवाले करो ।

४ जातधन अग्नि, अमर देवोंको सुन्दर यज्ञसे युक्त करो । हव्यसे यज्ञ करो और स्तोत्रसे प्रसन्न करो ।

५ हे सुबुद्धि अग्नि, समस्त वरणीय धन हमें दान करो । हमारे आशीर्वाद आज सत्य हों ।

६ अग्नि, तुम बल-पुत्र हो । तुम्हें उन्हीं देवोंने हव्यवाहक बनाया है ।

७ तुम प्रकाशमान हो । तुम्हें हम हवि देंगे । तुम महान् और पास जाने योग्य हो । हमें रत्न (धन) दान करो ।



१ इन्द्र, हमारे पितरोंने, स्तुति करते हुए, तुमसे ही सारे मनोहर धनोंको प्राप्त किया है । तुमसे ही गायें सरलतासे दोहनमें समर्थ होती हैं । तुममें अश्व हैं । देवाभिलाषी व्यक्तिको तुम प्रभूत धन देते हो ।

२ इन्द्र, पत्नियोंके साथ राजाकी तरह तुम दीप्तिके साथ रहते हो । इन्द्र, तुम विद्वान् और क्रान्त-कर्मा (कवि) होकर स्तोताओंको रूप दान करो और गौ तथा अश्व द्वारा रक्षा करो । हम तुम्हारी कामना करते हैं । धनके लिये तुम हमें संस्कृत करो ।

इमा उ त्वा पस्पृधानासो अत्र मन्द्रा गिरो देवयन्तीरुपस्थुः ।
अर्वाची ते पथ्या राय एतु स्याम ते सुमताविन्द्र शर्मन् ॥३॥
धेनुं न त्वा सुयवसे दुदुक्षन्नुप ब्रह्माणि ससृजे वसिष्ठः ।
त्वामिन्मे गोपतिं विश्व आहान इन्द्रः सुमतिं गन्त्वच्छ ॥४॥
अर्णांसि चित् पप्रथाना सुदास इन्द्रो गाधान्यकृणोत्सुपारा ।
शर्द्धन्तं शिम्युमुचथस्य नव्यः शापं सिन्धूनामकृणोदशस्तीः ॥५॥
पुरोळा इत्तुर्वशो यक्षुरासीद्राये मत्स्यासो निशिता अपीव ।
श्रुष्टिं चक्रुर्भृगवो द्रुह्यवश्च सखा सखायमतरद्विषूचोः ॥६॥
आ पक्थासो भलानसो भनन्तालिनासो विषाणिनः शिवासः ।
आ यो नयत्सधमा आर्यस्य गव्या तृत्सुभ्यो अजगन्युधा नॄन् ॥७॥
दुराध्यो अदितिं स्रेवयन्तोऽचेतसो वि जगृभ्रे परुष्णीम् ।
मह्नाविव्यक्पृथिवीं पत्यमानः पशुष्कविरशयच्चायमानः ॥८॥

३ इन्द्र, इस यज्ञकी स्पर्द्धमान और रमणीय स्तुतियाँ तुम्हारे पास जाती हैं। तुम्हारा धन हमारी ओर आवे। तुम्हारी कृपा प्राप्त कर हम सुखी होंगे।

४ बढ़िया घासवाली गोशालाकी गायकी तरह तुम्हें दूहनेकी इच्छासे वसिष्ठ वत्स-रूप स्तोत्र बनाते हैं। समस्त संसार तुम्हें ही गायोंका पति कहता है। इन्द्र, हमारी सुन्दर स्तुतिके पास आओ।

५ स्तवनीय इन्द्र, तुमने, परुष्णी नदीके जलके विकट-धार होनेपर भी, सुदास राजाके लिये जलको तलस्पर्श और पार करनेके योग्य बना दिया था। स्तोताके लिये नदियोंके तरङ्गायित और रोकनेवाले शापको तुमने दूर किया था।

६ याज्ञिक और पुरोदाता तुर्वश नामके एक राजा थे। जलमें मत्स्यकी तरह बँधे रहनेपर भी भृगुओं और द्रुह्युओंने धनके लिये सुदास और तुर्वशका साक्षात्कार करा दिया। इन दोनों व्याप्ति-परायणोंमें एक (तुर्वश) का इन्द्रने बध किया और अन्य (सुदास) को तार दिया।

७ हव्योंके पाचक, कल्याण-मुख, तपस्यासे अप्रवृद्ध, विषाण-हस्त (दीक्षित) और मङ्गलकारी व्यक्ति इन्द्रकी स्तुति करते हैं। सोमपानसे मत्त होकर इन्द्र आर्यकी गायें हिंसकोंसे छुड़ा लाये थे। स्वयं गायोंको प्राप्त किया था और युद्ध करके उन गो-तस्कर रिपुओंको मारा था।

८ दुष्ट-मानस और मन्दमति शत्रुओंने परुष्णी नदीको खोदते हुए उसके तटोंको गिरा दिया था। इन्द्रकी कृपासे सुदास विश्व-व्यापक हो गये थे। चयमानका पुत्र कवि, पालित पशुकी तरह, सुदास द्वारा सुला दिया गया अर्थात् मार दिया गया।

ईयुरर्थं न न्यर्थं परुष्णीमाशुश्चनेदभिपित्वं जगाम ।
सुदास इन्द्रः सुतुकाँ अमित्रानरन्धयन्मानुषे वध्रिवाचः ॥९॥
ईयुर्गावो न यवसादगोपा यथाकृतमभि मित्रं चितासः ।
पृश्निगावः पृश्निनिप्रेषितासः श्रुष्टिं चक्रुर्नियुतो रन्तयश्च ॥१०॥
एकं च यो विंशतिं च श्रवस्या वैकर्णयोर्जनान्राजा न्यस्तः ।
दस्मो न सद्मन्नि शिशाति बर्हिः शूरः सर्गमकृणोदिन्द्र एषाम् ॥११॥
अध श्रुतं कवषं वृद्धमप्स्वनु द्रुह्युं नि वृणक्वज्रबाहुः ।
वृणाना अत्र सख्याय सख्यं त्वायन्तो ये अमदन्ननु त्वा ॥१२॥
वि सद्यो विश्वा दृंहितान्येषामिन्द्रः पुरः सहसा सप्त दर्दः ।
व्यानवस्य तृत्सवे गयं भाग्जेष्म पूरुं विदथे मृध्रवाचम् ॥१३॥

९ इन्द्र द्वारा परुष्णीके तट ठीक कर दिये जानेपर उसका जल गन्तव्य स्थानकी ओर, नदीमें चला गया—इधर-उधर नहीं गया। सुदास राजाका घोड़ा भी अपने गन्तव्य स्थानको चला गया। सुदासके लिये इन्द्रने मनुष्योंमें सन्ततिवाले और बकवादी शत्रुओंको, उनकी सन्ततियोंके साथ, वशमें किया था।

१० जैसे चरवाहोंके बिना गायें जौकी ओर जाती हैं, वैसे ही माता द्वारा भेजे गये और एकत्र मरुद्गण, अपनी पूर्वकी प्रतिज्ञाके अनुसार, मित्र इन्द्रकी ओर गये। मरुतोंके नियुत् (घोड़े) भी प्रसन्न होकर गये।

११ कीर्त्ति अर्जित करनेके लिये राजा सुदासने दो प्रदेशोंके २१ मनुष्योंका वध कर डाला था। जैसे युवक अध्वर्यु यज्ञ-गृहमें कुश काटता है, वैसे ही वह राजा शत्रुओंको काटता है। वीर इन्द्रने सुदासकी सहायताके लिये मरुतोंको उत्पन्न किया था।

१२ इसके सिवा वज्रबाहु इन्द्रने श्रुत, कवष, वृद्ध और द्रुह्यु नामक व्यक्तियोंको पानीमें डुबो दिया था। उस समय जिन लोगोंने उनकी इच्छा करके उनकी स्तुति की थी, वे सखा माने गये और मित्र बन गये।

१३ अपनी शक्तिसे इन्द्रने उक्त श्रुत आदिकी सुदृढ़ समस्त नगरियोंको और सात प्रकारके

नि गव्यवोऽनवो द्रुह्यवश्च षष्टिः शता सुषुपुः षट् सहस्रा ।
षष्टिर्वीरासो अधि षड्दुवोयु विश्वेदिन्द्रस्य वीर्या कृतानि ॥१४॥
इन्द्रेणैते तृत्सवो वेविषाणा आपो न सृष्टा अधवन्त नीचीः ।
दुर्मित्रासः प्रकलविन्मिमाना जहुर्विश्वानि भोजना सुदासे ॥१५॥
अर्धं वीरस्य शृतपामनिन्द्रं परा शर्धन्तं नुनुदे अभि क्षाम् ।
इन्द्रो मन्युं मन्युम्यो मिमाय भेजे पथो वर्तनिं पत्यमानः ॥१६॥
आध्रेण चित्तद्वेकं चकार सिंह्यं चित्पेत्वेना जघान ।
अव स्रक्तीर्वेश्यावृश्चदिन्द्रः प्रायच्छद्विश्वा भोजना सुदासे ॥१७॥
शश्वन्तो हि शत्रवो रारधुष्टे भेदस्य चिच्छर्धतो विन्द रन्धिम् ।
मर्तां एनः स्तुवतो यः कृणोति तिग्मं तस्मिन्नि जहि वज्रमिन्द्र ॥१८॥

रक्षा-साधनोंको तुरत विदीर्ण किया था। अनुके पुत्रके गृहको तृत्सुको दे दिया था। इन्द्र, हम दुष्ट वचनवाले मनुष्यको जीत सकें -इन्द्र, ऐसी कृपा करो।

१४ अनु और द्रुह्युकी गौओंको चाहनेवाले छियासठ हजार छियासठ सम्बन्धियोंको, सेवाभिलाषी सुदासके लिये, मारा गया था। यह सब कार्य इन्द्रकी शूरताके सूचक है।

१५ दुष्ट मित्रोंवाले ये अनाड़ी तृत्सुलोग इन्द्रके सामने युद्ध-भूमिमें उतरनेपर पलायन करने पर उद्यत होनेपर निम्नगामी जलकी तरह दौड़े थे; परन्तु बाधा प्राप्त होनेपर उन लोगोंने सारी भोग्य वस्तुएँ सुदासको दे दी थीं।

१६ वीर्य-शाली सुदासके हिंसक, इन्द्र-शून्य, हव्यपाता और उत्साही मनुष्योंको इन्द्रने धरा-शायी किया था। इन्द्रने क्रोधियोंके क्रोधको चौपट किया था। मार्गमें जाते हुए सुदासके शत्रुने पला-यन-पथका आश्रय लिया था।

१७ इन्द्रने उस समय दरिद्र सुदासके द्वारा एक कार्य कराया था। प्रबल सिंहको छाग द्वारा मरवाया था। सूईसे यूपादिका कोना काट दिया था। सारा धन सुदास राजाको प्रदान किया था।

१८ इन्द्र, तुम्हारे अधिकांश शत्रु वशी हो गये हैं। मनस्वी भेद (नास्तिक) को वशमें करो। जो तुम्हारी स्तुति करता है, भेद उसीका अहित करता है। इसके विरोधमें तेज योद्धाको उत्साहित करो (भेजो)। इसे वज्रसे मारो।

आवदिन्द्रं यमुना तृत्सवश्च प्रात्र भेदं सर्वताता मुषायत् ।
अजासश्च शिग्रवो यक्षवश्च बलिं शीर्षाणि जभ्रुरश्व्यानि ॥१९॥
न त इन्द्र सुमतयो न रायः सञ्चक्षे पूर्वा उषसो न नूत्नाः ।
देवकं चिन्मान्यमानं जघन्थाव त्मना बृहतः शम्बरं भेत् ॥२०॥
प्र ये गृहादममदुस्त्वाया पराशरः शतयातुर्वसिष्ठः ।
न ते भोजस्य सख्यं मृषन्ताधा सूरिभ्यः सुदिना व्युच्छान् ॥२१॥
द्वे नप्तुर्देववतः शते गोर्द्वा रथा वधूमन्ता सुदासः ।
अर्हन्नग्ने पैजवनस्य दानं होतेव सद्म पर्येमि रेभन् ॥२२॥
चत्वारो मा पैजवनस्य दानाः स्मद्दिष्टयः कृशनिनो निरेके ।
ऋज्रासो मा पृथिविष्ठाः सुदासस्तोकं तोकाय श्रवसे वहन्ति ॥२३॥

१९ इस युद्धमें इन्द्रने भेदका वध किया था। यमुनाने इन्द्रको सन्तुष्ट किया था। तृत्सुओंने भी उन्हें सन्तुष्ट किया था। अज, शिग्रु और यक्षु नामक जनपदोंने इन्द्रको, अश्वोंके सिर, उपहारमें दिये थे।

२० इन्द्र, तुम्हारी प्राचीन कृपाएँ और धन, उषाके समान, वर्णन करने योग्य नहीं हैं। तुम्हारी नयी कृपाएँ और धन भी वर्णनातीत हैं। तुमने मन्यमानके पुत्र देवकका वध किया था। स्वयं विशाल शैल-खण्डसे शम्बरका वध किया था।

२१ इन्द्र, अनेक राक्षस जिनके बधकी इच्छा करते हैं, उन्हीं पराशर, वसिष्ठ आदि ऋषियोंने, तुम्हारी इच्छा करके, अपने गृहकी ओर जाते हुए, तुम्हारी स्तुति की थी। वे तुम्हारा सख्य नहीं भूले; क्योंकि तुम उनका पालन नहीं भूले, जिससे उनके दिन सदा सुन्दर रहते हैं।

२२ देवोंमें श्रेष्ठ इन्द्र, देववान् राजाके पौत्र और पिजवनके पुत्र राजा सुदासकी दो सौ गौओं और दो रथोंको मैंने, इन्द्रकी स्तुति करके, पाया है। जैसे होता यज्ञ-गृहमें जाता है, वैसे ही मैं भी गमन करता हूँ।

२३ पिजवनपुत्र सुदास राजाके श्रद्धा, दान आदिसे युक्त, सोनेके अलङ्कारोंसे सम्पन्न, दुर्गतिके अवसरपर सरल-गामी और पृथिवीस्थित चार घोड़े पुत्रकी तरह पालनीय वसिष्ठको पुत्रके अन्न यों यशके लिये ढोते हैं।

यस्य श्रवो रोदसी अन्तरुर्वी शीर्ष्णेशीर्ष्णे विबभाजा विभक्ता ।
सप्तेदिन्द्रं न स्रवतो गृणन्ति नि युध्यामधिमशिशादभीके ॥२४॥
इमं नरो मरुतः सश्चतानु दिवोदासं न पितरं सुदासः ।
अविष्टना पैजवनस्य केतं दूणाशं क्षत्रमजरं दुवोयु ॥२५॥

१९ सूक्त

इन्द्र देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

यस्तिग्मशृङ्गो वृषभो न भीम एकः कृष्टीश्च्यावयति प्र विश्वाः ।
यः शश्वतो अदाशुषो गयस्य प्रयन्तासि सुष्वितराय वेदः ॥१॥
त्वं ह त्यदिन्द्र कुत्समावः शुश्रूषमाणस्तन्वा समर्ये ।
दासं यच्छुष्णं कुयवं न्यस्मा अरन्धय आर्जुनेयाय शिक्षन् ॥२॥
त्वं धृष्णो धृषता वीतहव्यं प्रावो विश्वाभिरूतिभिः सुदासम् ।
प्र पौरुकुत्सिं त्रसदस्युमावः क्षेत्रसाता वृत्रहत्येषु पूरुम् ॥३॥

---

२४ जिन सुदासका यश द्यावापृथिवीके बीच अवस्थित है और जो दातृ-श्रेष्ठ श्रेष्ठ व्यक्तिको धन दान करते हैं, उनकी स्तुति, सातो लोक, इन्द्रकी तरह, करते हैं। नदियोंने युद्धमें युध्यामधि नामके शत्रुका विनाश किया था।

२५ नेता मरुतो, यह सुदास राजाके पिता (पिजवन) हैं। दिवोदास अथवा पिजवनकी ही तरह सुदासकी भी सेवा करो। सुदास (दिवोदास-पुत्र) के घरकी रक्षा करो। सुदासका बल अविनाशी और अशिथिल रहे।

---

१ जो इन्द्र तीखी सींगँवाले बैलकी तरह भयंकर होकर अकेले ही सारे शत्रुओंको स्थान-च्युत करते हैं और जो हव्य-शून्य लोगोंके घरको ले लेते हैं, वही इन्द्र अतीव सोमाभिष-कर्त्ताको धन दान करें।

२ इन्द्र, जिस समय तुमने अर्जुनीके पुत्र कुत्सको धन देकर दास, शुष्ण और कुयवको वशीभूत किया था, उस समय शरीरसे शुश्रूषमाण होकर युद्धमें कुत्सकी रक्षा की थी।

३ हे धर्षक इन्द्र, हव्यदाता सुदासको वज्रके द्वारा सारी रक्षाओंके साथ बचाओ। भूमिलाभके लिये युद्धमें पुरुकुत्सके पुत्र त्रसदस्यु और पुरुकी रक्षा करो।

त्वं नृभिर्नृमणो देववीतौ भूरीणि वृत्रा हर्यश्व हंसि ।
त्वं नि दस्युं चुमुरिं धुनिं चास्वापयो दभीतये सुहन्तु ॥४॥
तव च्यौत्नानि वज्रहस्त तानि नव यत्पुरो नवतिं च सद्यः ।
निवेशने शततमाविवेषीरहञ्च वृत्रं नमुचिमुताहन् ॥५॥
सना ता त इन्द्र भोजनानि रातहव्याय दाशुषे सुदासे ।
वृष्णे ते हरी वृषणा युनज्मि व्यन्तु ब्रह्माणि पुरुशाक वाजम् ॥६॥
मा ते अस्यां सहसावन् परिष्टावघाय भूम हरिवः परादै ।
त्रायस्व नोऽवृकेभिर्वरूथैस्तव प्रियासः सूरिषु स्याम ॥७॥
प्रियास इत्ते मघवन्नभिष्टौ नरो मदेम शरणे सखायः ।
नि तुर्वशं नि याद्वं शिशीह्यतिथिग्वाय शंस्यं करिष्यन् ॥८॥
सद्यश्चिन्नु ते मघवन्नभिष्टौ नरः शंसन्त्युक्थशास उक्था ।
ये ते हवेभिर्वि पणीँरदाशन्नस्मान्वृणीष्व युज्याय तस्मै ॥९॥

४ नेताओंकी स्तुतिके योग्य इन्द्र, मरुतोंके साथ युद्धमें तुमने अनेक वृत्रों (शत्रुओं) को मारा था । हरि अश्वसे युक्त इन्द्र, दभीतिके लिये तुमने दस्यु, चुमुरि और धुनिका वध किया है ।

५ वज्रहस्त इन्द्र, तुममें इतना बल है कि, तुमने शम्बरासुरकी निन्यानबे नगरियोंको छिन्न-विछिन्न कर डाला था । अपने निवासके लिये सौवीं पुरीको अधिकृत कर रखा है । वृत्र और नमुचिका वध किया है ।

६ इन्द्र, हव्यदाता यजमान सुदासके लिये तुम्हारी सम्पत्तियाँ सनातन हुईं बहुकर्मा इन्द्र, तुम कामवर्षी हो, तुम्हारे लिये मैं दो अभिलाषादाता अश्वोंको रथमें जोतता हूँ । तुम बलिष्ठ हो । तुम्हारे पास स्तोत्र जायँ ।

७ बल और अश्ववाले इन्द्र, तुम्हारे इस यज्ञमें हम वरदान और पापके भागी न बनें । हमें बाधा-शून्य रक्षासे बचाओ, ताकि हम स्तोताओंमें प्रिय हों ।

८ धनपति इन्द्र, तुम्हारे यज्ञमें हम स्तोतृ-नेता, सखा और प्रिय होकर घरमें प्रसन्न हों, अतिथि-वत्सल सुदासको सुख देते हुए तुर्वश और याद्व (यदुवंशी) को वशीभूत करो ।

९ धनवान् इन्द्र, तुम्हारे यज्ञके हमीं नेता और उक्थका (मन्त्रोंको) उच्चारण करनेवाले हैं । आज उक्थोंका उच्चारण करते हैं और तुम्हारे हव्यके द्वारा पणियों (अदाता वणिकों) को भी धन देते हैं । हमें सख्य रूपसे स्वीकार करो ।

एते स्तोमा नरां नृतम तुभ्यमस्मद्र्यञ्चो ददतो मघानि ।
तेषामिन्द्र वृत्रहत्ये शिवो भूः सखा च शूरोऽविता च नृणाम् ॥१०॥
नू इन्द्र शूर स्तवमान ऊती ब्रह्मजूतस्तन्वा वावृधस्व ।
उप नो वाजान्मिमीह्युप स्तीन् यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥११॥

१० नेतृ-श्रेष्ठ इन्द्र, नेताओंकी स्तुतियोंने तुम्हें पूजनीय हव्य दान करके हमारी ओर कर दिया है। युद्धमें इन्हीं नेताओंका तुम कल्याण करो और इनके सखा, शूर तथा रक्षक बनो।

११ वीर इन्द्र, आज तुम स्तूयमान और स्तोत्रवाले होकर शरीरसे वर्द्धित होओ। हमें अन्न और घर दो। तुम सदा स्वस्ति द्वारा हमारी रक्षा करो।

द्वितीय अध्याय समाप्त



तृतीय अध्याय

२० सूक्त

इन्द्र देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

उग्रो यज्ञे वीर्याय स्वधावाञ्चक्रिरपो नर्यो यत्करिष्यन् ।
जग्मुर्युवा नृषदनमवोभिस्त्राता न इन्द्र एनसो महश्चित् ॥१॥
हन्ता वृत्रमिन्द्रः शूशुवानः प्रावीन्नु वीरो जरितारमूती ।
कर्ता सुदासे अह वा उ लोकं दाता वसु मुहुरा दाशुषे भूत् ॥२॥
युधमो अनर्वा खजकृत्समद्वा शूरः सत्राषाड् जनुषेमषाड्हः ।
व्यास इन्द्रः पृतनाः स्वोजा अधा विश्वं शत्रूयन्तं जघान ॥३॥
उभे चिदिन्द्र रोदसी महित्वा पप्राथ तविषीभिस्तुविष्मः ।
नि वज्रमिन्द्रो हरिवान्मिमिक्षन्त्समन्धसा मदेषु वा उवोच ॥४॥

१ बली और ओजस्वी इन्द्र वीर्य (प्रकाश) के लिये उत्पन्न हुए हैं। मनुष्यके जिस हितकारी कार्यको करनेकी इच्छा इन्द्र करते हैं, उसे अवश्य ही करते हैं। तरुण और रक्षाके लिये यज्ञ-गृहको जानेवाले इन्द्र महापापसे हमें बचावें।

२ वर्द्धमान होकर इन्द्र वृत्रका बध करते हैं। वह वीर हैं। वह शीघ्र ही शरण देकर स्तोताकी रक्षा करते हैं। उन्होंने सुदास राजाके लिये प्रदेशका निर्माण किया है। वह यजमानको लक्ष्य कर बार-बार धन देते हैं।

३ इन्द्र योद्धा, निष्पक्ष, युद्धकर्त्ता, कलह-तत्पर, शूर और स्वभावतः बहुतोंका अभिभव करनेवाले हैं। वह शत्रुओंके लिये अजेय और उत्तम बलशाले हैं। इन्द्रने ही शत्रु-सेनाको बाधा दी है। जो लोग शत्रुता करते हैं, उनका बध इन्द्र ही करते हैं।

४ बहुधनशाली इन्द्र, तुमने अपने बल और महिमासे द्यावापृथिवी, दोनोंको परिपूर्ण किया किया है। अश्ववाले इन्द्र शत्रुओंके ऊपर वज्र फेंकते हुए यज्ञमें सोमरस द्वारा सेवित होते हैं।

वृषा जजान वृषणं रणाय तमु चिन्नारी नर्यं ससूव ।
प्र यः सेनानीरध नृभ्यो अस्तीनः सत्वा गवेषणः स धृष्णुः ॥५॥
नू चित् स भ्रेषते जनो न रेषन्मनो यो अस्य घोरमाविवासात् ।
यज्ञैर्य इन्द्रे दधते दुवांसि क्षयत् स राय ऋतपा ऋतेजाः ॥६॥
यदिन्द्र पूर्वो अपराय शिक्षन्नयज्ज्यायान् कनीयसो देष्णम् ।
अमृत इत्पर्यासीत दूरमा चित्र चित्र्यं भरा रयिं नः ॥७॥
यस्त इन्द्र प्रियो जनो ददाशदसन्निरेके अद्रिवः सखा ते ।
वयं ते अस्यां सुमतौ चनिष्ठाः स्याम वरूथे अघ्नतो नृपीतौ ॥८॥
एष स्तोमो अचिक्रदद्वृषा त उत स्तामुर्मघवन्नक्रपिष्ट ।
रायस्कामो जरितारं त आगन् त्वमंग शक्रवस्व आ शको नः ॥९॥

५ युद्धके लिये पिता (कश्यप)ने कामवर्षी इन्द्रको उत्पन्न किया है। नारीने मनुष्य-हितैषी उन इन्द्रको उत्पन्न किया है । इन्द्र मनुष्योंके सेनापति होकर स्वामी बनते हैं । इन्द्र ईश्वर, शत्रुहन्ता, गौओंके अन्वेषक और शत्रुओंके पराभवकारी हैं ।

६ जो व्यक्ति इन्द्रके शत्रु-विनाशी मनकी सेवा करता है, वह कभी भी स्थान-भ्रष्ट नहीं होता, कभी क्षीण नहीं होता। जो जन इन्द्रकी स्तुति करता है, यज्ञोत्पन्न और यज्ञ-रक्षक इन्द्र उसे धन दें ।

७ विचित्र इन्द्र, पूर्ववर्ती पिता या ज्येष्ठ भ्राता परवर्तीको जो दान करता है और जो धन कनिष्ठसे ज्येष्ठ प्राप्त करता है तथा जो धन पितासे, अमृतकी तरह, पुत्र प्राप्त कर, दूर देश जाता है, इन तीनों तरहके धनोंको हमारे लिये ले आओ ।

८ वज्रधर इन्द्र, तुम्हें जो प्रिय सखा हव्य देता है, वह तुम्हारे दानमें ही अवस्थित रहे । हम, अहिंसक होकर, तुम्हारी दया प्राप्त करते हुए, सबसे अधिक अन्नवान् होकर मनुष्योंके रक्षणशील गृहमें रह सकें ।

९ धनशाली इन्द्र, तुम्हारे लिये बरस कर यह सोम रो रहा है। स्तोता तुम्हारी स्तुति करता है। शक्र, मैं तुम्हारा स्तोता हूँ । हमें धनकी अभिलाषा हुई है। इसलिये तुम शीघ्र हमलोगोंको वास-योग्य धन दो ।

स न इन्द्र त्वयताया इषे धास्त्मना च ये मघवानो जुनन्ति ।
वस्वी षु ते जरित्रे अस्तु शक्तिर्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥१०॥



२१ सूक्त

इन्द्र देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

असावि देवं गो ऋजीकमन्धो न्यस्मिन्निन्द्रो जनुषेमुवोच ।
बोधामसि त्वा हर्यश्व यज्ञैर्बोधा नः स्तोममन्धसो मदेषु ॥१॥
प्र यन्ति यज्ञं विपयन्ति बर्हिः सोममादो विदथे दुध्रवाचः ।
न्यु भ्रियन्ते यशसो गृभादा दूर उपब्दो वृषणो नृषाचः ॥२॥
त्वमिन्द्र स्रवितवा अपस्कः परिष्ठिता अहिना शूर पूर्वीः ।
त्वद्वावक्रे रथ्यो न धेना रेजन्ते विश्वा कृत्रिमाणि भीषा ॥३॥
भीमो विवेषायुधेभिरेषामपांसि विश्वा नर्याणि विद्वान् ।
इन्द्रः पुरो जर्हृषाणो वि दूधोद्वि वज्रहस्तो महिना जघान ॥४॥

---

१० इन्द्र, अपने दिये हुए अन्नको भोगनेके लिये हमें धारण करो। जो हव्यदाता स्वयमेव हव्य प्रदान करते हैं, उन्हें धारण करो। अतीव प्रशंसा-योग्य स्तुति-कार्यमें हमारी शक्ति हो। मैं तुम्हारा स्तोता हूँ। तुम हमें सदा स्वस्ति द्वारा पालन करो।

१ दीप्त और गव्य-मिश्रित सोम अभिषुत हुआ है। यह इन्द्र स्वभावतः इसमें सङ्गत होते हैं। हर्यश्व, तुम्हें हम यज्ञके द्वारा प्रबोधित करेंगे। सोमजात मत्तताके समय हमारे स्तोत्रको समझो।

२ यजमान यज्ञमें जाते और कुश फैलाते हैं। यज्ञ-स्थानमें पत्थर दुर्द्धर्ष शब्द करते हैं। अन्नवान्, दूरतक शब्द करनेवाले, ऋत्विकोंद्वारा संगत तथा वर्षक प्रस्तर गृहसे गृहीत होते हैं।

३ हे शूर इन्द्र, तुमने वृत्र द्वारा आक्रान्त बहुत जल भेजा था। तुम्हारे ही कारण नदियाँ, रथियोंकी तरह, निकलती हैं। तुमसे डरके मारे सारा विश्व काँपता है।

४ इन्द्रने मनुष्योंके सारे हितकर कार्योंको जानकर तथा आयुधोंसे भयङ्कर होकर असुरोंको व्याप्त किया था और उनके सारे नगरोंको कम्पित किया था। उन्होंने प्रसन्न, महिमान्वित और वज्रहस्त होकर उनका बध किया था।

न यातव इन्द्र जूजुवुर्नो न वन्दना शविष्ठ वेद्याभिः ।
स शर्धदर्यो विषुणस्य जन्तोर्मा शिश्नदेवा अपि गुर्ऋतं नः ॥५॥
अभि क्रत्वेन्द्र भूरध ज्मन्न ते विव्यङ्महिमानं रजांसि ।
स्वेना हि वृत्रं शवसा जघन्थ न शत्रुरन्तं विविदद्युधा ते ॥६॥
देवाश्चित्ते असुर्याय पूर्वेऽनु क्षत्राय ममिरे सहांसि ।
इन्द्रो मघानि दयते विषह्येन्द्रं वाजस्य जोहुवन्त सातौ ॥७॥
कीरिश्चिद्धि त्वामवसे जुहावेशानमिन्द्र सौभगस्य भूरेः ।
अवो बभूथ शतमूते अस्मे अभिक्षत्तुस्त्वावतो वरूता ॥८॥
सखायस्त इन्द्र विश्वह स्याम नमोवृधासो महिना तरुत्र ।
वन्वन्तु स्मा तेऽवसा समीके भीतिमर्यो वनुषां शवांसि ॥९॥
स न इन्द्र त्वयताया इषे धास्त्मना च ये मघवानो जुनन्ति ।
वस्वी षु ते जरित्रे अस्तु शक्तिर्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥११॥

---

५ इन्द्र, राक्षस हमें न मारें। बलि-श्रेष्ठ इन्द्र, प्रजासे हमें राक्षस अलग न करें। स्वामी इन्द्र विषम जन्तुको मारनेमें उत्साहान्वित होते हैं । शिश्नदेव (अब्रह्मचारी) हमारे यज्ञमें विघ्न न डालें।

६ इन्द्र, कर्म द्वारा पृथिवीके सारे जीवोंको अभिभूत करते हो। संसार तुम्हारी महिमाको व्याप्त नहीं कर सकता। तुमने अपने बाहु-बलसे वृत्रका वध किया है। युद्धसे शत्रु तुम्हारा पार नहीं पा सके।

७ इन्द्र, प्राचीन देवगणने भी बल और शत्रु-वधमें इन्द्रके बलसे अपने बलको कम समझा था। शत्रुओंको पराजित करके इन्द्र भक्तोंको धन देते हैं। अन्न-प्राप्तिके लिये स्तोता इन्द्रको बुलाते हैं।

८ इन्द्र, तुम ईशान वा ईश्वर हो। रक्षाके लिये स्तोता तुम्हें बुलाते हैं। बहुत्राता इन्द्र, तुम हमारे यथेष्ट धनके रक्षक हुए थे। तुम्हारे समान हमारा जो हिंसक हो, उसका निवारण करो।

९ इन्द्र, स्तुति द्वारा हम तुम्हें वर्द्धित करते हुए सदा तुम्हारे सखा हों। अपनी महिमाके द्वारा तुम सबके तारक हो। तुम्हारे रक्षणसे, आर्य स्तोता, संग्राममें आये हुए अनार्योंके बलकी हिंसा करें।

१० इन्द्र, तुम हमें धारण करो, ताकि हम तुम्हारे दिये अन्नका भोग कर सकें। जो हव्यदाता स्वयं हव्य प्रदान करते हैं, उन्हें भी धारण करो। मैं तुम्हारा स्तोता हूँ। अतीव प्रशंसा-योग्य स्तुति-कर्ममें मेरी शक्ति हो। तुम हमें सदा स्वस्ति द्वारा पालन करो।



२२ सूक्त

इन्द्र देवता। वसिष्ठ ऋषि। विराट् और त्रिष्टुप् छन्द।

पिबा सोममिन्द्र मन्दतु त्वा यं ते सुषाव हर्यश्वाद्रिः ।
सोतुर्बाहुभ्यां सुयतो नार्वा ॥१॥
यस्ते मदोयुज्यश्चारुरस्ति येन वृत्राणि हर्यश्व हंसि ।
स त्वामिन्द्र प्रभूव सो ममत्तु ॥२॥
बोधा सु मे मघवन्वाचमेमां यां ते वसिष्ठो अर्चति प्रशस्तिम् ।
इमा ब्रह्म सधमादे जुषस्व ॥३॥
श्रुधि हवं विपिपानस्याद्रेर्बोधा विप्रस्यार्चतो मनीषाम् ।
कृष्व दुवांस्यन्तमा सचेमा ॥४॥
न ते गिरो अपि मृष्ये तुरस्य न सुष्टुतिमसुर्यस्य विद्वान् ।
सदा ते नाम स्वयशो विवक्मि ॥५॥
भूरि हि ते सवना मानुषेषु भूरि मनीषी हवते त्वामित् ।
मारे अस्मन्मघवञ्ज्योकः ॥६॥

---

१ इन्द्र, सोम पान करो। वह सोम तुम्हें मत्त करे। हरि नामक अश्ववाले इन्द्र, रस्सी द्वारा संयत अश्वकी तरह अभिषवकर्त्ताके दोनों हाथोंमें परिगृहीत पत्थरने इस सोमका अभिषव किया है।

२ हरि नामके अश्ववाले और प्रभूत-धनी इन्द्र, तुम्हारा जो उपयुक्त और सम्यक् प्रस्तुत सोम है और जिसके द्वारा तुमने वृत्र आदिका बध किया है, वही सोम तुम्हें मत्त करे।

३ इन्द्र, तुम्हारी स्तुति-स्वरूपिणी जो बात वसिष्ठ कहते हैं, उन वसिष्ठकी (मेरी) इस बातको तुम जानो और यज्ञमें इन स्तुतियोंकी सेवा करो।

४ इन्द्र, मैंने सोम पान किया है। तुम मेरे इस पत्थरकी पुकार सुनो। स्तोता विप्रकी स्तुति जानो। यह जो मैं सेवा करता हूँ, वह सब, सहायक होकर, बुद्धिस्थ करो।

५ इन्द्र, तुम रिपुञ्जय हो। मैं तुम्हारा बल जानता हूँ। मैं तुम्हारी स्तुति करना नहीं छोड़ सकता। मैं सदा तुम्हारे यशस्वी नामका उच्चारण करूँगा।

६ इन्द्र, मनुष्योंमें तुम्हारे अनेक सवन हैं। मनीषी स्तोता तुम्हारा ही अत्यन्त आह्वान करता है। अपनेको हमसे दूर नहीं रखना।

तुभ्येदिमा सवना शूर विश्वा तुभ्यं ब्रह्माणि वर्धना कृणोमि ।
त्वं नृभिर्हव्यो विश्वधासि ॥७॥
नू चिन्नु ते मन्यमानस्य दस्मोदश्नुवन्ति महिमानमुग्र ।
न वीर्यमिन्द्र ते न राधः ॥८॥
ये च पूर्व ऋषयो ये च नूत्ना इन्द्र ब्रह्माणि जनयन्त विप्राः ।
अस्मे ते सन्तु सख्या शिवानि यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥९॥



२३ सूक्त

इन्द्र देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द ।

उदु ब्रह्माण्यैरत श्रवस्येन्द्रं समर्ये महया वसिष्ठ ।
आ यो विश्वानि शवसा ततानोपश्रोता म ईवतो वचांसि ॥१॥
अयामि घोष इन्द्र देवजा मिरिरज्यन्त यच्छुरुधो विवाचि ।
नहि स्वमायुश्चिकिते जनेषु तानीदंहांस्यति पर्ष्यस्मान् ॥२॥

७ शूर इन्द्र, तुम्हारे ही लिये यह सब सवन हैं; तुम्हारे ही लिये यह वर्द्धक स्तोत्र करता हूँ। तुम सब तरहसे मनुष्योंके आह्वानके योग्य हो।

८ दर्शनीय इन्द्र, स्तुति करनेपर तुम्हारी महिमाको कौन नहीं तुरत प्राप्त करेगा? कौन नहीं तुम्हारा धन प्राप्त करेगा?

९ जितने प्राचीन ऋषि हो गये हैं और जितने नवीन हैं, सभी तुम्हारे लिये स्तोत्र उत्पन्न करते हैं। हमारे लिये तुम्हारा सख्य मङ्गलमय हो। तुम हमें सदा स्वस्ति द्वारा पालन करो।



१ अन्नकी इच्छासे सारे स्तोत्र कहे गये हैं। वसिष्ठ, तुम भी यज्ञमें इन्द्रकी स्तुति करो। बल द्वारा उन्होंने सारे लोकोंको व्याप्त किया था। मैं उनके पास जानेकी इच्छा करता हूँ। वह मेरे स्तुतिवचनका श्रवण करें।

२ जिस समय ओषधियाँ बढ़ती हैं, उस समय देवोंके लिये प्रिय शब्द कहे जाते हैं। मनुष्योंमें कोई भी तुम्हारी आयु नहीं जान सकता। हमें सारे पापोंके पार ले जाओ।

युजे रथं गवेषणं हरिभ्यामुप ब्रह्माणि जुजुषाणमस्थुः ।
वि बाधिष्ट स्य रोदसी महित्वेन्द्रो वृत्राण्यप्रती जघन्वान् ॥३॥
आपश्चित् पिप्युः स्तर्यो न गावो नक्षन्नृतं जरितारस्त इन्द्र ।
याहि वायुर्न नियुतो नो अच्छा त्वं हि धीभिर्दयसे वि वाजान् ॥४॥
ते त्वा मदा इन्द्र मादयन्तु शुष्मिणं तुविराधसं जरित्रे ।
एको देवत्रा दयसे हि मर्तानस्मिञ्छूर सवने मादयस्व ॥५॥
एवेदिन्द्रं वृषणं वज्रबाहुं वसिष्ठासो अभ्यर्चन्त्यर्कैः ।
स नः स्तुतो वीरवद्धातु गोमद्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥६॥

२४ सूक्त

इन्द्र देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

योनिष्ट इन्द्र सदने अकारि तमा नृभिः पुरुहूत प्रयाहि ।
असो यथा नोऽविता वृधे च ददो वसूनि ममदश्च सोमैः ॥१॥

---

३ मैं हरि नामके दोनों अश्वोंके द्वारा इन्द्रके गोप्रापक रथको जोतता हूँ । इन्द्र स्तोत्रोंकी सेवा करते हैं । सबलोग उनकी उपासना करते हैं । उन्होंने अपनी महिमासे द्यावापृथिवीको बाधित किया है । इन्द्रने शत्रुओंके दलोंका नाश किया है ।

४ इन्द्र, अप्रसूता गायकी तरह जल बढ़े । तुम्हारे स्तोता जल व्याप्त करें । जैसे वायु नियुत् (अश्व) के पास आता है, वैसे ही तुम मेरे निकट आओ । कर्म द्वारा तुम अन्न प्रदान करो ।

५ इन्द्र, मदकारी सोम तुम्हें मत्त करें । स्तोताको बलवान् और बहुधनवान् पुत्र दान करो । शूर, देवोंमें तुम्हें अकेले मनुष्योंके प्रति अनुकम्पा प्रदर्शित करते हो । इस यज्ञमें प्रमत्त होओ ।

६ वसिष्ठ लोग इसी प्रकार अर्चनीय स्तोत्र द्वारा वज्रबाहु अभीष्टवर्षी इन्द्रकी पूजा करते हैं । स्तुत होकर वह हमें वीर और गौसे युक्त धन दें । तुम हमें सदा स्वस्ति द्वारा पालन करो ।

१ तुम्हारे गृहके लिये स्थान किया गया है । पुरुहुत इन्द्र, मरुतोंके साथ वहाँ आओ । जैसे तुम हमारे रक्षक हुए हो, जैसे तुम हमारी वृद्धिके लिये हुए हो, वैसे ही धन दो । हमारे सोमके द्वारा मत्त होओ ।

गृभीतं ते मन इन्द्र द्विबर्हाः सुतः सोमः परिषिक्ता मधूनि ।
विसृष्टधेना भरते सुवृक्तिरियमिन्द्रं जोहुवती मनीषा ॥२॥
आ नो दिव आ पृथिव्या ऋजीषिन्निदं बर्हिः सोमपेयाय याहि ।
वहन्तु त्वा हरयो मद्र्यञ्चमाङ्गूषमच्छा तवसं मदाय ॥३॥
आ नो विश्वाभिरूतिभिः सजोषा ब्रह्म जुषाणो हर्यश्व याहि ।
वरीवृजत् स्थविरेभिः सुशिप्रास्मेदधद्वृषणं शुष्ममिन्द्र ॥४॥
एषः स्तोमो मह उग्राय वाहे धुरी वात्यो न वाजयन्नधायि ।
इन्द्र त्वायमर्क ईट्टे वसूनां दिवीव द्यामधि नः श्रोमतन्धाः ॥५॥
एवा न इन्द्र वार्यस्य पूर्धि प्र ते महीं सुमतिं वेविदाम ।
इषं पिन्व मघवद्भ्यः सुवीरां यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥६॥



२ इन्द्र, तुम दोनों स्थानोंमें पूज्य हो। हमने तुम्हारे मनको ग्रहण किया है। सोमका हमने अभिषव किया है। हमने मधुको पात्रमें परिषिक्त किया है। मध्यम स्वरमें कही जानेवाली यह सुनमात स्तुति बार-बार इन्द्रकी आह्वान करके उच्चारित होती है।

३ इन्द्र, तुम हमारे इस यज्ञमें सोमपानके लिये स्वर्ग और अन्तरीक्षसे आओ; और, आनन्दके लिये, हमारे पास, अश्वगण स्त्रोत्रकी ओर ले जायँ।

४ हरि अश्व और शोभन हनुवाले इन्द्र, तुम सब प्रकारकी रक्षाओंके साथ वृद्ध मरुतोंके सङ्ग शत्रुओंको मारते हुए हमें अभीष्टवर्षी तथा बलवान् पुत्र देते हुए एवम् स्तोत्र-सेवा करते हुए, हमारी ओर आओ।

५ रथके घोड़ेकी तरह यह बलकर्त्ता मन्त्र महान् और ओजस्वी इन्द्रको लक्ष्य कर स्थापित हुआ है। इन्द्र, स्तोता तुमसे धन माँगता है। तुम हमें आकाशके स्वर्गकी तरह श्रीमान् पुत्र प्रदान करो।

६ इन्द्र, इस प्रकार तुम हमें वरणीय धनसे परिपूर्ण करो। हम तुम्हारा महान् अनुग्रह प्राप्त करेंगे। हम हव्यवाले हैं। हमें वीर पुत्रवाला अन्न दो। तुम हमें सदा स्वस्ति द्वारा पालन करो।



२५ सूक्त

इन्द्र देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

आ ते मह इन्द्रोत्युग्र समन्यवो यत्समरन्त सेनाः ।
पताति दिद्युन्नर्यस्य बाह्वोर्मा ते मनो विष्वद्र्यग्वि चारीत् ॥१॥
नि दुर्ग इन्द्र श्नथिह्यमित्रानभि ये नो मर्तासो अमन्ति ।
आरे तं शंसं कृणुहि निनित्सोरा नो भर सम्भरणं वसूनाम् ॥२॥
शतं ते शिप्रिन्नूतनयः सुदासे सहस्रं शंसा उत रातिरस्तु ।
जहि वधर्वनुषो मर्त्यस्यास्मे द्युम्नमधि रत्नं च धेहि ॥३॥
त्वावतो हीन्द्र क्रत्वे अस्मि त्वावतोऽवितुः शूर रातौ ।
विश्वेदहानि तविषीव उग्रँ ओकः कृणुष्व हरिवो न मर्धीः ॥४॥
कुत्सा एते हर्यश्वाय शूषमिन्द्रे सहो देवजूतमियानाः ।
सत्रा कृधि सुहना शूर वृत्रा वयं तरुत्राः सनुयाम वाजम् ॥५॥

---

१ ओजस्वी इन्द्र, तुम महान् और मनुष्य-हितैषी हो । तुम्हारी सेनाएँ समान हैं—ऐसा अभिमान कर जब युद्ध किया जाता है, तब तुम्हारा हस्त-स्थित वज्र हमारे त्राणके लिये पतित हो। तुम्हारा सर्वतोगामी मन विचलित न हो।

२ इन्द्र, युद्धमें जो मनुष्य हमारे सामने आकर हमारा अभिभव करते हैं, वही शत्रुओंका विनाश करते हैं । जो हमारी निन्दा करनेकी इच्छा करते हैं, उनकी कथा दूर कर दो । हमारे लिये सम्पत्तियाँ लाओ।

३ उष्णीष (चादर) वाले इन्द्र, मुझ सुदासके लिये तुम्हारी सैकड़ो रक्षाएँ हों। तुम्हारी सैकड़ो अभिलाषाएँ और धन मेरे हों। हिंसकके हिंसा-साधन हथियारोंको विनष्ट करो। हमारे लिये दीप्त यश और रत्न दो।

४ इन्द्र, मैं तुम्हारे समान व्यक्तिके कर्ममें नियुक्त हूँ । तुम्हारे समान रक्षक व्यक्तिके दानमें नियुक्त हूँ । बलवान् और ओजस्वी इन्द्र, सारे दिन हमारे लिये स्थान बनाओ। हरिवाले इन्द्र, हमारी हिंसा नहीं करना।

एवा न इन्द्रवार्यस्य पूर्धि प्र ते मह सुमतिं वेविदाम ।
इषं पिन्व मघवद्भ्यः सुवीरां यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥६॥



२६ सूक्त

इन्द्र देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

न सोम इन्द्रमसुतो ममाद नाब्रह्माणो मघवानं सुतासः ।
तस्मा उक्थं जनये यज्जुजोषन्नृवन्नवीयः शृणवद्यथा नः ॥१॥
उक्थउक्थे सोम इन्द्रं ममाद नीथेनीथे मघवानं सुतासः ।
यदीं सबाधः पितरं न पुत्राः समानदक्षा अवसे हवन्ते ॥२॥
चकार ता कृणवन्नूनमन्या यानि ब्रुवन्ति वेधसः सुतेषु ।
जनीरिव पतिरेकः समानो नि मामृजे पुर इन्द्रः सु सर्वाः ॥३॥

---

५ हम हर्यश्व इन्द्रके लिये सुखकर स्तोत्र कहते हुए और इन्द्रसे देव-प्रेरित बलकी याचना करते हुए, सारे दुर्गोंको लाँघ कर, बल प्राप्त करेंगे। हम हविवाले हैं। हमें वीर पुत्रवाला अन्न दो। तुम हमें सदा स्वस्ति (कल्याण) द्वारा पालन करो।



१ जो सोम धनाधिपति इन्द्रके लिये अभिषुत नहीं है, उससे तृप्ति नहीं होती। अभिषुत होनेपर भी स्तोत्र-हीन सोम तृप्तिकर नहीं होता। हमलोगोंका जो उक्थ इन्द्रकी सेवा करता है और राजा जिसे श्रवण करता है, उसी नवीन उक्थका पाठ, इन्द्रके लिये, मैं करता हूँ।

२ प्रत्येक उक्थ-स्तुति-पाठ-कालमें सोम धनवान् इन्द्रको तृप्त करता है। प्रत्येक स्तोत्र-पाठ-कालमें अभिषुत सोम इन्द्रको तृप्त करता है। जैसे पुत्र पिताको बुलाता है, वैसे ही, रक्षाके लिये, परस्पर मिलित और समान उत्साहवाले ऋत्विक् लोग इन्द्रको बुलाते हैं।

३ सोमके अभिषुत होनेपर स्तोता लोग जिन सब कर्मोंकी बातें कहते हैं, उस सारे कर्मोंको, प्राचीन कालमें, इन्द्रने किया था। इस समय अन्य कर्म भी करते हैं। जैसे पति पत्नीका परिमार्जन करता है, वैसे ही समवृत्ति और सहायक-शून्य इन्द्रने शत्रु-नगरियोंका परिमार्जन (संशोधन) किया था।

एवा तमाहुरुत शृण्व इन्द्र एको विभक्ता तरणिर्मघानाम् ।
मिथस्तुर ऊतयो यस्य पूर्वीरस्मे भद्राणि सश्चत प्रियाणि ॥४॥
एवा वसिष्ठ इन्द्रमूतये नॄन् कृष्टीनां वृषभं सुते गृणाति ।
सहस्रिण उप नो माहि वाजान् यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥५॥

२७ सूक्त

इन्द्र देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

इन्द्रं नरो नेमधिता हवन्ते यत्पार्या युनजते धियस्ताः ।
शूरो नृषाता शवसश्चकान आ गोमति व्रजे भजा त्वं नः ॥१॥
य इन्द्र शुष्मो मघवन्ते अस्ति शिक्षा सखिभ्यः पुरुहूत नृभ्यः ।
त्वं हि दृढ़हा मघवन्विचेता अपा वृधि परिवृतं न राधः ॥२॥
इन्द्रो राजा जगतश्चर्षणीनामधि क्षमि विषुरूपं यदस्ति ।
ततो ददाति दाशुषे वसूनि चोदद्राध उपस्तुतश्चिदर्वाक् ॥३॥

---

४ परस्परमिली इन्द्रकी अनेक रक्षाएँ हैं— ऋत्विकोंने इन्द्रके बारेमें ऐसा कहा है । यह भी सुना जाता है कि, इन्द्र पूजनीय धनको देनेवाले और आपद्से उद्धार करनेवाले हैं । उनकी कृपासे हमें प्रीतिप्रद कल्याण आश्रित करें ।

५ रक्षाके लिये और प्रजाके अभीष्ट-वर्षणके लिये सोमाभिषवमें वसिष्ठ इन्द्रकी ऐसी स्तुति करते हैं । इन्द्र, हमें नाना प्रकारके अन्न दो । तुम हमें सदा स्वस्ति द्वारा पालन करो ।

१ जिस समय युद्धकी तैयारीके कार्य किये जाते हैं, उस समय लोग युद्धमें इन्द्रको बुलाते हैं । इन्द्र, तुम मनुष्योंके लिये धनदाता और बलाभिलाषी होकर हमें गो-पूर्ण गोष्ठमें ले जाओ ।

२ पुरुहूत इन्द्र, तुम्हारे पास जो बल है, उसे स्तोताओंको दो । इन्द्र, तुमने सुदृढ़ पुरियोंको छिन्न-भिन्न किया है; इसलिये, प्रज्ञाका प्रकाश करते हुए, छिपाये धनको प्रकट कर दो ।

३ इन्द्र जङ्गम जगत् और मनुष्योंके राजा हैं । पृथिवीमें तरह-तरहके जो धन हैं, उनके भी राजा इन्द्र ही हैं । इन्द्र हव्यदाताको धन देते हैं । वही इन्द्र हमारे द्वारा स्तुत होकर हमारे सामने धन भेजें ।

नू चिन्न इन्द्रो मघवा सहूति दानो वाजन्नियमते नऊती ।
अनूना यस्य दक्षिणा पीपाय वामं नृभ्यो अभिवीता सखिभ्यः ॥४॥
नू इन्द्र राये वरिवस्कृधी न आ ते मनो ववृत्याम मघाय ।
गोमदश्वावद्रथवद्व्यन्तो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥५॥



२८ सूक्त

इन्द्र देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

ब्रह्माण इन्द्रोप याहि विद्वानर्वाञ्चस्ते हरयः सन्तु युक्ताः ।
विश्वे चिद्धि त्वा विहवन्त मर्ता अस्माकमिच्छृणुहि विश्वमिन्व ॥१॥
हवं त इन्द्र महिमा व्यानड्ब्रह्म यत्पासि शवसिन्नृषीणाम् ।
आ यद्वज्रं दधिषे हस्त उग्र घोरः सन्क्रत्वा जनिष्ठा अषाढ्हः ॥२॥
तव प्रणीतीन्द्र जोहुवानान्त्सं यन्नॄन्न रोदसी निनेथ ।
महे क्षत्राय शवसे हि जज्ञेऽतूतुजिं चित्तूतुजिरशिश्नत् ॥३॥

४ धनी और दानी इन्द्रको हमने, मरुतोंके साथ, बुलाया है; इसलिये वह हमारी रक्षाके लिये शीघ्र अन्न भेजें। यह इन्द्र ही सखाओंको जो सम्पूर्ण और सर्वव्यापी दान करते हैं, वही मनुष्योंके लिये मनोहर धन दूहता है।

५ इन्द्र, धन-प्राप्तिके लिये शीघ्र हमें धन दो। पूज्य स्तुति द्वारा हम तुम्हारे मनको खींच लेंगे। तुम गौ, अश्व, रथ और धनवाले हो। तुम सदा हमें स्वस्ति द्वारा पालन करो।

---

१ इन्द्र, तुम जानकर हमारे स्तोत्रकी ओर आओ। तुम्हारे घोड़े हमारे सामने जोते जायँ। सबके हर्षकारी इन्द्र, यद्यपि अलग-अलग सारे मनुष्य तुम्हें बुलाते हैं, तथापि तुम हमारा ही आह्वान सुनते हो।

२ बली इन्द्र, जिस समय तुम ऋषियोंके स्तोत्रोंकी रक्षा करते हो, उस समय तुम्हारी महिमा स्तोताको व्याप्त करे। ओजस्वी इन्द्र, जिस समय हाथमें वज्र धारण करते हो, उस समय कर्म द्वारा भयङ्कर होकर शत्रुओंके लिये दुर्द्धर्ष हो जाते हो।

३ इन्द्र, तुम्हारे उपदेशके अनुसार जो लोग बार-बार स्तव करते हैं, उन्हें द्युलोक और भूलोकमें सुप्रतिष्ठित करते हो। तुम महाबल और महाधनके लिये उत्पन्न हुए हो; इसलिये जो तुम्हारे उद्देशसे यज्ञ करता है, वह अयाज्ञिकोंको मारनेमें समर्थ होता है।

एभिर्न इन्द्राहभिर्दशस्य दुर्मित्रासो हि क्षितयः पवन्ते ।
प्रति यच्चष्टे अनृतमनेना अव द्विता वरुणो मायी नः सात् ॥४॥
वोचेमेदिन्द्रं मघवानमेनं महो रायो राधसो यद्दन्नः ।
यो अर्चतो ब्रह्मकृतिमविष्ठो यूयम्पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥५॥



२९ सूक्त

इन्द्र देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

अयं सोम इन्द्र तुभ्यं सुन्व आ तु प्र याहि हरिवस्तदोकाः।
पिबा त्वस्य सुषुतस्य चारोर्ददो मघानि मघवन्नियानः ॥१॥
ब्रह्मन्वीर ब्रह्मकृतिं जुषाणोऽर्वाचीनो हरिभिर्याहि तूयम् ।
अस्मिन्नूषु सवने मादयस्वोप ब्रह्माणि श्रृणव इमा नः ॥२॥
का ते अस्त्यरङ्कृतिः सूक्तैः कदा नूनं ते मघवन् दाशेम ।
विश्वा मतीरा ततने त्वायाधा म इन्द्र श्रृणवो हवेमा ॥३॥

---

४ इन्द्र, दुष्ट मित्रभूत मनुष्य आते हैं। उनसे धन लेकर इन सारे दिनोंमें हमें दान करो। पाप-घातक और बुद्धिमान् वरुण हमारे सम्बन्धमें जो पाप देख पावें, उसे दो तरहसे छुड़ावें।

५ जिन इन्द्रने हमें भली भाँति आराध्य महाधन दिया है और जो स्तोताके स्तोत्र-कार्यकी रक्षा करते हैं, उन धनी इन्द्रकी हम स्तुति करते हैं। तुम हमें सदा स्वति द्वारा पालन करो।



१ इन्द्र, तुम्हारे लिये यह सोम अभिषुत हुआ है। हरि अश्ववाले इन्द्र, उस सोमकी सेवाके लिये तुरत आओ। भली भाँति अभिषुत चारु सोमका पान करो। इन्द्र, हम याचना करते हैं, हमें धन दो।

२ हे ब्रह्मन् और वीर इन्द्र, स्तोत्र-कार्यका सेवन करते हुए अश्वोंपर सवार होकर शीघ्र हमारी ओर आओ। इस यज्ञमें ही भली भाँति प्रसन्न होओ। हमारे इन स्तोत्रोंको सुनो।

३ इन्द्र, हम जो सूक्तों द्वारा तुम्हारी स्तुति करते हैं, उससे कैसी अलङ्कृति (शोभा) होती है? हम कब तुम्हारी प्रसन्नता उत्पन्न करें? तुम्हारी अभिलाषासे ही मैं सारी स्तुति करता हूँ; इसलिये, हे इन्द्र, मेरी ये स्तुतियां सुनो।

उतो घा ते पुरुष्या इदासन्येषां पूर्वेषामश्रृणोॠ षीणाम् ।
अधाहं त्वा मघवञ्जोहवीमि त्वं न इन्द्रासि प्रमतिः पितेव ॥४॥
वोचेमेदिन्द्रं मघवानमेनं महो रायो राधसो यद्दन्नः ।
यो अर्चतो ब्रह्मकृतिमविष्ठो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥५॥



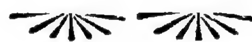
३० सूक्त

इन्द्र देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

आ नो देव शवसा याहि शुष्मिन्भवा वृध इन्द्र रायो अस्य ।
महे नृम्णाय नृपते सुवज्र महि क्षत्राय पौंस्याय शूर ॥१॥
हवन्त उ त्वा हव्यं विवाचि तनूषु शूराः सूर्यस्य सातौ ।
त्वं विश्वेषु सेन्यो जनेषु त्वं वृत्राणि रन्धया सुहन्तु ॥२॥
अहा यदिन्द्र सुदिना व्युच्छान्दधो यत् केतुमुपमं समत्सु ।
न्य ग्निः सीददसुरो न होता हुवानो अत्र सुभगाय देवान् ॥३॥

४ इन्द्र, तुमने जिन सब ऋषियोंकी स्तुति सुनी है, वे प्राचीन ऋषि लोग मनुष्योंके हितैषी थे। फलतः मैं तुम्हारा बार-बार आह्वान करता हूँ। इन्द्र, पिताकी तरह तुम हमारे हितैषी हो।

५ जिन इन्द्रने हमें भली भाँति आराध्य महाधन दिया है और जो स्तोताके स्तोत्रकार्यकी रक्षा करते हैं, उन धनी इन्द्रकी हम स्तुति करते हैं। तुम हमें सदा स्वस्ति द्वारा पालन करो।



१ बली और ज्योतिष्मान् इन्द्र, बलके साथ हमारे पास आओ। हमारे धनके वर्द्धक बनो। सुवज्र और नृपति इन्द्र, महाबली होओ और शत्रुमारक महापुरुषत्व प्राप्त करो।

२ इन्द्र, तुम आह्वानके योग्य हो। महाकोलाहलके समय शरीर-रक्षाके लिये और सूर्यको पानेके लिये लोग तुम्हें बुलाते हैं। सब मनुष्योंमें तुम्हीं सेनाके योग्य हो। सुहन्त नामके वज्र द्वारा शत्रुओंको हमारे अधिकारमें करो।

३ इन्द्र, जब दिन अच्छे होते हैं, जब तुम अपनेको युद्धके समीपवर्त्ती जानते हो, तब होताग्नि, हमें उत्तम धन देनेके लिये, देवोंको बुलाते हुए, इस यज्ञमें बैठते हैं।

वयं ते त इन्द्र ये च देव स्तवन्त शूर ददतो मघानि ।
यच्छा सूरिभ्य उपमं वरूथं स्वाभुवो जरणामश्नवन्त ॥४॥

वोचेमेदिन्द्रं मघवानमेनं महो रायो राधसो यद्दन्नः ।
यो अर्चतो ब्रह्मकृतिमविष्ठो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥५॥



३१ सूक्त

इन्द्र देवता । वसिष्ठ ऋषि । विराट्, गायत्री और त्रिष्टुप् छन्द ।

प्र व इन्द्राय मादनं हर्यश्वायगायत । सखायः सोमपाव्ने ॥१॥

शंसेदुक्थं सुदानव उत द्युक्षं यथा नरः । चकृमा सत्यराधसे ॥२॥

त्वं न इन्द्र वाजयुस्त्वं गव्युः शतक्रतो । त्वं हिरण्ययुर्वसो ॥३॥

वयमिन्द्र त्वायवोभि प्रणोनुमो वृषन् । विद्धीत्व स्य नो वसो ॥४॥

मा नो निदे च वक्तवेऽर्यो रन्धीरराव्णे । त्वे अपि क्रतुर्मम ॥५॥

---

४ इन्द्र, हम तुम्हारे हैं। जो तुम्हें पूजनीय हव्य देते हुए स्तुति करते हैं, वह भी तुम्हारे ही हैं। उन्हें श्रेष्ठ गृह दो। वे सुसमृद्ध होकर बूढ़े होने पावें।

५ जिन इन्द्रने हमें भली भाँति आराध्य महाधन दिया है और जो स्तोताके स्तोत्र-कार्यकी रक्षा करते हैं, उन्हीं धनी इन्द्रकी हम स्तुति करते हैं। तुम सदा हमें स्वस्ति द्वारा पालन करो।



१ सखा लोग, तुम लोग हर्यश्व और सोमपायी इन्द्रके लिये मदकर स्तोत्र गाओ।

२ शोभन-दानी और सत्यधन इन्द्रके लिये जैसे स्तोता दीप्त स्तोत्र पाठ करता है, वैसे ही तुम भी करो; हम भी करेंगे।

३ इन्द्र, तुम हमारे लिये अन्नाभिलाषी होओ। सौ यज्ञ करने वाले इन्द्र तुम हमारे लिये गो-कामी होओ। हे वास-दाता इन्द्र, तुम हिरण्य-दाता होओ।

४ अभीष्ट-वर्षक इन्द्र, तुम्हारी इच्छा करके हम विशेष रूपसे स्तुति करते हैं। वासप्रद इन्द्र, तुम शीघ्र हमारी स्तुतिका अवधारण करो।

५ आर्य इन्द्र, जो कठोर वचन बोलता है जो निन्दा करता है और जो दान नहीं करता, उसके वशमें हमें नहीं करना। मेरा स्तोत्र तुम्हारे ही पास जाय।

त्वं वर्मासि सप्रथः पुरोयोधश्च वृत्रहन् । त्वया प्रति ब्रुवे युजा ॥६॥

महाँ उतासि यस्य तेऽनु स्वधावरी सहः । मम्नाते इन्द्र रोदसी ॥७॥

तं त्वा मरुत्वती परि भुवद्वाणी सयावरी । नक्षमाणा सह द्युभिः ॥८॥

ऊर्ध्वासस्त्वान्विन्दवो भुवन्दस्ममुप द्यवि । सन्ते नमन्त कृष्टयः ॥९॥

प्र वो महे महिवृधे भरध्वं प्रचेतसे प्र सुमतिं कृणुध्वम् ।

विशः पूर्वीः प्र चरा चर्षणिप्राः ॥१०॥

उरुव्यचसे महिने सुवृक्तिमिन्द्राय ब्रह्म जनयन्त विप्राः ।

तस्य व्रतानि न मिनन्ति धीराः ॥११॥

इन्द्रं वाणीरनुत्तमन्युमेव सत्रा राजानं दधिरे सहध्यै ।

हर्यश्वाय बर्हया समापीन् ॥१२॥



६ वृत्रघातक इन्द्र, तुम हमारे कवच हो । तुम सर्वत्र प्रसिद्ध हो । तुम सम्मुख युद्ध करनेवाले हो । तुम्हारी सहायतासे मैं शत्रु-वध करूँगा ।

७ अन्नवाली द्यावापृथिवीको जिन इन्द्रके बलका लोहा मानना है, वह तुम इन्द्र, महान् हुए हो ।

८ इन्द्र, तुम्हारी सहचरी, तेजोयुक्ता और स्तोतृ-सम्पन्ना स्तुति तुम्हें चारों ओरसे ग्रहण करे ।

९ तुम स्वर्गके पास स्थित और दर्शनीय हो । हमारे सब सोम तुम्हारे उद्देशसे उद्यत हैं । सती प्रजा तुम्हें नमस्कार करती है ।

१० मेरे पुरुषो, तुम महाधनके वर्द्धक हो । महान् इन्द्रके उद्देशसे सोम बनाओ । प्रकृष्ट-बुद्धिको लक्ष्य कर प्रकृष्ट स्तुति करो । प्रजाओंके अभिलाषापूरक तुम उन लोगोंके अभिमुख आगमन करो, जो तुम्हें हव्य द्वारा पूर्ण करते हैं ।

११ जो इन्द्र अतीव व्यापक और महान् हैं, उन्हें लक्ष्य कर मेधावी लोग स्तुति और हव्यका उत्पादन करते हैं । उन इन्द्रके व्रत आदि कर्मोंको धीर लोग हिंसित नहीं कर सकते ।

१२ सब प्रकारसे सारे जगत्के ईश्वर और अबाधित-क्रोध इन्द्रकी सारी स्तुतियाँ शत्रुओंको दबानेके लिये हैं । इसलिये हे स्तोता, इन्द्रकी स्तुतिके लिये बन्धुओंको उत्साहित करो ।



३२ सूक्त

इन्द्र देवता। वसिष्ठ ऋषि। बृहती, सतोबृहती, द्विपदा विराट् छन्द।

मो षु त्वा वाघतश्चनारे अस्मन्नि रीरमन्।
आरात्ताच्चित् सधमादं न आ गहीह वा सन्नुप श्रुधि ॥१॥
इमे हि ते ब्रह्मकृतः सुते सचा मधौ न मक्ष आसते।
इन्द्रे कामं जरितारो वसूयवो रथे न पादमा दधुः ॥२॥
रायस्कामो वज्रहस्तं सुदक्षिणं पुत्रो न पितरं हुवे ॥३॥
इम इन्द्राय सुन्विरे सोमासो दध्याशिरः।
ताँ आ मदाय वज्रहस्त पीतये हरिभ्यां याह्योक आ ॥४॥
श्रवच्छ्रुत्कर्ण ईयते वसूनां नू चिन्नो मर्धिषद्गिरः।
सद्यश्चिद्यः सहस्राणि शता ददन्नकिर्दित्सन्तमा मिनत् ॥५॥
स वीरो अप्रतिष्कुत इन्द्रेण शूशुवे नृभिः।
यस्ते गभीरा सवनानि वृत्रहन्त्सुनोत्या च धावति ॥६॥

---

१ इन्द्र, हमसे दूर यह यजमानगण भी तुम्हारे साथ रमण न करें। तुम दूर रहनेपर भी हमारे यज्ञमें आओ। यहाँ आकर श्रवण करो।

२ जैसे मधुपर मधुमक्षिका बैठती है, वैसे ही स्तोता लोग, तुम्हारे लिये, सोमके तैयार होनेपर, बैठते हैं। जैसे रथपर पैर रखा जाता है, वैसे ही धनकामी स्तोता लोग इन्द्रपर स्तुति समर्पण करते हैं।

३ जैसे पुत्र पिताको बुलाता है, वैसे ही मैं, धनाभिलाषी होकर, सुन्दर दानवाले इन्द्रको बुलाता हूँ।

४ दही-मिले ये सोम इन्द्रके लिये प्रस्तुत हुए हैं। हे वज्रहस्त इन्द्र, आनन्दके लिये उस सोम-पानके निमित्त, अश्वके साथ, यज्ञ-मण्डपकी ओर आओ।

५ याचना सुननेके कर्णवाले इन्द्रके पास हम धनकी याचना करते हैं। वह हमारे वाक्यको सुनें, वाक्य निष्फल न करें। जो इन्द्र, याचना करते ही, तुरत सैकड़ो और सहस्रो दान करते हैं, उन दानाभिलाषी इन्द्रको कोई मना न करे।

६ वृत्रघातक इन्द्र, जो तुम्हारे लिये गभीर सोमका अभिषव करता और तुम्हारा अनुगमन करता है, वह वीर है। उसके विरुद्ध कोई कुछ नहीं बोल सकता। वह परिचारकोंके द्वारा घिरा रहता है।

भवा वरूथं मघवन्मघोनां यत्समजासि शर्धतः ।
वि त्वाहतस्य वेदनं भजेमह्या दूणाशो भरा गयम् ॥७॥
सुनोता सोमपाव्ने सोममिन्द्राय वज्रिणे ।
पचता पक्तीरवसे कृणुध्वमित् पृणन्नित् पृणते मयः ॥८॥
मा स्रेधत सोमिनो दक्षता महे कृणुध्वं राय आतुजे ।
तरणिरिज्जयति क्षेति पुष्यति न देवासः कवत्नवे ॥९॥
नकिः सुदासो रथं पर्यास न रीरमत् ।
इन्द्रो यस्याविता यस्य मरुतो गमत् स गोमति व्रजे ॥१०॥
गमद्वाजं वाजयन्निन्द्र मर्त्यो यस्य त्वमविता भुवः ।
अस्माकं बोध्यविता रथानामस्माकं शूर नृणाम् ॥११॥
उदिन्न्वस्य रिच्यतेऽंशो धनं न जिग्युषः ।
य इन्द्रो हरिवान्न दभन्ति तं रिपो दक्षं दधाति सोमिनि ॥१२॥

७ हे धनवान् इन्द्र, तुम हव्य दाताओंके उपद्रव-निवारक वर्म बनो। उत्साही शत्रुओंका विनाश करो। तुमने जिस शत्रुका विनाश किया है, उसका धन हम बाँट लें। तुम्हें कोई विनष्ट नहीं कर सकता। तुम हमारे लिये धन ले आओ।

८ मेरे पुरुषो, वज्रधर और सोमपाता इन्द्रके लिये सोमका अभिषव करो। इन्द्रकी तृप्तिके लिये पचाये जाने योग्य पुरोडाश आदि पकाओ और किये जाने योग्य कार्यका सम्पादन करो। यजमानको सुख देते हुए इन्द्र हव्यको पूर्ण करते हैं।

९ सोमवाले यज्ञका विनाश नहीं करना। उत्साही बनो। महान् और रिपुघातक इन्द्रको लक्ष्य करके, धन-प्राप्तिके लिये, कर्म करो। क्षिप्र-कर्त्ता व्यक्ति ही विजय करता, निवास करता और पुष्ट होता है। कुत्सित कर्म-कर्त्ताके देवता नहीं हैं।

१० सुन्दर दानवाले व्यक्तिका रथ कोई दूरपर नहीं फेंक सकता और उसे कोई रोक भी नहीं सकता। जिसके रक्षक इन्द्र और मरुद्गण हैं, वह गौओंवाले गोष्ठमें जाता है।

११ इन्द्र, तुम जिस मनुष्यके रक्षक बनोगे, वह स्तोत्र द्वारा तुम्हें बली करते हुए अन्न प्राप्त करेगा। शूर, हमारे रथके रक्षक होओ; हमारे पुत्रादिके भी रक्षक होओ।

१२ जो हरिवाले इन्द्र सोमवाले यजमानको बल देते हैं, उसे शत्रु नहीं मार सकते। विजयी व्यक्तिकी तरह इन्द्रका भाग सभी देवोंसे बढ़ा-चढ़ा है।

मन्त्रमखर्वं सुधितं सुपेशसं दधात यज्ञियेष्वा ।
पूर्वीश्चन प्रसितयस्तरन्ति तं य इन्द्रे कर्मणा भुवत् ॥१३॥
कस्तमिन्द्र त्वावसुमा मर्त्यो दधर्षति
श्रद्धा इत्ते मघवन् पार्ये दिवि वाजी वाजं सिषासति ॥१४॥
मघोनः स्म वृत्रहत्येषु चोदय ये ददति प्रिया वसु ।
तव प्रणीती हर्यश्व सूरिभिर्विश्वा तरेम दुरिता ॥१५॥
तवेदिन्द्रावमं वसु त्वं पुष्यसि मध्यमम् ।
सत्रा विश्वस्य परमस्य राजसि नकिष्ट्वा गोषु वृण्वते ॥१६॥
त्वं विश्वस्य धनदा असि श्रुतो य ईं भवन्त्याजयः ।
तवायं विश्वः पुरुहूत पार्थिवावस्युर्नाम भिक्षते ॥१७॥
यदिन्द्र यावतस्त्वमेतावदहमीशीय ।
स्तोतारमिद्दिधिषेय रदावसो न पापत्वाय रासीय ॥१८॥

---

१३ देवोंमेंसे इन्द्रको ही अनल्प, सुविहित और शोभन स्तोत्र अर्पण करो। जो व्यक्ति कर्मानुष्ठान द्वारा इन्द्रके चित्तको आकृष्ट कर सकता है, उसके पास अनेकानेक बन्धन नहीं जाते।

१४ इन्द्र, तुम जिसे व्याप्त करते हो, उसे कौन दबा सकता है ? धनी इन्द्र, तुम्हारे प्रति श्रद्धा-युक्त होकर जो हविवाला होता है, वह द्युलोक और दिवसमें धन पाता है।

१५ इन्द्र, तुम धनी हो। जो तुम्हें प्रिय धन देते हैं, उन्हें रण-भूमिमें भेजो। हर्यश्व इन्द्र, हम तुम्हारे उपदेशानुसार, स्तोताओंके साथ सारे पापोंके पार जायँगे।

१६ इन्द्र, पृथिवीस्थ (अधम) धन तुम्हारा ही है। अन्तरीक्षस्थ (मध्यम) धन तुम्हारी ही है। तुम सारे उत्तम धनोंके कर्त्ता हो—यह बात सच्ची है। गौके सम्बन्धमें तुम्हें कोई भी नहीं हटा सकता।

१७ इन्द्र, तुम संसारके धनदाता हो। ये सब जो युद्ध होते हैं, उनमें भी आप धनद कहकर प्रसिद्ध हैं। पुरुहूत इन्द्र, रक्षाके लिये, ये सब पार्थिव मनुष्य तुमसे अन्नकी भिक्षा चाहते हैं।

१८ इन्द्र, तुम जितने धनके ईश्वर हो, उतनेके हम भी स्वामी बनें। धनद, मैं स्तोताकी रक्षा करूँगा। पापके लिये मैं धन नहीं दूँगा।

शिक्षेयमिन्महयते दिवेदिवे राय आ कुहचिद्विदे ।
नहि त्वदन्यन्मघवन्न आप्यं वस्यो अस्ति पिता चन ॥१९॥
तरणिरित् सिषासति वाजं पुरन्ध्या युजा ।
आ व इन्द्रं पुरुहूतं नमे गिरा नेमिं तष्टेव सुद्र्वम् ॥२०॥
न दुःष्टुती मर्त्यो विन्दते वसु न स्रेधन्तं रयिर्नशत् ।
सुशक्तिरिन्मघवन्तुभ्यं मावते देष्णं यत्पार्ये दिवि ॥२१॥
अभि त्वा शूर नोनुमोऽदुग्धा इव धेनवः ।
ईशानमस्य जगतः स्वर्दृशमीशानमिन्द्र तस्थुषः ॥२२॥
न त्वा वाँ अन्यो दिव्यो न पार्थिवो न जातो न जनिष्यते ।
अश्वायन्तो मघवन्निन्द्रवाजिनो गव्यन्तस्त्वा हवामहे ॥२३॥
अभी षतस्तदा भरेन्द्र ज्यायः कनीयसः ।
पुरूवसुर्हि मघवन्त्सनादसि भरेभरे च हव्यः ॥२४॥

१९ जिस किसी भी स्थानमें विद्यमान पूजक पुरुषको लक्ष्य कर प्रतिदिन दान करूँगा। इन्द्र, तुम्हारे बिना न तो हमारा कोई बन्धु है, न प्रशंसनीय पिता है ।

२० क्षिप्रकर्म-कारी व्यक्ति ही महान् कर्मके बलसे अन्नका भोग करता है । जैसे विश्वकर्मा (बढ़ई) उत्तम काष्ठवाले चक्रको नवाता है, वैसे ही स्तुति द्वारा पुरुहूत इन्द्रको मैं नवाउँगा ।

२१ मनुष्य दुष्ट स्तुतिसे धन लाभ नहीं कर सकता । हिंसकके पास धन नहीं जाता । धनवान् इन्द्र, द्युलोक और दिनमें मेरे समान मनुष्यके प्रति जो कुछ तुम्हारा दातव्य है, उसे सुन्दर कर्मवाला व्यक्ति ही पा सकता है ।

२२ वीर इन्द्र, तुम इस जङ्गम पदार्थके स्वामी हो। तुम स्थावर पदार्थोंके ईश्वर और सर्वदर्शक हो। हम न दोही गयी गायकी तरह तुम्हारी स्तुति करते हैं ।

२३ धनी इन्द्र, तुम्हारे समान न तो पृथिवीमें कोई जनमा, न जनमेगा । हम अश्व, अन्न और गौ चाहते हैं। तुम्हें बुलाते हैं ।

२४ इन्द्र, तुम ज्येष्ठ हो और मैं कनिष्ठ हूँ । मेरे लिये उस धनको ले आओ। बहुत दिनोंसे तुम प्रभूत-धनी हो और प्रत्येक युद्धमें हव्य लाभके योग्य हो ।

परा णुदस्व मघवन्नमित्रान्त्सुवेदा नो वसू कृधि ।
अस्माकं बोध्यविता महाधने भवावृधः सख नाम् ॥ २५॥
इन्द्र क्रतुं न आ भर पिता पुत्रेभ्यो यथा ।
शिक्षा णो अस्मिन् पुरुहूत यामनि जीवा ज्योतिरशीमहि ॥२६॥
मा नो अज्ञाता वृजना दुराध्यो माशिवासो अव क्रमुः ।
त्वया वयं प्रवतः शश्वतीरपोति शूर तरामसि ॥२७॥



३३ सूक्त

१—९ के वसिष्ठपुत्रगण देवता । १-९ मन्त्रोंके वसिष्ठ ऋषि । शेष मन्त्रोंके वसिष्ठ देवता और वसिष्ठपुत्रगण ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

श्वित्यञ्चो मा दक्षिणतस्कपर्दा धियं जिन्वासो अभि हि प्रमन्दुः ।
उत्तिष्ठन्वोचे परि बर्हिषोनॄन्न मे दूरादवितवे वसिष्ठाः ॥१॥

२५ मघवन्, शत्रुओंको पराङ्मुख करके हटाओ । हमारे लिये धनको सुलभ करो । युद्धमें हमारे रक्षक बनो । हम तुम्हारे सखा हैं । हमारे वर्द्धक बनो ।

२६ इन्द्र, हमारे लिये प्रज्ञान ले आओ । जैसे पिता पुत्रको देता है, वैसे ही तुम हमें धन दो । हम यज्ञके जीव हैं । हम प्रतिदिन सूर्यको प्राप्त करें ।

२७ इन्द्र, अज्ञात-गति, हिंसक, दुराराध्य और अशुभ शत्रु हमें आक्रमण न करें । शूर, हम तुम्हारे निकट नम्र होकर अनेक कार्योंमें उत्तीर्ण होंगे ।



१ श्वेतवर्ण और कर्म-पूरक वसिष्ठ पुत्रगण अपने शिरके दक्षिण भागमें चूड़ा धारण करनेवाले हैं । वे हमें प्रसन्न करते हैं; क्योंकि यज्ञसे उठते हुए मैं सबको कहता हूँ कि, वसिष्ठपुत्रगण मुझसे दूर न जायँ ।

दूरादिन्द्रमनयन्ना सुतेन तिरो वैशन्तमतिपान्तमुग्रम् ।
पाशद्युम्नस्य वायतस्य सोमात् सुतादिन्द्रो वृणीता वसिष्ठान् ॥२॥
एवेन्नु कं सिन्धुमेभिस्ततारेवेन्नु कं भेदमेभिर्जघान ।
एवेन्नु कं दाशराज्ञे सुदासं प्रावदिन्द्रो ब्रह्मणा वो वसिष्ठाः ॥३॥
जुष्टी नरो ब्रह्मणा वः पितृणामक्षमव्ययं न किला रिषाथ ।
यच्छक्वरीषु बृहता रवेणेन्द्रे शुष्ममदधाता वसिष्ठाः ॥४॥
उद्द्यामिवेत्तृष्णजो नाथितासोदीधयुर्दाशराज्ञे वृतासः ।
वसिष्ठस्य स्तुवत इन्द्रो अश्रोदुरुं तृत्सुभ्यो अकृणोदु लोकम् ॥५॥
दण्डा इवेद्गो अजनास आसन् परिच्छिन्ना भरता अर्भकासः ।
अभवच्च पुर एता वसिष्ठ आदित्तृत्सूनां विशो अप्रथन्त ॥६॥

२ वयत्के पुत्र पाशद्युम्नका दूरसे ही तिरस्कार करके चमस-स्थित सोमका पान करते हुए इन्द्रको वसिष्ठपुत्रगण ले आये थे। इन्द्रने भी वयत्के पुत्र पाशद्युम्नको छोड़कर सोमाभिषव करनेवाले वसिष्ठों-को वरण किया था। ❀

३ इसी प्रकार वसिष्ठ पुत्रोंने अनायास ही नदी (सिन्धु) को पार किया था। इसी प्रकार भेद नामके शत्रुका भी इन्होंने विनाश किया था। वसिष्ठपुत्रो, इसी प्रकार प्रसिद्ध "दाशराज्ञयुद्ध" में तुम्हारे ही मन्त्र-बलसे इन्द्रने सुदास राजाकी रक्षा की थी।

४ मनुष्यो, तुम्हारे स्तोत्र (ब्रह्म) से पितरोंकी तृप्ति होती है। मैं रथकी धुरीको चलाता हूँ। तुम क्षीण नहीं होना। वसिष्ठगण, तुमने शक्करी ऋचाओं और श्रेष्ठ शब्द द्वारा इन्द्रका बल पाया था।

५ ज्ञात-तृष्ण राजाओं द्वारा घिरे हुए और वृष्टि-याचक वसिष्ठपुत्रोंने दस राजाओंके साथ संग्राममें, सूर्यकी तरह, इन्द्रको ऊपर उठाया था। स्तोता वसिष्ठका स्तोत्र इन्द्रने सुना था और तृत्सु राजाओंके लिये विस्तृत लोक दिया था।

६ गो-प्रेरक दण्डोंकी तरह (तृत्सुओंके) भरतगण शत्रुओंके बीच ससीम और अल्प-सङ्ख्यक थे। अनन्तर वसिष्ठ ऋषि भरतोंके पुरोहित हुए और तृत्सुओंकी प्रजा बढ़ने लगी।

❀ सायणाचार्यने लिखा है कि, एक समय सुदास राजाके यज्ञ-कार्यमें वसिष्ठगण व्यस्त थे। इसी समय वयत्के पुत्र पाशद्युम्न राजाने भी यज्ञ किया था। जिस समय इन्द्र पाशद्युम्नके यज्ञमें सोम पान कर रहे थे, उसी समय वसिष्ठपुत्र, मन्त्र-बलसे, इन्द्रको उठाकर सुदास राजाके यज्ञमें ले आये थे।

त्रयः कृण्वन्ति भुवनेषु रेतस्तिस्रः प्रजा आर्या ज्योतिरग्राः ।
त्रयो घर्मास उषसं सचन्ते सर्वाँ इत्ताँ अनु विदुर्वसिष्ठाः ॥७॥
सूर्यस्येव वक्षथो ज्योतिरेषां समुद्रस्येव महिमा गभीरः ।
वातस्येव प्रजवो नान्येन स्तोमो वसिष्ठा अन्वेतवे वः ॥८॥
त इन्निण्यं हृदयस्य प्रकेतैः सहस्रवल्शमभि सञ्चरन्ति ।
यमेन ततं परिधिं वयन्तोऽप्सरस उप सेदुर्वसिष्ठाः ॥९॥
विद्युतो ज्योतिः परि सञ्जिहानं मित्रावरुणा यदपश्यतां त्वा ।
तत्ते जन्मोतैकं वसिष्ठागस्त्यो यत्त्वा विश आजभार ॥१०॥
उतासि मैत्रावरुणो वसिष्ठोर्वश्या ब्रह्मन्मनसोऽधि जातः ।
द्रप्सं स्कन्नं ब्रह्मणा दैव्येन विश्वेदेवाः पुष्करे त्वाददन्त ॥११॥

७ अग्नि, वायु और सूर्य ही संसारमें जल देते हैं। उनमें आदित्य आदि तीन श्रेष्ठ आर्य-प्रजा हैं। दीप्तिमान् वे तीनों उषाका वयन करते हैं। वसिष्ठ लोग उन सबको जानते हैं।

८ वसिष्ठ-पुत्रो, तुम्हारी महिमा (वा स्तोम) सूर्यकी ज्योतिकी तरह प्रकाशित होती है। तुम्हारी महिमा समुद्रकी तरह, गम्भीर है। वायु-वेगके समान तुम्हारे स्तोत्रका कोई दूसरा अनुगमन नहीं कर सकता।

९ वे वसिष्ठगण (वसिष्ठ) ज्ञान द्वारा तिरोहित सहस्र शाखाओंवाले संसारमें विचरण करने लगे। वे सर्व-नियन्ता (यम) द्वारा विस्तृत वस्त्र (विश्व-प्रवाह) को बुनते हुए मातृ-रूपसे अप्सराके निकट गये। *

१० वसिष्ठ, विद्युत्की तरह (देह धारण करनेके लिये) अपनी ज्योतिका परित्याग करते हुए तुम्हें मित्र और वरुणने देखा था। उस समय तुम्हारा एक जन्म हुआ। इसकेअ तिरिक्त वासस्थानसे अगस्त्य भी तुम्हें ले आये थे।

११ और, हे वसिष्ठ, तुम मित्र और वरुणके पुत्र हो। हे ब्रह्मन्, तुम उर्वशीके मनसे उत्पन्न हो। उस समय मित्र और वरुणका वीर्य-स्खलन हुआ था। विश्वदेवगणने दैव्य स्तोत्र द्वारा पुष्करके बीच तुम्हें धारण किया था।

* Selected Essays (1881 V. I. P. 405) में मैक्समूलर साहबने यह सिद्ध करनेकी चेष्टा की है कि, वसिष्ठ शब्दका अर्थ सूर्य है और मित्र-वरुणका अर्थ दिन और रात्रि। उर्वशीका अर्थ उषा है। इस प्रकार सूर्य (वसिष्ठ) दिन और रात्रि (मित्र और वरुण) तथा उषा (उर्वशी) से उत्पन्न हुए। परन्तु इन मन्त्रोंमें तो इस कल्पनाका मूलोच्छेद है।

स प्रकेत उभयस्य प्रविद्वान्त्सहस्रदान उत वा सदानः ।
यमेन ततं परिधिं वयिष्यन्नप्सरसः परि जज्ञे वसिष्ठः ॥१२॥
सत्रे ह जाताविषिता नमोभिः कुम्भे रेतः सिषिचतुः समानम् ।
ततो ह मान उदियाय मध्यात्ततो जातमृषिमाहुर्वसिष्ठम् ॥१३॥
उक्थभृतं सामभृतं विभर्ति ग्रावाणं बिभ्रत् प्र वदात्यग्रे ।
उपैनमाध्वं सुमनस्यमाना आ वो गच्छाति प्रतृदो वसिष्ठः ॥१४॥

३ अनुवाक । ३४ सूक्त

विश्वदेवगण देवता । वसिष्ठ ऋषि । द्विपदा, विराट् और त्रिष्टुप् छन्द ।

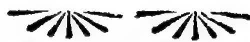
प्र शुक्रैतु देवी मनीषा अस्मत् सुतष्टो रथो न वाजी ॥१॥
विदुः पृथिव्या दिवो जनित्रं शृण्वन्त्यापो अध क्षरन्तीः ॥२॥
आपश्चिदस्मै पिन्वन्त पृथ्वीर्वृत्रेषु शूरा मंसन्त उग्राः ॥३॥

---

१२ प्रकृष्ट ज्ञानवाले वसिष्ठ दोनों लोकोंको (पृथिवी और स्वर्गको) जानकर सहस्रदान वा सर्वदानवाले हुए थे। सर्व-नियन्ता (यम) द्वारा विस्तीर्ण वस्त्र (संसार-प्रवाह) को बुननेकी इच्छासे वसिष्ठ उर्वशीसे उत्पन्न हुए थे।

१३ यज्ञमें दीक्षित मित्र और वरुणने, स्तुति द्वारा प्रार्थित होकर, कुम्भ (वसतीवर कलस) के बीच एक साथ ही रेतः-स्खलन किया था। अनन्तर मान (अगस्त्य) उत्पन्न हुए। लोग कहते हैं कि, ऋषि वसिष्ठ उसी कुम्भसे जनमे थे।

१४ तृत्सुओ, तुम्हारे पास वसिष्ठ आ रहे हैं। प्रसन्न चित्तसे तुम इनकी पूजा करो। वसिष्ठ अग्रवर्ती होकर उक्थ और सोमके धारण-कर्त्ता तथा प्रस्तरसे अभिषव करनेवाले (अध्वर्यु) को धारण करते और कर्त्तव्य भी बताते हैं।



१ दीप्त और अभीष्टप्रद स्तुति, वेगशाली और सुसंस्कृत रथकी तरह, हमारे पाससे देवोंके पास जाय।

२ क्षरण-शील जल स्वर्ग और पृथिवीकी उत्पत्ति जानता है। जल स्तुति सुनता है।

३ विस्तीर्ण जल इन्द्रको आप्यायित करता है। उपद्रव उठनेपर उग्र शूर लोग इन्द्रकी ही स्तुति करते हैं।

आ धूर्ष्वस्मै दधाताश्वानिन्द्रो न वज्री हिरण्यबाहुः ॥४॥
अभि प्र स्थाताहेव यज्ञं यातेव पत्मन्त्मना हिनोत ॥५॥
त्मना समत्सु हिनोत यज्ञं दधात केतुं जनाय वीरम् ॥६॥
उदस्य शुष्माद्भानुर्नार्त बिभर्ति भारं पृथिवी न भूम ॥७॥
ह्वयामि देवाँ अयातुरग्ने साधन्नृतेन धियं दधामि ॥८॥
अभि वो देवीं धियं दधिध्वं प्र वो देवत्रा वाचं कृणुध्वम् ॥९॥
आ चष्ट आसां पाथो नदीनां वरुण उग्रः सहस्रचक्षाः ॥१०॥
राजा राष्ट्राणां पेशो नदीनामनुत्तमस्मै क्षत्रं विश्वायु ॥११॥
अविष्टो अस्मान्विश्वासु विक्ष्वद्युं कृणुत शंसं निनित्सोः ॥१२॥
व्येतु दिद्युद् द्विषामशेवा युयोत विष्वग्रपस्तनूनाम् ॥१३॥
अवीन्नो अग्निर्हव्यान्नमोभिः प्रेष्ठो अस्मा अधायि स्तोमः ॥१४॥

४ इन्द्रके आगमनके लिये अश्वोंको रथके आगे जोतो। इन्द्र वज्रधर और सोनेके हाथवाले हैं।

५ मनुष्यो, यज्ञके सामने गमन करो। गन्ताकी तरह स्वयमेव यज्ञमार्गपर जाओ।

६ मेरे पुरुषो, संग्राममें स्वयमेव जाओ। लोगोंके लिये प्रज्ञापक और पापोंके नाशक यज्ञ करो।

७ इस यज्ञके बलसे ही सूर्य उगते हैं। जैसे पृथिवी जीवोंको ढोती है, वैसे ही यज्ञ भी भार वहन करता है।

८ हे अग्नि, अहिंसा आदि विषयोंसे युक्त यज्ञ द्वारा मनोरथपूर्ण करते हुए मैं देवोंको बुलाता हूँ और उनके लिये कर्म करता हूँ।

९ मनुष्यो, देवोंको लक्ष्य करके दीप्त कर्म करो। देवोंके लिये स्तुति करो।

१० ओजस्वी और अनेक आँखोंवाले वरुण नदियोंके जलको देखते हैं।

११ वरुण राष्ट्रोंके राजा और नदियोंके रूप हैं। उनका बल अप्रतिहत और सर्वत्रगामी है।

१२ देवो, सारी प्रजामें हमारी रक्षा करो। निन्दा करनेकी इच्छावाले शत्रुको दीप्ति-शून्य करो।

१३ शत्रुओंके अमङ्गल-जनक आयुध चारो ओर हट जायँ। देवो, शरीरका पाप हमसे अलग करो।

१४ हव्यभोजी अग्नि हमारे नमस्कारों द्वारा प्रियतम होकर हमारी रक्षा करें। हम अग्निके लिये स्तुति करते हैं।

सजूर्देवेभिरपां नपातं सखायं कृध्वं शिवो नो अस्तु ॥१५॥
अब्जामुक्थैरहिं गृणीषे बुध्ने नदीनां रजःसु षीदन् ॥१६॥
मा नोऽहिर्बुध्न्यो रिषे धान्मा यज्ञो अस्य स्त्रिधदृतायोः ॥१७॥
उत न एषु नृषु श्रवो धुः प्र राये यन्तु शर्धन्तो अर्यः ॥१८॥
तपन्ति शत्रुं स्वर्ण भूमा महासेनासो अमेभिरेषाम् ॥१९॥
आ यन्नः पत्नीर्गमन्त्यच्छा त्वष्टा सुपाणिर्दधातु वीरान् ॥२०॥
प्रति नः स्तोमन्त्वष्टा जुषेत स्यादस्मे अरमतिर्वसूयुः ॥२१॥
ता नो रासन्रातिषाचो वसून्या रोदसी वरुणानी शृणोतु ।
वरूत्रीभिः सुशरणो नो अस्तुत्वष्टा सुदत्रो विदधातु रायः ॥२२॥
तन्नो रायः पर्वतास्तन्न आपस्तद्रातिषाच ओषधीरुत द्यौः ।
वनस्पतिभिः पृथिवी सजोषा उभे रोदसी परि पासतो नः ॥२३॥

---

१५ देवोंके सहचर अग्निको सखा बनाओ । वह हमारे लिये मङ्गलकर हों ।

१६ मेघोंके घातक, नदी-स्थान (जल)में बैठे हुए और जलसे उत्पन्न अग्निकी स्तोत्र द्वारा स्तुतिकी जाती है।

१७ अहिर्बुध्न्य (अग्नि) हमें हिंसकके हाथमें समर्पण नहीं करें। याज्ञिकका यज्ञ क्षीण न हो।

१८ देवतालोग हमारे लोगोंके लिये अन्न धारण करते हैं। धनके लिये उत्साही शत्रु मर जायँ।

१९ जैसे सूर्य सारे भुवनोंको तप्त करते हैं, वैसे ही महासेनावाले राजालोग देवोंके बलसे शत्रुओं-को ताप देते हैं।

२० जिस समय देव-स्त्रियाँ हमारे सामने आती हैं, उस समय उत्तम हाथवाले त्वष्टा हमें वीर पुत्र प्रदान करें।

२१ त्वष्टा हमारे स्तोत्रोंकी सेवा करते हैं। पर्याप्त-बुद्धि त्वष्टा हमारे धनाभिलाषी हों।

२२ दान-निपुण देव-पत्नियाँ हमारा मनोरथ हमें प्रदान करें। द्यावापृथिवी और वरुण-पत्नी भी श्रवण करें। कल्याण कर और दान-शील त्वष्टा, उपद्रव-निवारिणी देव-स्त्रियोंके साथ, हमारे लिये शरण्य हों।

२३ हमारे उस धनका पालन पर्वतगण करें। सारे जल भी हमारे उस धनका पालन करें। दान-परायणा देव-पत्नियाँ भी उसका पोषण करें। ओषधियाँ और द्युलोक भी पालन करें। वनस्पतियों साथ अन्तरीक्ष भी उसका पालन करें। द्यावापृथिवी हमारी रक्षा करें।

अनु तदुर्वी रोदसी जिहातामनु द्युक्षो वरुण इन्द्रसखा ।
अनु विश्वे मरुतो ये सहासो रायः स्याम धरुणं धियध्यै ॥२४॥
तन्न इन्द्रो वरुणो मित्रो अग्निराप ओषधीर्वनिनो जुषन्त ।
शर्मन्त्स्याम मरुतामुपस्थे यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥२५॥



३५ सूक्त

विश्वदेवगण देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द। *

शं न इन्द्राग्नी भवतामवोभिः शं न इन्द्रावरुणा रातहव्या।
शमिन्द्रासोमा सुविताय शं योः शं न इन्द्रापूषणा वाजसातौ ॥१॥
शं नो भगः शमु नः शंसो अस्तु शं नः पुरन्धिः शमु सन्तु रायः।
शं नः सत्यस्य सुयमस्य शंसः शं नो अर्यमा पुरुजातो अस्तु ॥२॥

---

२४ हम धारणीय धनके आश्रय होंगे। विस्तृत द्यावापृथिवी उसका अनुमोदन करें। दीप्तिके आधार इन्द्र और सखा वरुण भी उसका समर्थन करें। पराजय करनेवाले मरुद्गण भी अनुमोदन करें।

२५ इन्द्र, वरुण, मित्र, अग्नि, जल, ओषधियाँ और वृक्ष भी, हमारे लिये, इस स्तोत्रका सेवन करें। मरुतोंके पास निवास कर हम सुखसे रहेंगे। तुम सदा हमें स्वस्ति द्वारा पालन करो।



१ इन्द्र और अग्नि, हमारे लिये रक्षण द्वारा शान्तिप्रद होओ। इन्द्र और वरुण, यजमानने हव्य प्रदान किया है। तुमलोग हमारे लिये शान्तिप्रद होओ। इन्द्र और सोम हमारे लिये शान्ति और कल्याण देनेवाले हों। इन्द्र और पूषा हमारे लिये शान्ति और सुख दें।

२ भग देवता हमारे लिये शान्ति दें। हमारे लिये नराशंस शान्तिप्रद हों। हमारे लिये पुरन्धि शान्तिप्रद हों। सारे धन हमारे लिये शान्तिप्रद हों। उत्तम और यम-युक्त सत्यका वचन हमारे लिये शान्ति दे। बहु बार आविर्भूत अर्यमा हमारे लिये शान्तिदाता हों।

---

* इस सूक्तमें गौ, अश्व, ओषधि, पर्वत, नदी, वृक्ष आदिकी भी अर्चना है।

शं नो धाता शमु धर्ता नो अस्तु शं न उरूची भवतु स्वधाभिः ।
शं रोदसी बृहती शं नो अद्रिः शं नो देवानां सुहवानि सन्तु ॥३॥
शं नो अग्निर्ज्योतिरनीको अस्तु शं नो मित्रावरुणावश्विना शम् ।
शं नः सुकृतां सुकृतानि सन्तु शं न इषिरो अभि वातु वातः ॥४॥
शं नो द्यावापृथिवी पूर्वहूतौ शमन्तरिक्षं दृशये नो अस्तु ।
शं न ओषधीर्वनिनो भवन्तु शं नो रजसस्पतिरस्तु जिष्णुः ॥५॥
शं न इन्द्रो वसुभिर्देवो अस्तु शमादित्येभिर्वरुणः सुशंसः ।
शं नो रुद्रो रुद्रे भिर्जलाषः शं नस्त्वष्टा ग्नाभिरिह शृणोतु ॥६
शं नः सोमो भवतु ब्रह्म शं नः शं नो ग्रावाणः शमु सन्तु यज्ञाः ।
शं नः स्वरूणां मितयो भवन्तु शं नः प्रस्वः शंवस्तु वेदिः ॥७॥
शं नः सूर्य उरुचक्षा उदेतु शं नश्चतस्रः प्रदिशो भवन्तु ।
शं नः पर्वता ध्रुवयो भवन्तु शं नः सिन्धवः शमु सन्त्वापः ॥८॥

---

३ धाता हमारे लिये शान्ति दें। धर्ता वरुण हमारे लिये शान्ति दें। अन्नके साथ पृथिवी हमारे लिये शान्ति दे। महती द्यावापृथिवी हमारे लिये शान्ति दें। पर्वत हमारे लिये शान्ति दें। देवोंकी सारी उत्तम स्तुतियाँ हमें शान्ति दें।

४ ज्वाला-मुख अग्नि हमारे लिये शान्ति दें। मित्र और वरुण हमें शान्ति दें। अश्विनीकुमार हमें शान्ति दें। पुण्यात्माओंके पुण्यकर्म हमें शान्ति दें। गति-शील वायु भी हमारी शान्तिके लिये बहें।

५ प्रथम आह्वानमें द्यावापृथिवी हमारे लिये शान्ति दें। दर्शनार्थ अन्तरीक्ष हमारे लिये शान्ति दे। ओषधियाँ और वृक्ष हमें शान्ति दें। विजय-परायण लोकपति इन्द्र भी हमें शान्ति दें।

६ वसुओंके साथ इन्द्रदेव हमें शान्ति दें। आदित्योंके साथ शोभन स्तुतिवाले वरुण हमें शान्ति दें। रुद्रगणके लिये रुद्रदेव हमें शान्ति दें। देव-स्त्रियोंके साथ त्वष्टा हमें शान्ति दें। यज्ञ हमारा स्तोत्र सुने।

७ सोम हमें शान्ति दे। स्तोत्र हमें शान्ति दे। पत्थर हमें शान्ति द। यज्ञ हमें शान्ति दे। यूपोंका माप हमें शान्ति दें। ओषधियाँ हमें शान्ति दें। वेदी हमें शान्ति दे।

८ विस्तीर्ण-तेजा सूर्य हमारी शान्तिके लिये उदित हों। चारो महादिशाएँ हमें शान्ति दें। स्थिर पर्वत हमें शान्ति दें। नदियाँ हमें शान्ति दें। जल हमें शान्ति दे।

शं नोऽदितिर्भवतु व्रतेभिः शं नो भवन्तु मरुतः स्वर्काः ।
शं नो विष्णुः शमु पूषा नो अस्तु शं नो भवित्रं शंवस्तु वायुः ॥९॥
शं नो देवः सविता त्रायमाणः शं नो भवन्तूषसो विभातीः ।
शं नः पर्जन्यो भवतु प्रजाभ्यः शं नः क्षेत्रस्य पतिरस्तु शंभुः ॥१०॥
शं नो देवा विश्वदेवा भवन्तु शं सरस्वती सह धीभिरस्तु ।
शमभिषाचः शमु रातिषाचः शं नो दिव्याः पार्थिवाः शं नो अप्याः ॥११॥
शं नः सत्यस्य पतयो भवन्तु शं नो अर्वन्तः शमु सन्तु गावः ।
शं न ऋभवः सुकृतः सुहस्ताः शं नो भवन्तु पितरो हवेषु ॥१२॥
शं नो अज एकपाद्देवो अस्तु शं नोऽहिर्बुध्न्यः शं समुद्रः ।
शं नो अपां नपात् पेरुरस्तु शं नः पृश्निर्भवतु देवगोपा ॥१३॥

९ कर्म द्वारा अदिति हमें शान्ति दें। शोभन स्तुतिवाले मरुद्गण हमें शान्ति दें। विष्णु हमें शान्ति दें। पूषा हमें शान्ति दें। अन्तरीक्ष हमें शान्ति दे। वायु हमें शान्ति दे।

१० रक्षण करते हुए सविता हमें शान्ति दें। अन्धकार-विनाशिनी उषाएँ हमें शान्ति दें। हमारी प्रजाके लिये पर्जन्य शान्ति दें। क्षेत्रपति शम्भु हमें शान्ति द ।

११ प्रकाशमान विश्वदेवगण हमें शान्ति दें। कर्मके साथ सरस्वती हमें यज्ञ-सेवक शान्ति दें। दान-निपुण हमें शान्ति दें। भूलोक, द्यु लोक और अन्तरीक्ष लोकमें उत्पन्न प्राणी हमें शान्ति दें।

१२ सत्य-पालक देवता हमें शान्ति दें। अश्वगण हमें शान्ति दें। गायें हमारे लिये सुखद-दात्री हों। सुकम-कर्त्ता और सुन्दर हाथवाले ऋभुगण हमें शान्ति दें। स्तोत्र करनेपर हमारे पितर भी हमारे लिये शान्ति दें।

१३ अज-एकपाद देव हमें शान्ति दें। अहिर्बुध्न्य देव हमें शान्ति दें। समुद्र हमें शान्ति दे। उपद्रव शान्ति करनेवाले "अपां नपात्" देव हमें शान्ति दें। देच-पालिका पृश्नि हमें शान्ति दें।

आदित्या रुद्रा वसवो जुषन्तेदं ब्रह्म क्रियमाणं नवीयः ।
शृण्वन्तु नो दिव्याः पार्थिवासो गोजाता उत ये यज्ञियासः ॥१४॥
ये देवानां यज्ञिया यज्ञियानां मनोर्यजत्रा अमृता ऋतज्ञाः ।
ते नो रासन्तामुरुगायमद्य यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥१५॥



१४ हम यह नया स्तोत्र बनाते हैं। आदित्यगण, रुद्रगण और वसुगण इसका सेवन करें। द्युलोक, पृथिवी और पृश्निसे उत्पन्न तथा अन्य भी जितने यज्ञीय हैं, सब हमारा आह्वान सुनें

१५ यज्ञयोग्य देवो, यजनीय मनु प्रजापति और यजनीय अमर सत्यज्ञ जो देवगण हैं, वे हमें आज बहुकीर्त्ति वाला पुत्र प्रदान करें। तुम सदा हमें कल्याण द्वारा पालन करो।



तृतीय अध्याय समाप्त



चतुर्थ अध्याय

३६ सूक्त

विश्वदेव देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

प्र ब्रह्मै॑तु सद॑नादृतस्य वि रश्मिभिः ससृजे सूर्यो गाः।
वि सानुना पृथिवी सस्र उर्वी पृथु प्रतीकमध्येधे अग्निः ॥१॥
इमां वां मित्रावरुणा सुवृक्तिमिषं न कृण्वे असुरा नवीयः।
इनो वामन्यः पदवीरदब्धो जनं च मित्रो यतति ब्रुवाणः ॥२॥
आ वातस्य ध्रजतो रन्त इत्या अपीपयन्त धेनवो न सूदाः।
महो दिवः सदने जायमानोऽचिक्रदद्वृषभः सस्मिन्नूधन् ॥३॥
गिरा य एता युनजद्धरी त इन्द्र प्रिया सुरथा शूर धायू।
प्र यो मन्युं रिरिक्षतो मिनात्या सुक्रतुमर्यमणं ववृत्याम् ॥४॥

---

१ यज्ञस्थानसे स्तोत्र, उत्तमतासे, सूर्य आदिके पास जाय। किरणोंके द्वारा सूर्यने वृष्टिका जल बनाया है। पृथिवी अपने सानुओं (पर्वतादि तटों) को विस्तृत करके व्याप्त हुई है। पृथिवीके विस्तृत अङ्गोंके ऊपर अग्नि जलते हैं।

२ बली मित्र और वरुण, हव्य-रूप अन्नकी तरह तुम्हारे लिये नयी स्तुति करता हूँ। तुम लोगोंमें एक स्वामी वरुण हैं, जो स्थानके उत्पादक (धर्माधर्मके धारक) हैं और मित्र, स्तुति किये जानेपर, प्राणियोंको प्रवर्त्तित करते हैं।

३ गति-परायण वायुकी गति चारो ओर शोभा पाती है। दूध देनेवाली गाय बढ़ती हैं। महान् और प्रकाशमान आदित्यके स्थान(अन्तरीक्ष) में उत्पन्न और वर्षणशील मेघ उस अन्तरीक्षमें क्रन्दन (गर्जन) करता है।

४ शूर इन्द्र, जो मनुष्य तुम्हारे प्रिय, सुन्दर गमनवाले और धारक इन हरि नामके दोनों घोड़ोंको, स्तुति द्वारा, रथमें जोतता है, उसके यज्ञमें आओ। अर्यमा हिंसाकी इच्छा करनेवाले शत्रुका कोप विनष्ट करते हैं। उन्हीं शोभन कर्मवाले अर्यमाको स्तुतिसे आवर्त्तित करता हूँ।

यजन्ते अस्य सख्यं वयश्च नमस्विनः स्व ऋतस्य धामन् ।
वि पृक्षो बाबधे नृभिः स्तवान इदं नमो रुद्राय प्रेष्ठम् ॥५॥
आ यत् साकं यशसो वावशानाः सरस्वती सप्तथी सिन्धुमाता ।
याः सुष्वयन्त सुदुघाः सुधारा अभि स्वेन पयसा पीप्यानाः ॥६॥
उत त्ये नो मरुतो मन्दसाना धियं तोकं च वाजिनोऽवन्तु ।
मा नः परि ख्यदक्षरा चरन्त्यवीवृधन्युज्यन्ते रयिं नः ॥७॥
प्र वो महीमरमतिं कृणुध्वं प्र पूषणं विदथ्यं नवीरम् ।
भगं धियोऽवितारं नो अस्याः सातौ वाजं रातिषाचं पुरन्धिम् ॥८॥
अच्छायं वो मरुतः श्लोक एत्वच्छा विष्णुं निषिक्तपामवोभिः ।
उत प्रजायै गृणते वयो धुर्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥९॥



५ जमान लोग, अन्नवाले होकर और यज्ञ-स्थलमें अवस्थित रहकर, रुद्रका सख्य चाहते हैं। नेताओं द्वा । स्तुत होनेपर रुद्र अन्न देते हैं। मैं रुद्रका प्रिय नमस्कार करता हूँ।

६ जिन नदियोंमें सिन्धु (नदी) माता है और सरस्वती (नदी) सप्तमा है, वे ही मनोरथपूर्ण करनेवाली और सुन्दर धारोंवाली नदियाँ प्रवाहित होती हैं। अपने जलसे बढ़नेवाली, अन्नवाली और इच्छा करनेवाली नदियाँ एक साथ ही आवें।

७ प्रसन्न और वेगवान् मरुद्गण हमारे यज्ञ-कर्म और पुत्रकी रक्षा करें। व्याप्त और विचरनेवाली वाग्देवता (सरस्वती देवी) हमें छोड़कर दूसरेको न देखें। मरुत् और वाक् हमारा धन नियत रहनेपर भी उसे बढ़ावें।

८ तुम असीम और महती पृथिवीको बुलाओ। यज्ञ-योग्य वीर पूषाको बुलाओ। हमारे कर्म-रक्षक भग देवताको बुलाओ। दान-निपुण और प्राचीन (ऋभुओंमेंसे एक) वाजदेवको यज्ञमें बुलाओ।

९ मरुतो, हमारा यह श्लोक (स्तोत्र) तुम्हारे सामने जाय। आश्रयदाता और गर्भपालक विष्णुके निकट भी जाय। वे स्तोताको पुत्र और अन्न दें। तुम हमें सदा कल्याण (स्वस्ति) द्वारा पालन करो।



३७ सूक्त

विश्वदेवगण देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द

आ वो वाहिष्ठो वहतु स्तवध्यै रथो वाजा ऋभुक्षणो अमृक्तः।
अभि त्रिपृष्ठैः सवनेषु सोमैर्मदे सुशिप्रा महभिः पृणध्वम् ॥१॥
यूयं ह रत्नं मघवत्सु धत्थ स्वर्दृश ऋभुक्षणो अमृक्तम्।
सं यज्ञेषु स्वधावन्तः पिबध्वं वि नो राधांसि मतिभिर्दयध्वम् ॥२॥
उवोचिथ हि मघवन्देष्णं महो अभस्य वसुनो विभागे।
उभा ते पूर्णा वसुना गभस्ती न सूनृतानि यमते वसव्या ॥३॥
त्वमिन्द्र स्वयशा ऋभुक्षा वाजो न साधुरस्तमेष्यृक्वा।
वयं नु ते दाश्वांसः स्याम ब्रह्म कृण्वन्तो हरिवो वसिष्ठाः ॥४॥
सनितासि प्रवतो दाशुषे चिद्याभिर्विवेषो हर्यश्व धीभिः।
ववन्मा नु ते युज्याभिरुती कदा न इन्द्र राय आ दशस्येः ॥५॥

---

१ विस्तृत तेजके आधार ऋभुओ (वाजो), वाहक, प्रशस्य और अहिंसक रथ तुम्हें ढोवे। सुन्दर जबड़ोंवाले ऋभुओ, यज्ञमें आनन्दके लिये दूध, दही और सत्तू में मिले सोमरस द्वारा उदर-पूर्त्ति करो।

२ स्वर्गदर्शी ऋभुओ, तुमलोग हविष्मान् लोगोंके लिये अहिंसक (चोरों आदिसे न चुराया जाने-वाला) रत्न धारण करो। अनन्तर बलवान् होकर यज्ञमें सोम पान करो। कृपा द्वारा हमें विशेष रूपसे धन दो।

३ धनी इन्द्र, तुम विशेष और अल्प धनके दानके समय धनका सेवन करते हो। तुम्हारी दोनों बाहें धनसे पूर्ण हैं। धन-प्राप्तिमें तुम्हारा वचन बाधक नहीं होता।

४ इन्द्र, तुम असाधारण-यशा, ऋभुओंके ईश्वर और साधक हो। दूसरेकी तरह तुम स्तोताके घरमें आओ। हरि अश्ववाले इन्द्र, आज हम (वसिष्ठ) हव्य प्रदान करके तुम्हारा स्तोत्र करते हैं।

५ हर्यश्व, तुम हमारी स्तुति द्वारा व्याप्त होते हो; इसलिये हव्य देनेवाले यजमानके लिये प्रवण धनके दाता हो। इन्द्र, तुम हमें कब धन दोगे? आज तुम्हारे योग्य रक्षणसे हम प्रतिपालित होंगे।

वासयसीव वेधसस्त्वं नः कदा न इन्द्र वचसो बुबोधः ।
अस्तं तात्या धिया रयिं सुवीरं पृक्षो नो अर्वान्युहीत वाजी ॥६॥
अभि यं देवी निर्ऋतिश्चिदीशे नक्षन्त इन्द्रं शरदः सुपृक्षः ।
उप त्रिबन्धुर्जरदष्टिमेत्यस्ववेशं यं कृणवन्त मर्ताः ॥७॥
आ नो राधांसि सवितः स्तवध्या आ रायो यन्तु पर्वतस्य रातौ ।
सदा नो दिव्यः पायुः सिषक्तु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥८॥



३८ सूक्त

सविता देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

उदुष्य देवः सविता ययाम हिरण्ययीममतिं यामशिश्रेत् ।
नूनं भगो हव्यो मानुषेभिर्वि यो रत्ना पुरूवसुर्दधाति ॥१॥

६ तुम कब हमारे स्तोत्र-रूप वाक्यको समझोगे ? तुम इस समय हमें निवास दे रहे हो । बली और वेगशाली अश्व हमारी स्तुतिसे वीर पुत्रसे युक्त धन और अन्न हमारे गृहमें ले आवें ।

७ प्रकाशमाना निर्ऋति (भूमि) जिन इन्द्रको, अधिपति बनानेके लिये, व्याप्त करती है, सुन्दर अन्नवाले वर्ष जिन इन्द्रको व्याप्त करते हैं और जिन इन्द्रको मनुष्य स्तोता अपने गृहमें ले जाते हैं, वही त्रिलोकधारी इन्द्र अन्नको जीर्ण करनेवाला बल प्राप्त करते हैं ।

८ सविता देवता, तुम्हारे यहाँसे प्रशंसा-योग्य धन हमारे पास आवे । पर्वत (इन्द्र-सखा मेघ)के धन देनेपर हमारे पास धन आवे । सर्व-रक्षक स्वर्गीय इन्द्र सदा रक्षक-रूपसे हमारा सेवन करें । देवो, तुम सदा स्वस्ति द्वारा हमें पालन करो ।



१ जिस सुवर्णमयी प्रभाका आश्रय सविता (सूर्य) करते हैं, उसीको उदित करते हैं । सविता मनुष्योंके लिये स्तुत्य हैं । अनेक धनोंवाले सविता स्तोताओंको मनोहर धन देते हैं ।

उदु तिष्ठ सवितः श्रुध्यस्य हिरण्यपाणे प्रभृता वृतस्य ।
व्यु र्वी पृथ्वीममतिं सृजान आ नृभ्यो मर्तभोजनं सुवानः ॥२॥
अपि ष्टुतः सविता देवो अस्तु यमा चिद्विश्वे वसवो गृणन्ति ।
स नः स्तोमान्नमस्य श्चनो धाद्विश्वेभिः पातु पायुभिर्नि सूरीन् ॥३॥
अभि यं देव्यदितिर्गृणाति सवं देवस्य सवितुर्जुषाणा ।
अभि सम्राजो वरुणो गृणन्त्यभि मित्रासो अर्जमा सजोषाः ॥४॥
अभि ये मिथो वनुषः सपन्ते रातिं दिवो रातिषाचः पृथिव्याः ।
अहिर्बुध्न्य उत नः शृणोतु वरूत्र्येक धेनुभिर्नि पातु ॥५॥
अनु तन्नो जास्पतिर्मंसीष्ट रत्नं देवस्य सवितुरियानः ।
भगमुग्रोऽवसे जोहवीति भगमनुग्रो अध याति रत्नम् ॥६॥
शं नो भवन्तु वाजिनो हवेषु देवताता मितद्रवः स्वर्काः ।
जम्भयन्तोऽहिंवृकं रक्षांसि सनेम्यस्मद्युयवन्नमीवाः ॥७॥

---

२ सविता देव, उदित होओ। हे हिरण्यबाहु, विस्तृत और प्रसिद्ध प्रभा देते हुए और मनुष्योंके भोग-योग्य धन नेताओंको देते हुए यज्ञ प्रारम्भ हुआ। तुम हमारा स्तोत्र सुनो।

३ सविता देव हमारे द्वारा स्तुत हों। जिन सविता देवकी स्तुति समस्त देव करते हैं, वह पूजनीय सविता हमारा स्तोम (स्तोत्र) और अन्न धारण करें। सब प्रकारके रक्षा-कार्य द्वारा स्तोताओंका पालन करें।

४ सविता देवताकी अनुमतिके अनुसार अदिति देवी स्तुति करती हैं, वरुण आदि देवता सविताकी स्तुति करते हैं तथा मित्र आदि और समान प्रीतिवाले अर्यमा उनकी स्तुति करते हैं।

५ दान-निपुण और भक्त यजमान, आपसमें मिल कर, द्युलोक और भूलोकके मित्र सविताकी सेवा करते हैं। अहिर्बुध्न्य हमारा स्तोत्र सुनें। मुख्य धेनुओं द्वारा वाग्देवी भी हमारा पालन करें।

६ प्रजा-रक्षक सविता, हमारी प्रार्थनाके अनुसार, अपना मनोहर धन दें। ओजस्वी स्तोता हमारी रक्षाके लिये भग नामके देवताको बार-बार बुलाते हैं। असमर्थ स्तोता रत्न माँगता है।

७ यज्ञ-कालीन हमारे स्तोत्रोंमें मित-द्रुध, मित-मार्ग और शोभन अन्नवाले वाजी नामके देवगण हमारे लिये सुख-प्रद हों। ये वाजी देवगण अदाता (चोर), हन्ता और राक्षसोंको मारते हुए सारे पुराने रोगोंको हमसे अलग करें।

वाजे वाजेवत वाजिनो नो धनेषु विप्रा अमृता ऋतज्ञाः ।
अस्य मध्वः पिबत मादयध्वं तृप्ता यात पथिभिर्देवयानैः ॥८॥



३६ सूक्त

विश्वदेवगण देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

ऊर्ध्वो अग्निः सुमतिं वस्वो अश्रेत् प्रतीची जूर्णिर्देवतातिमेति ।
भेजाते अद्री रथ्येव पन्थामृतं होता न इषितो यजाति ॥१॥
प्र वावृजे सुप्रया बर्हिरेषामा विश्पतीव बीरिट इयाते ।
विशामक्तोरुषसः पूर्वहूतौ वायुः पूषा स्वस्तये नियुत्वान् ॥२॥
जमया अत्र वसवो रन्त देवा उरावन्तरिक्षे मर्जयन्त शुभ्राः ।
अर्वाक् पथ उरुज्रयः कृणुध्वं श्रोता दूतस्य जग्मुषो नो अस्य ॥३॥

८ वाजी देवगण, तुमलोग मेधावी, अमर और सत्य-ज्ञाता होकर धनके निमित्त-भूत सारे युद्धोंमें हमारा पालन करो। इस सोमको पियो और प्रमत्त होओ। अनन्तर तृप्त होकर देवयान-मार्गसे जाओ।



१ अग्नि ऊपर उठकर स्तोताकी शोभन स्तुतिका आश्रय करें। सबको बुढ़ापा देनेवाली उषा देवी पूर्वाभिमुखी होकर यज्ञमें गमन करें। आदरसे युक्त पत्नी और यजमान, रथियोंकी तरह, यज्ञ-मार्गका आश्रय करते हैं। हमारा भेजा हुआ होता यज्ञ करता है।

२ इन यजमानोंका अन्न-युक्त कुश पाया जाता है। इस समय प्रजापालक और वड़वावाले वायु और पूषा, प्रजाके मङ्गलके लिये, रात्रिकी उषाके पहलेका आह्वान सुनकर अन्तरीक्षमें आवें।

३ इस यज्ञमें वसुगण पृथिवीपर रमण करें। विस्तीर्ण अन्तरीक्षमें स्थित और दीप्यमान मरुद्गण सेवित होते हैं। हे प्रभूतगामी वसुओ और मरुतो, अपना गन्तव्य पथ हमारी ओर करो। हमारा दूत तुमलोगोंके पास गया है। उसका आह्वान सुनना।

ते हि यज्ञेषु यज्ञियास ऊमाः सधस्थं विश्वे अभि सन्ति देवाः ।
ताँ अध्वर उशतो यक्ष्यग्ने श्रुष्टी भगं नासत्या पुरन्धिम् ॥४॥
आग्ने गिरो दिव आ पृथिव्या मित्रं वह वरुणमिन्द्रमग्निम् ।
आर्यमणमदितिं विष्णुमेषां सरस्वती मरुतो मादयन्ताम् ॥५॥
ररे हव्यं मतिभिर्यज्ञियानां नक्षत्कामं मर्त्यानामसिन्वन् ।
धाता रयिमविदस्यं सदासां सक्षीमहि युज्येभिर्नु देवैः ॥६॥
नू रोदसी अभिष्टुते वसिष्ठैर्ऋतावानो वरुणो मित्रो अग्निः ।
यच्छन्तु चन्द्रा उपमं नो अर्कं यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥७॥



---

४ प्रख्यात, यजनीय और रक्षक विश्वदेवगण यज्ञ-स्थानमें आते हैं। अग्नि, हमारे यज्ञमें हमारे अभिलाषी देवोंके लिये यज्ञ करो। भग, अश्विनीकुमारों और इन्द्रकी शीघ्र पूजा करो।

५ अग्नि, तुम द्युलोकसे स्तुति-योग्य मित्र, वरुण, इन्द्र, अग्नि, अर्यमा, अदिति और विष्णुको हमारे यज्ञमें बुलाओ। पृथिवीसे भी बुलाओ। सरस्वती और मरुद्गण हृष्ट हों।

६ हम यजनीय देवोंके लिये स्तुतिके साथ हव्य प्रदान करते हैं। अग्नि हमारी अभिलाषाके प्रतिबन्धक न होकर यज्ञको व्याप्त करते हैं। देवो, तुम ग्राह्य और सदा संभजनीय धन दो। आज हम सहायक देवोंसे मिलेंगे।

७ वसिष्ठोंके द्वारा आज द्यावापृथिवी भली भाँति स्तुत हुए। यज्ञसे युक्त वरुण, इन्द्र और अग्नि भी स्तुत हुए। आह्लादकारी देवगण हमें पूजनीय और सर्वोत्तम अन्न प्रदान करें। तुम हमें सदा स्वस्ति द्वारा पालन करो।



४० सूक्त

विश्वदेवगण देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

ओ श्रुष्टिर्विदथ्या समेतु प्रति स्तोमं दधीमहि तुराणाम्।
यदद्य देवः सविता सुवाति स्यामास्य रत्निनो विभागे ॥१॥
मित्रस्तन्नो वरुणो रोदसी च द्युभक्तमिन्द्रो अर्यमा ददातु।
दिदेष्टु देव्यदिती रेकणो वायुश्च यन्नियुवैते भगश्च ॥२॥
सेदुग्रो अस्तु मरुतः स शुष्मी यं मर्त्यं पृषदश्वा अवाथ।
उतेमग्निः सरस्वती जुनन्ति न तस्य रायः पर्येतास्ति ॥३॥
अयं हि नेता वरुण ऋतस्य मित्रो राजानो अर्यमापो धुः।
सुहवा देव्यदितिरनर्वा ते नो अंहो अति पर्षन्नरिष्टान् ॥४॥

१ देवो, तुम्हारा चित्त द्वारा सम्पादनीय सुख हमारे पास आवे। हम वेगवान् देवोंके लिये स्तोत्र करते हैं। इस समय जो धन सविता भेजेंगे, हम रत्नवाले सविताके उसी धनको ग्रहण करेंगे।

२ मित्र, वरुण और द्यावापृथिवी हमें वही प्रसिद्ध धन दें। इन्द्र और अर्यमा हमें प्रकाशमान स्तोताओं द्वारा सेवित धन दें। वायु और भग हमारे लिये जिस धनकी योजना करते हैं, देवी अदिति उसी धनको हमें दें।

३ पृषत् नामक अश्ववाले मरुतो, जिस मनुष्यकी तुम रक्षा करते हो, वही ओजस्वी और बलवान् हो। अग्नि और सरस्वती आदि देवगण यजमानको प्रवर्त्तित करते हैं। इस यजमानके धनका कोई विघातक नहीं है।

४ यज्ञके प्रापक ये वरुण, मित्र और अर्यमा सबकी शक्तिसे युक्त हैं। ये हमारा यज्ञ-कर्म धारण करते हैं। न रोकी गयी और प्रकाशमाना अदिति शोभन आह्वानवाली हैं। जिससे हमें बाधा न हो, इस प्रकार पापसे हमें ये सब देव बचावें।

अस्य देवस्य मीळ्हुषो वया विष्णोरेषस्य प्रभृथे हविर्भिः ।
विदे हि रुद्रो रुद्रियं महित्वं यासिष्टं वर्तिरश्विनाविरावत् ॥५॥
मात्र पूषन्नाघृण इरस्यो वरूत्री यद्रातिषाचश्च रासन् ।
मयो भुवो नो अर्वन्तो नि पान्तु वृष्टिं परिज्मा वातो ददातु ॥६॥
नू रोदसी अभिष्टुते वसिष्ठैर्ऋतावानो वरुणो मित्रो अग्निः ।
यच्छन्तु चन्द्रा उपमं नो अर्कं यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥७॥



४१ सूक्त

१ म ऋक्के इन्द्रादि देवता, २ य—५ मके भग देवता और ७ मकी उषा देवता । इस सूक्तका नाम भग-सूक्त है । वसिष्ठ ऋषि । जगती और त्रिष्टुप् छन्द ।

प्रातरग्निं प्रातरिन्द्रं हवामहे प्रातर्मित्रावरुणा प्रातरश्विना ।
प्रातर्भगं पूषणं ब्रह्मणस्पतिं प्रातः सोममुत रुद्रं हुवेम ॥१॥

५ अन्य देवगण यज्ञमें हव्य द्वारा प्रापणीय और अभीष्टदाता विष्णुके अंश-रूप हैं । रुद्र अपनी महिमा प्रदान करें । अश्विनीकुमारो, तुम हमारे हव्यवाले गृहमें आओ ।

६ सबकी वरणीया सरस्वती और दान-निपुणा देवपत्नियाँ जो धन हमें देती हैं, उसमें, हे दीप्तिवाले पूषन्, बाधा नहीं देना । सुखप्रद और गतिशील देवगण हमें पालन करें । सर्वत्र-गामी वायु वृष्टिका जल प्रदान करें ।

७ आज देवोंके द्वारा द्यावापृथिवी भली भाँति स्तुत हुईं । यज्ञवाले वरुण, इन्द्र और अग्नि भी स्तुत हुए । आह्लादकारी देवगण हमें पूजनीय और सर्वोत्तम अन्न प्रदान करें । तुम सदा हमें स्वस्ति द्वारा, पालन करो ।



१ हम प्रातःकाल अग्नि, इन्द्र, मित्र और वरुणको बुलाते हैं तथा प्रातःकाल अश्विनी-कुमारोंकी स्तुति करते हैं । प्रातःकाल भग, पूषा, ब्रह्मणस्पति, सोम और रुद्रकी स्तुति करते हैं ।

प्रातर्जितं भगमुग्रं हुवेम वयं पुत्रमदितेर्यो विधर्ता ।
आध्रश्चिद्यं मन्यमानस्तुरश्चिद्राजा चिद्यं भगं भक्षीत्याह ॥२॥
भग प्रणेतर्भग सत्यराधो भगेमां धियमुदवा ददन्नः ।
भग प्र णो जनय गोभिरश्वैर्भग प्र नृभिर्नृवन्तः स्याम ॥३॥
उतेदानीं भगवन्तः स्यामोत प्रपित्व उत मध्ये अह्नाम् ।
उतोदिता मघवन्त्सूर्यस्य वयं देवानां सुमतौ स्याम ॥४॥
भग एव भगवाँ अस्तु देवास्तेन वयं भगवन्तः स्याम ।
तं त्वा भग सर्व इज्जोहवीति स नो भग पुरएता भवेह ॥५॥
समध्वरायोषसो नमन्त दधिक्रावेव शुचये पदाय ।
अर्वाचीनं वसुविदं भगं नो रथमिवाश्वा वाजिन आ वहन्तु ॥६॥

२ जो संसारके धारक, जय-शील और उग्र अदितिके पुत्र हैं, उन्हीं भग देवताको हम प्रातःकाल बुलाते हैं। दरिद्र स्तोता और धनी राजा दोनों ही भग देवताकी स्तुति करते हुए "मुझे भोग-योग्य धन दो" की याचना करते हैं।

३ भग, तुम उत्तम नेता हो। भग, तुम सत्य धन हो। हमें तुम अभिलषित वस्तु प्रदान करके हमारी स्तुति सफल करो। भग, तुम हमें गौ और अश्व द्वारा प्रवर्द्धित करो। भग, हम पुत्रादि द्वारा मनुष्यवान् बनेंगे।

४ हम इस समय भगवान् (तुम्हारे) हों, दिनके प्रारम्भ और मध्यमें भी भगवान् हों। धनी भग देव, सूर्योदयके समय हम इन्द्र आदिका अनुग्रह प्राप्त करें।

५ देवो, भग ही भगवान् हों। हम भगके अनुग्रहसे ही भगवान् हों। भग, सब लोग तुम्हें बार-बार बुलाते हैं। भग, तुम इस यज्ञमें हमारे अग्रगामी बनो।

६ शुद्ध स्थानके लिये दधिक्रावाकी तरह उषा देवता हमारे यज्ञमें आवें। वेगशाली अश्वोंके रथकी तरह उषा देवता धनदाता भगदेवको हमारे सामने ले आवें।

अश्वावतीर्गोमतीर्न उषासो वीरवतीः सदमुच्छन्तु भद्राः ।
घृतं दुहाना विश्वतः प्रतीता यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥७



४२ सूक्त

विश्वदेवगण देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

प्र ब्रह्माणो अङ्गिरसो नक्षन्त प्र क्रन्दनुर्नभन्यस्य वेतु ।
प्र धेनव उदप्रुतो नवन्त युज्यातामद्री अध्वरस्य पेशः ॥१॥
सुगस्ते अग्ने सनवित्तो अध्वा युक्ष्वा सुते हरितो रोहितश्च ।
ये वा सद्मन्नरुषा वीरवाहो हुवे देवानां जनिमानि सत्तः ॥२॥
समु वो यज्ञं महयन्नमोभिः प्र होता मन्द्रो रिरिच उपाके ।
यजस्व सु पुर्वणीक देवाना यज्ञियामरमतिं ववृत्याः ॥३॥

७ सारे गुणोंसे प्रवृद्ध और भजनीय उषा देवता अश्व, गौ और वीर पुरुषसे युक्त होकर तथा जल-सेचन करके सदा हमारे रात्रि-जात अन्धकारको नाश करें । तुम सदा हमें स्वस्ति द्वारा पालन करो ।



१ स्तोता (ब्राह्मण) अङ्गिरा लोग सर्वत्र व्याप्त हों । पर्जन्य हमारे स्तोत्रकी अभिलाषा विशेष रूपसे करें । प्रसन्नता-दायिका नदियाँ जल-सेचन करते हुए गमन करें। आदर-सम्पन्ना पत्नी और यजमान यज्ञके रूपकी योजना कर ।

२ अग्नि, तुम्हारा चिर-प्राप्त पथ सुगम हो । जो श्याम और लोहित वर्णके अश्व यज्ञ-गृहमें तुम्हारे समान वीरको ले जाते हुए शोभा पाते हैं, उन्हें रथमें योजित करो । मैं यज्ञ-गृहमें बैठकर देवोंको बुलाता हूँ ।

३ देवो, नमस्कारवाले ये स्तोता तुम्हारे यज्ञका भली भाँति पूजन करते हैं । हमारे समीपमें रहने वाला होता सर्वोत्तम है । यजमान, देवोंका यज्ञ भली भाँति करो । बहुत तेजवाले, तुम भूमिको आवर्तित करो ।

यदा वीरस्य रेवतो दुरोणे स्योनशीरतिथिराचिकेतत् ।
सुप्रीतो अग्निः सुधितो दम आ स विशे दाति वार्यमियत्यै ॥४॥
इमं नो अग्ने अध्वरं जुषस्व मरुत्स्विन्द्रे यशसं कृधी नः ।
आ नक्ता बर्हिः सदतामुषासोशन्ता मित्रावरुणा यजेह ॥५॥
एवाग्निं सहस्यं वसिष्ठो रायस्कामो विश्वप्स्न्यस्य स्तौत् ।
इषं रयिं पप्रथद्वाजमस्मे यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥६॥



४३ सूक्त

विश्वदेवगण देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

प्र वो यज्ञेषु देवयन्तो अर्चन्द्यावा नमोभिः पृथिवी इषध्यै ।
येषां ब्रह्माण्यसमानि विप्रा विष्वग्वियन्ति वनिनो न शाखाः ॥१॥

४ सबके अतिथि अग्नि जिस समय वीर और धनीके गृहमें सुखसे सोये हुए देखे जाते हैं और जिस समय अग्नि घरमें भली भाँति निहित होकर प्रसन्न होते हैं, उस समय वह समीपवर्त्तिनी प्रजाको वरणीय धन देते हैं ।

५ अग्नि, हमारे इस यज्ञकी सेवा करो । इन्द्र और मरुतोंके बीच हमें यशस्वी बनाओ । रात्रि और उषाके कालमें कुशोंपर बैठो । यज्ञाभिलाषी मित्र और वरुणकी इस यज्ञमें पूजा करो ।

६ धन-कामी होकर वसिष्ठने, इसी प्रकार, बल पुत्र अग्निकी, बहुरूपवाले धनकी प्राप्तिके लिये, स्तुति की थी । अग्नि हमें अन्न, बल और धन दें । तुम हमें सदा स्वस्ति द्वारा पालन करो ।



१ वृक्ष-शाखाकी तरह जिन मेधावियोंके स्तोत्र सब ओर जाते हैं, वे ही देव-कामी यज्ञमें नमस्कार (वा स्तुति) द्वारा तुम्हें पानेके लिये, विशेष रूपसे, स्तुति करते हैं । वे द्यावापृथिवीकी भी स्तुति करते हैं ।

प्र यज्ञ एतु हेत्वो न सप्तिरुद्यच्छध्वं समनसो घृताचीः ।
स्तृणीत बर्हिरध्वराय साधूर्ध्वा शोचींषि देवयून्यस्थुः ॥२॥
आ पुत्रासो न मातरं विभृत्राः सानौ देवासो बर्हिषः सदन्तु ।
आ विश्वाची विदथ्यामनक्त्वग्ने मा नो देवताता मृधस्कः ॥३॥
ते सीषपन्त जोषमा यजत्रा ऋतस्य धाराः सुदुघा दुहानाः ।
ज्येष्ठं वो अद्य मह आ वसूनामा गन्तन समनसो यति ष्ठ ॥४॥
एवा नो अग्ने विक्ष्वा दशस्य त्वया वयं सहसावन्नास्क्राः ।
राया युजा सधमादो अरिष्टा यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥५॥



४४ सूक्त

दधिक्रा देवता । वसिष्ठ ऋषि । जगती और त्रिष्टुप् छन्द ।

दधिक्रां वः प्रथममश्विनोषसमग्निं समिद्धं भगमूतये हुवे ।
इन्द्रं विष्णुं पूषणं ब्रह्मणस्पतिमादित्यान्द्यावापृथिवी अपः स्वः ॥१॥

---

२ शीघ्र-गामी अश्वकी तरह इस यज्ञमें जाओ । समान मनसे तुम घी बहानेवाली स्त्रुक्को उठाओ । यज्ञके लिये बढ़िया कुश बिछाओ । अग्नि, तुम्हारी देवकामी किरणें ऊर्ध्व-मुख रहें ।

३ विशेष रूपसे प्रतिपालनीय पुत्र जैसे माताकी गोदमें बैठते हैं, वैसे ही देवगण यज्ञके उन्नत स्थानपर विराजें । अग्नि, जुहू तुम्हारी यजनीय ज्वालाको भली भाँति सींचे । युद्धमें तुम हमारे शत्रुओंकी सहायता नहीं करना ।

४ यजनीय देवगण जलकी दूहने योग्य धाराको बरसाते हुए यथेष्ट रूपसे हमारी सेवाको स्वीकार करें । देवो, आज धनोंमें जो पूज्य धन है, वह आवे । एक मन होकर तुम भी आओ ।

५ अग्नि, इसी प्रकार तुम प्रजामेंसे हमें धन दो । बली अग्नि, तुम्हारे द्वारा हम छोड़े न जाकर मित्र-युक्त धनके साथ मस्त और अहिंसित हों । तुम सदा हमें स्वस्ति द्वारा पालन करो ।

—o—

१ तुम्हारी रक्षाके लिये पहले मैं दधिक्रा (अश्वाभिमानी) देवको बुलाता हूँ । इसके पश्चा अश्वि-द्वय, उषा, समिद्ध अग्नि और भग देवताका आह्वान करता हूँ । इन्द्र, विष्णु, पूषा, ब्रह्मणस्पति, आदित्यगण, द्यावापृथिवी, जल-देवता और सूर्यको बुलाता हूँ ।

दधिक्रामु नमसा बोधयन्त उदीराणा यज्ञमुप प्रयन्तः ।
इलां देवीं बर्हिषि सादयन्तोऽश्विना विप्रा सुहवा हुवेम ॥२॥
दधिक्रावाणं बुबुधानो अग्निमुप ब्रुव उषसं सूर्यं गाम् ।
ब्रध्नं मंश्चतोर्वरुणस्य बभ्रुं ते विश्वास्मद्दुरिता यावयन्तु ॥३॥
दधिक्रावा प्रथमो वाज्यर्वाग्रे रथानां भवति प्रजानन् ।
संविदान उषसा सूर्येणादित्येभिर्वसुभिरङ्गिरोभिः ॥४॥
आ नो दधिक्राः पथ्यामनक्त्वृतस्य पन्थामन्वेतवा उ ।
शृणोतु नो दैव्यं शर्धो अग्निः शृण्वन्तु विश्वे महिषा अमूराः ॥५॥



४५ सूक्त

सविता देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

आ देवो यातु सविता सुरत्नोऽन्तरिक्षप्रा वहमानो अश्वैः ।
हस्ते दधानो नर्या पुरूणि निवेशयन् च प्रसुवन् च भूम ॥१॥

२ यज्ञके प्रारम्भमें हम स्तोत्र द्वारा दधिक्रा देवताको प्रबोधित और प्रवर्त्तित करते हुए और इला देवी (हवीरूपा देवी) को स्थापित करते हुए शोभन आह्वानसे सम्पन्न मेधावी अश्वि-द्वयको बुलाते हैं ।

३ दधिक्राको प्रबोधित करके मैं अग्नि, उषा, सूर्य और वाग्देवता (वा भूमि) की स्तुति करता हूं । मैं अभिमानियोंके विनाशकारी वरुणके महान् पिङ्गल वर्ण अश्वकी स्तुति करता हूँ । वे सब देव-गण सारे पापोंको मुझसे अलग करें ।

४ अश्वोंमें मुख्य, शीघ्रगामी और गति-शील दधिक्रा ज्ञातव्यको भलीभाँति जानकर उषा, सूर्य, आदित्यगण, वसुगण और अङ्गिरा लोगोंके साथ सहमत होकर स्वयम् रथके अग्र भागमें लगते हैं ।



१ रत्न-युक्त, अपने तेजसे अन्तरीक्षके पूरक और अपने अश्वों द्वारा ढोये जाते हुए सविता देव मनुष्यके लिये हितकर प्रभूत धन, हाथमें धारण करते हुए, प्राणियोंको अपने स्थानमें धारण और अपने कर्ममें प्रेरित करते हुए आवें ।

उदस्य बाहू शिथिरा बृहन्ता हिरण्यया दिवो अन्ताँ अनष्टा ।
नूनं सो अस्य महिमा पनिष्ट सूरश्चिदस्मा अनु दादपस्याम् ॥२॥
स घा नो देवः सविता सहावा साविषद्वसुपतिर्वसूनि ।
विश्रयमाणो अमतिमुरूचीं मर्तभोजनमध रासते नः ॥३॥
इमा गिरः सवितारं सुजिह्वं पूर्णगभस्तिमीलते सुपाणिम् ।
चित्रं वयो बृहदस्मे दधातु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥४॥



४६ सूक्त

रुद्र देवता । वसिष्ठ ऋषि । जगती और त्रिष्टुप् छन्द ।

इमा रुद्राय स्थिरधन्वने गिरः क्षिप्रेषवे देवाय स्वधान्वे ।
अषाह्लाय सहमानाय वेधसे तिग्मायुधाय भरता शृणोतु नः ॥१॥

२ दानके लिये प्रसारित और विशाल हिरण्मय बाहुओं द्वारा सविता अन्तरीक्षके अन्तको व्याप्त करें। आज हम सविताकी उसी महिमाकी स्तुति करते हैं। सूर्य भी सविता (सूर्यकी तीक्ष्ण शक्ति देव)को कर्मेच्छा दें।

३ तेजस्वी और धनाधिपति सविता देव ही हमारे लिये धन भेजें। वह बहु विस्तीर्ण रूपको धारण करते हुए हमें मनुष्योंके भोग-योग्य धन दें।

४ ये स्तोत्र-रूप वचन (वा प्रजाएँ)उत्तम जिह्वावाले, धन-सम्पन्न और सुन्दर हाथवाले सविता देवताकी स्तुति करते हैं। वह हमें विचित्र और विशाल अन्न दें। तुम हमें सदा स्वस्ति द्वारा पालन करो।



१ दृढ़-धनुष्क, शीघ्रगामी बाणवाले, अन्नवाले, किसीके लिये भी अजेय तथा सबके विजेता और तीक्ष्ण अस्त्र बनानेवाले रुद्रको स्तुति करो। वह सुनें।

सहि क्षयेण क्षम्यस्य जन्मनः साम्राज्येन दिव्यस्य चेतति ।
अवन्नवन्तीरुप नो दुरश्चरानमीवो रुद्र जासुनो भव ॥२॥
या ते दिद्युदवसृष्टा दिवस्परि क्ष्मया चरति परि सा वृणक्तु नः ।
सहस्रन्ते स्वपिवात भेषजा मा नस्तोकेषु तनयेषु रीरिषः ॥३॥
मा नो वधी रुद्र मा परा दा मा ते भूम प्रसितौ हीळितस्य ।
आ नो भज बर्हिषि जीवशंसे यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥४॥



४७ सूक्त

अप् (जल) देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

आपो यं वः प्रथमं देवयन्त इन्द्रपानमूर्मिमकृण्वतेळः ।
तं वो वयं शुचिमरिप्रमद्य घृतप्रुषं मधुमन्तं वनेम ॥१॥

२ पृथिवीस्थ और स्वर्गस्थ मनुष्यके ऐश्वर्य द्वारा उन्हें जाना सकता है। रुद्र, तुम्हारा स्तोत्र करनेवाली (हमारी) प्रजाका पालन करते हुए हमारे घरमें जाओ। हमें रोग नहीं देना।

३ रुद्र, अन्तरीक्षसे छोड़ी गयी जो तुम्हारी बिजली पृथिवीपर विचरण करती है, वह हमें छोड़ दे। हे स्वपिवात रुद्र, तुम्हारे पास हजारों औषधियाँ हैं। हमारे पुत्र या पौत्रकी हिंसा नहीं करना।

४ रुद्र, न हमें मारना, न छोड़ना। तुम क्रोध करने पर जो बन्धन करते हो, उसमें हम न रहें। प्राणियोंके प्रशस्य यज्ञका हमें भागी बनाओ। तुम सदा हमें स्वस्ति द्वारा पालन करो।



१ हे अप् देवता, देवेच्छुक अध्वर्युओंके द्वारा इन्द्रके लिये पीने योग्य और भूमि-समुत्पन्न जो तुम लोगोंका सोमरस पहले संस्कृत किया गया है, उसी शुद्ध, निष्पाप, वृष्टि-जल-सेचनकारी और रससे युक्त सोमरसका हम भी सेवन करेंगे।

तमूर्मिमापो मधुमत्तमं वोऽपां नपादवत्वाशुहेमा ।
यस्मिन्निन्द्रो वसुभिर्मादयाते तमश्याम देवयन्तो वो अद्य ॥२॥
शतपवित्राः स्वधयामदन्तीर्देवीर्देवानामपि यन्ति पाथः ।
ता इन्द्रस्य न मिनन्ति व्रतानि सिन्धुभ्यो हव्यं घृतवज्जुहोत ॥३॥
याः सूर्यो रश्मिभिराततान याभ्य इन्द्रो अरदद्गातुमूर्मिम् ।
ते सिन्धवो वरिवो धातना नो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥४॥



४८ सूक्त

ऋभु देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

ऋभुक्षणो वाजा मादयध्वमस्मे नरो मघवानः सुतस्य ।
आ वोऽर्वाचः क्रतवो न यातां विभ्वो रथं नर्यं वर्तयन्तु ॥१॥

२ शीघ्र-गति "अपां नपात्" (अग्नि) देवता तुम्हारे उस रसवत्तम सोमरसका पालन करें। वसुओंके साथ इन्द्र जिसमें मत्त होते हैं, तुम्हारे उसी सोमरसको हम देवाभिलाषी होकर आज प्राप्त करेंगे।

३ अनेक पावन रूपोंवाले और लोगोंमें हर्षोत्पादक तथा प्रकाशमान जल-देवता देवोंके स्थानोंमें प्रवेश करते हैं। वे इन्द्रके यज्ञादि कर्मोंकी हिंसा नहीं करते। अध्वर्युओ, तुम सिन्धु आदिके लिये घृत-युक्त हव्यका होम करो।

४ सूर्य, किरणों द्वारा, जिन जलोंका विस्तार करते हैं और जिनके लिये इन्द्रने गमनीय पथको विदीर्ण किया है, हे सिन्धुगण, वे ही तुमलोग हमारा धन धारण करो। तुम सदा हमें स्वस्ति द्वारा पालन करो।



१ नेता और धनवान् ऋभुओ, हमारे सोमपानसे तुम मत्त होओ। तुमलोग जा रहे हो। तुम्हारे कर्म-कर्त्ता और समर्थ अश्व हमारे अभिमुख होकर मनुष्योंके लिये हितकर रथ आवर्त्तित करें।

ऋभुर्ऋभुभिरभि वः स्याम विभ्वो विभुभिः शवसा शवांसि ।
वाजो अस्माँ अवतु वाजसाताविन्द्रेण युजा तरुषेम वृत्रम् ॥२॥
ते चिद्धि पूर्वीरभि सन्ति शासा विश्वाँ अर्य उपरताति वन्वन् ।
इन्द्रो विभ्वाँ ऋभुक्षा वाजो अर्यः शत्रोर्मिथत्या कृणवन्वि नृम्णम् ॥३॥
नू देवासो वरिवः कर्तना नो भूत नो विश्वेऽवसे सजोषाः ।
समस्मे इषं वसवो ददीरन्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥४॥



४९ सूक्त

अप् देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

समुद्रज्येष्ठाः सलिलस्य मध्यात्पुनाना यन्त्यनिविशमानाः ।
इन्द्रो या वज्री वृषभो रराद ता आपो देवीरिह मामवन्तु ॥१॥

---

२ हम तुम्हारे द्वारा विभु (प्रथित) हैं । तुमलोग समर्थ हो । हम तुम्हारी सहायतासे समर्थ होकर तुम्हारे बल द्वारा शत्रुओंको दबावेंगे । वाज नामके ऋभु युद्धमें हमारी रक्षा करें । इन्द्रको सहायक पाकर हम वृत्रके हाथसे बच जायँगे ।

३ हमारी अनेक शत्रु-सेनाओंको इन्द्र और ऋभुगण आयुध द्वारा पराजित करते हैं । युद्ध होनेपर वे सारे शत्रुओंको मारते हैं । विभ्वा, ऋभुक्षा और वाज नामके तीनों ऋभु और आर्य इन्द्र-मन्थन द्वारा शत्रु-बलको विनष्ट करेंगे ।

४ प्रकाशक ऋभुओ, तुम आज हमें धन दो । हे समस्त ऋभुओ, प्रसन्न होकर तुम हमारे रक्षक होओ । प्रशस्य ऋभुगण हमें अन्न प्रदान करें । तुम सदा हमें स्वस्ति (कल्याण) द्वारा पालन करो ।



१ जिन जलोंमें समुद्र ज्येष्ठ है, वे सदा गमन-शील और शोधक जल समूह (अप् देवता) अन्तरीक्षके बीचसे जाते हैं । वज्रधर और अभीष्टवर्षक इन्द्रने जिनको छोड़ दिया था, वे अप् देवता यहाँ हमारी रक्षा करें ।

या आपो दिव्या उत वा स्रवन्ति खनित्रिमा उत वा याः स्वयञ्जाः ।
समुद्रार्था याः शुचयः पावकास्ता आपो देवीरिह मामवन्तु ॥२॥
यासां राजा वरुणो याति मध्ये सत्यानृते अवपश्यञ्जनानाम् ।
मधुश्चुतः शुचयो याः पावकास्ता आपो देवीरिह मामवन्तु ॥३॥
यासु राजा वरुणो यासु सोमो विश्वेदेवा यासूर्जं मदन्ति ।
वैश्वानरो यास्वग्निः प्रविष्टस्ता आपो देवीरिह मामवन्तु ॥४॥



५० सूक्त

प्रथमके मित्र और वरुण देवता, द्वितीयके अग्नि, तृतीयके वैश्वानर और चतुर्थकी नदी देवता हैं। वसिष्ठ ऋषि। जगती, शक्वरी और अतिजगती छन्द।

आ मां मित्रावरुणेह रक्षतं कुलाययद्विश्वयन्मा न आ गन् ।
अजकावं दुर्दृशीकं तिरो दधे मा मां पद्येन रपसा विदत्त्सरुः ॥१॥

---

२ जो जल अन्तरीक्षमें उत्पन्न होते हैं, जो नदी आदिमें प्रवाहित होते हैं, जो खोद कर निकाले जाते हैं और जो स्वयं उत्पन्न होकर समुद्रकी ओर जाते हैं, वे ही दीप्तिसे युक्त और पवित्र (देवी-स्वरूप) जल हमारी रक्षा करें।

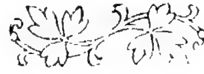
३ जिनके स्वामी वरुणदेव जल-समूहमें सत्य और मिथ्याके साक्षी होकर मध्यम लोकमें जाते हैं, वे ही रस गिरानेवाली, प्रकाशसे युक्त और शोधिका जल-देवियाँ हमारी रक्षा करें।

४ जिनमें राजा वरुण निवास करते हैं, जिनसे सोम रहता है, जिनमें अन्न पाकर विश्व-देवगण प्रमत्त होते हैं और जिनमें वैश्वानर पैठते हैं, वे ही प्रकाशक जल (अप् देवता) हमारी रक्षा करें।



१ मित्र और वरुण, इस लोकमें तुम हमारी रक्षा करो। स्थानकारी और विशेष वर्द्धमान विष हमारी ओर न आवे। अजका (कदाचित् स्तनाकृति) नामक रोगकी तरह दुर्दर्शन विष विनष्ट हो। छद्मगामी सर्प हमें पद-ध्वनिसे न पहचान सके।

यद्विजामन् परुषिवन्दनं भुवदष्ठीवन्तौ परि कुल्फौ च देहत् ।
अग्निष्टच्छोचन्नप बाधतामितो मा मां पद्येन रपसा विदत्त्सरुः ॥२॥
यच्छल्मलौ भवति यन्नदीषु यदोषधीभ्यः परि जायते विषम् ।
विश्वे देवा निरितस्तत्सुवन्तु मा मां पद्येन रपसा विदत्त्सरुः ॥३॥
याः प्रवतो निवत उद्वत उदन्वतीरनुदकाश्च याः ।
ता अस्मभ्यं पयसा पिन्वमानाः शिवा देवीरशिपदा
भवन्तु सर्वा नद्यो अशिमिदा भवन्तु ॥४॥



५१ सूक्त

आदित्य देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

आदित्यानामवसा नूतनेन सक्षीमहि शर्मणा शन्तमेन ।
अनागास्त्वे अदितित्वे तुरास इमं यज्ञन्दधतु श्रोषमाणाः ॥१॥

---

२ जो वन्दन नामका विष नाना जन्मोंमें वृक्षादिके ग्रन्थि-स्थानमें उत्पन्न होता है और जो विष जानु (घुटना) और गुल्फ (पाद-ग्रन्थि) को फुला देता है, दीप्तिमान् अग्निदेव, हमारे इस मनुष्यसे उस विषको दूर करो। छद्मगामी सर्प पद-ध्वनि द्वारा हमें जानने न पावे।

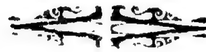
३ जो विष शाल्मली (वा वक्षःस्थान) में होता है और जो नदी-जलमें ओषधियोंसे उत्पन्न होता है, विश्वदेवगण, उस विषको हमसे दूर कर दो। छद्मगामी सर्प पद-ध्वनि द्वारा हमें जानने न पावे।

४ जो नदियाँ प्रवल (वा प्रवण) देशमें जाती हैं, जो निम्न देशमें जाती हैं, जो उन्नत देशमें जाती हैं, जो जल-युक्त और जल-शून्य होकर संसारको आप्यायित (तृप्त) करती हैं, वे सारी प्रकाशक नदियाँ हमारे शिपद नामक रोगका निवारण करके कल्याणकारिणी बनें। वे नदियाँ अहिंसक हों।

---

१ हम आदित्योंके रक्षण द्वारा नवीन और सुखकर गृह प्राप्त करें। क्षिप्रकारी आदित्यगण हमारे स्तोत्र सुनकर इस यज्ञ-कर्ताको निरपराध और अदरिद्र कर दें।

आदित्यासो अदितिर्मादयन्तां मित्रो अर्यमा वरुणो रजिष्ठाः ।
अस्माकं सन्तु भुवनस्य गोपाः पिबन्तु सोममवसे नो अद्य ॥२॥
आदित्या विश्वे मरुतश्च विश्वे देवाश्च विश्व ऋभवश्च विश्वे ।
इन्द्रो अग्निरश्विना तुष्टुवाना यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥३॥



५२ सूक्त

आदित्य देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

आदित्यासो अदितयः स्याम पूर्देवत्रा वसवो मर्त्यत्रा ।
सनेम मित्रावरुणा सनन्तो भवेम द्यावापृथिवी भवन्तः ॥१॥
मित्रस्तन्नो वरुणो मामहन्त शर्म तोकाय तनयाय गोपाः ।
मा वो भुजेमान्यजातमेनो मा तत्कर्म वसवो यच्चयध्वे ॥२॥

---

२ आदित्यगण, अदिति, अत्यन्त सरल-स्वभाव मित्र, वरुण और अर्यमा प्रमत्त हों। भुवन-रक्षक देवगण हमारे रक्षक हों। वे आज हमारी रक्षाके लिये सोमपान करें।

३ हमने समस्त आदित्यगण (१२), समस्त मरुद्गण (४६), समस्त देवगण (३३३३), समस्त ऋभुगण (३), इन्द्र, अग्नि और अश्विनीकुमारोंकी स्तुति की। तुम सदा हमें स्वस्ति द्वारा पालन करो।



१ हम आदित्योंके आत्मीय हैं; हम अखण्डनीय हों। देवोंमें हे वसुओ, मनुष्योंकी तुम रक्षा करो। मित्र और वरुण, तुम्हारा भजन करते हुए हम धनका उपभोग करेंगे। द्यावापृथिवी, हम भूति (शक्ति) वाले हों।

२ मित्र और वरुण (मित्र = उषा और सूर्यकी चालक शक्तिका देवता, वरुण = आकाशका देवता) आदि आदित्यगण हमारे पुत्र और पौत्रको सुख दें। दूसरेका किया पाप हम न भोगें। जिस कर्मको करने पर तुम नाश करते हो, वसुओ, हम वह कर्म न करें।

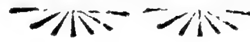
तुरण्यवोऽङ्गिरसो नक्षन्त रत्नं देवस्य सवितुरियानाः ।
पिता च तन्नो महान्यजत्रो विश्वे देवाः समनसो जुषन्त ॥३॥



५३ सूक्त

द्यावापृथिवी देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

प्र द्यावा यज्ञैः पृथिवी नमोभिः सबाध ईळे बृहती यजत्रे ।
ते चिद्धि पूर्वे कवयो गृणन्तः पुरो मही दधिरे देवपुत्रे ॥१॥
प्र पूर्वजे पितरा नव्यसीभिर्गीर्भिः कृणुध्वं सदने ऋतस्य ।
आ नो द्यावापृथिवी दैव्येन जनेन यातं महि वां वरूथम् ॥२॥
उतो हि वां रत्नधेयानि सन्ति पुरूणि द्यावापृथिवी सुदासे ।
अस्मे धत्तं यदसदस्कृधोयु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥३॥



३ क्षिप्रकारी अङ्गिरा लोगोंने सविताके पास याचना करके सविताके जिस रमणीय धनको व्याप्त किया था, उसी धनको यज्ञ-शील महान् पिता (प्रजापति) और सारे देवगण, समान मनसे हमें दें।



१ जिन विशाल और देवोंकी जननी द्यावापृथिवी (द्यौ वा द्यावा = देवलोक और पृथिवी = भूमिकी देवी) को स्तोताओंने, स्तुति करते हुए, आगे स्थापित किया था, मैं उन्हीं यजनीया और महती द्यावापृथिवीकी, ऋत्विकोंके बाधा-सहित होकर, यज्ञ और नमस्कारके साथ, स्तुति करता हूँ।

२ स्तोताओ, तुमलोग नयी स्तुतियों द्वारा पूर्व-जाता और मातृपितृ-भूता द्यावापृथिवीको यज्ञ-स्थानके अग्रभागमें स्थापित करो। द्यावापृथिवी, अपना महान् और वरणीय धन देनेके लिये, देवोंके साथ, हमारे पास आओ।

३ द्यावापृथिवी, तुम्हारे पास शोभन हवि देनेवाले यजमानके लिये देने योग्य बहुत रमणीय धन है। धनमें जो धन अक्षय हो, उसे ही हमें देना। तुम हमें सदा कल्याण (स्वस्ति) के साथ पालन करो।

—— ० ——

५४ सूक्त

वास्तोष्पति देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

वास्तोष्पते प्रति जानीह्यस्मान्त्स्वावेशो अनमीवो भवा नः।
यत्त्वेमहे प्रति तन्नो जुषस्व शं नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे ॥१॥
वास्तोष्पते प्रतरणो न एधि गयस्फानो गोभिरश्वेभिरिन्दो :
अजरासस्ते सख्ये स्याम पितेव पुत्रान् प्रति नो जुषस्व ॥२॥
वास्तोष्पते शग्मया संसदा ते सक्षीमहि रण्वया गातुमत्या।
पाहि क्षेम उत योगे वरं नो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥३॥



५५ सूक्त

वास्तोष्पति और इन्द्र देवता। वसिष्ठ ऋषि। गायत्री, अनुष्टुप् और बृहती छन्द।

अमीवहा वास्तोष्पते विश्वा रूपाण्याविशन्।
सखा सुशेव एधि नः ॥१॥

---

१ हे वास्तोष्पति (गृह-पालक देव), तुम हमें जगाओ। हमारे घरको नीरोग करो। हम जो धन माँगें, वह दो। हमारे पुत्र, पौत्र आदि द्विपदों और गौ, अश्व आदि चतुष्पदोंको सुखी करो।

२ वास्तोष्पति, तुम हमारे और हमारे धनके वर्द्धयिता होओ। सोमकी तरह आह्लादक देव, तुम्हारे सखा होनेपर हम गौओं और अश्वोंवाले और जरारहित होंगे। जैसे पिता पुत्रका पालन करता है, वैसे ही तुम हमारा पालन करो।

३ वास्तोष्पति, हम तुम्हारा सुखकर, रमणीय और धनवान् स्थान प्राप्त करें। तुम हमारे प्राप्त और अप्राप्त वरणीय धनकी रक्षा करो और हमें स्वस्तिके साथ सदा पालन करो।



१ वास्तोष्पति, तुम रोग-नाशक हो। सब प्रकारके रूपमें पैठ कर हमारे सखा और सुखकर बनो।

यदर्जुन सारमेय दतः पिशङ्ग यच्छसे ।
वीव भ्राजन्त ऋष्टय उप स्रक्वेषु बप्सतो नि षु स्वप ॥२॥
स्तेनं राय सारमेय तस्करं वा पुनःसर ।
स्तोतृनिन्द्रस्य रायसि किमस्मान्दुच्छुनायसे नि षु स्वप ॥३॥
त्वं सूकरस्य दर्दृहि तव दर्दर्तु सूकरः ।
स्तोतृ-निन्द्रस्य रायसि किमस्मान्दुच्छुनायसे निषु स्वप ॥४॥
सस्तु माता सस्तु पिता सस्तु श्वा सस्तु विश्पतिः ।
ससन्तु सर्वे ज्ञातयः सस्त्वयमभितो जनः ॥५॥
य आस्ते यश्च चरति यश्च पश्यति नो जनः ।
तेषां सं हन्मो अक्षाणि यथेदं हर्म्यं तथा ॥६॥
सहस्र शृङ्गो वृषभो यः समुद्रादुदाचरत् ।
तेना सहस्येना वयं नि जनान् स्वापयामसि ॥७॥

---

२ हे श्वेतवर्ण और किसी-किसी अंशमें पिङ्गलवर्ण तथा सरमा (देव-कुक्कुरी) के ही वंशोद्भूत वास्तोष्पति, जिस समय तुम दाँत निकालते हो, उस समय हमारे पास, आहारके समय, ओष्ठ-प्रान्तमें, आयुधकी तरह दाँत विशेष शोभा पाते हैं। इस समय तुम सुखसे सोओ।

३ हे सारमेय, तुम जिस स्थानमें जाते हो, वहाँ फिर आते हो। तुम स्तेन (चोर) और तस्कर (डकैत) के पास जाओ। इन्द्रके स्तोताके पास क्या जाते हो? हमें क्यों बाधा देते हो? सुखसे सोओ।

४ तुम सूअरको फाड़ो और सूअर तुम्हें फाड़े। इन्द्रके स्तोताओंके पास क्या जाते हो? हमें क्यों बाधा देते हो? अच्छी तरहसे सोओ।

५ तुम्हारी माता सोवे। तुम्हारे पिता सोवें। कुक्कुर (तुम) सोवो। गृहस्वामी सोवे बन्धु-लोग भी सोवें। चारों ओरके ये मनुष्य भी सोवें।

६ जो व्यक्ति यहाँ है, जो विचरण करता है, जो हमें देखता है, ऐसे सबकी आँखें हम फोड़ देंगे। जैसे यह हर्म्य (कोठा) निश्चल है, वैसे ही वह भी हो जायँगे।

७ जो सहस्रशृङ्गों वा किरणोंवाले वृषभ (सूर्य) समुद्रसे ऊपर उठे हैं, उन विजेताकी *सहायतासे हम सारे मनुष्योंको सुला देंगे।*

प्रोष्ठेशया वह्येशया नारीर्यास्तल्पशीवरीः ।
स्त्रियो याः पुण्यगन्धास्ताः सर्वाः स्वापयामसि ॥८॥



४ अनुवाक । ५६ सूक्त

मरुत् देवता । वसिष्ठ ऋषि । द्विपदा, विराट् और त्रिष्टुप् छन्द ।

क ईं व्यक्ता नरः सनीला रुद्रस्य मर्या अधा स्वश्वाः ॥१॥
नकिर्ह्येषां जनूंषि वेद ते अङ्ग विद्रे मिथो जनित्रम् ॥२॥
अभि स्वपूभिर्मिथो वपन्त वातस्वनसः श्येना अस्पृध्रन् ॥३॥
एतानि धीरो निण्या चिकेत पृश्निर्यदूधो मही जभार ॥४॥
सा विट् सुवीरा मरुद्भिरस्तु सनात् सहन्ती पुष्यन्ती नृम्णम् ॥५॥

---

८ जो स्त्रियाँ आँगनमें सोनेवाली हैं, जो वाहनपर सोनेवाली हैं, जो तल्प (बिस्तरे) पर सोनेवाली हैं और जो पुण्य-गन्धा हैं, ऐसी सब स्त्रियोंको हम सुला देंगे ।



१ कान्तियुक्त नेता, समानगृह-निवासी, महादेवके पुत्र, मनुष्य-हितैषी और सुन्दर अश्ववाले ये रुद्र-पुत्रगण कौन हैं ?

२ इनकी उत्पत्ति कोई नहीं जानता । ये ही परस्पर अपनी जन्म-कथा जानते हैं ।

३ स्वयं ही घूमते हुए ये परस्पर मिलते हैं । वायुके समान वेगशाली श्येन (बाज) पक्षीकी तरह ये परस्पर स्पर्द्धा (होड़) करते हैं ।

४ शास्त्रज्ञ मनुष्य इन श्वेतवर्ण जीवों (मरुतों) को जानते हैं । महती पृश्नि (मरुतोंकी माता) ने इन्हें अन्तरीक्षमें धारण कर रखा है ।

५ वह बुद्धि, मरुतोंके अनुग्रहसे, सदा शत्रुओंको हरानेवाली, धनकी पुष्टि देनेवाली और वीर पुत्रवाली है ।

यामं येष्ठाः शुभा शोभिष्ठाः श्रिया संमिश्ला ओजोभिरुग्राः ॥६॥

उग्रं व ओजः स्थिरा शवांस्यधा मरुद्भिर्गणस्तुविष्मान् ॥७॥

शुभ्रो वः शुष्मः क्रुध्मी मनांसि धुनिर्मुनिरिव शर्धस्य धृष्णोः ॥८॥

सनेम्यस्मद्युयोत दिद्युं मा वो दुर्मतिरिह प्रणङ्नः ॥९॥

प्रिया वो नाम हुवे तुराणामा यत्तृपन् मरुतो वावशानाः ॥१०॥

स्वायुधास इष्मिणः सुनिष्का उत स्वयं तन्व शुम्भमानाः ॥११॥

शुची वो हव्या मरुतः शुचीनां शुचिं हिनोम्यध्वरं शुचिभ्यः।
ऋतेन सत्यमृतसाप आयञ्छुचिजन्मानः शुचयः पावकाः ॥१२॥

अंसेष्वा मरुतः खादयो वो वक्षःसु रुक्मा उपशिश्रियाणाः।
वि विद्युतो न वृष्टिभी रुचाना अनु स्वधामायुधैर्यच्छमानाः ॥१३॥

---

६ मरुत् लोग (जल-वायुके देवता और रुद्रके अनुचर) जानेवाले स्थानोंको सबसे अधिक जाते हैं। वे अलङ्कार द्वारा सबसे अधिक शोभा पाते हैं। वे कान्तिपूर्ण और ओजस्वी हैं।

७ तुम्हारा तेज उग्र है और बल स्थिर। मरुद्गण बुद्धिमान् हों।

८ तुम्हारा बल सर्वत्र शोभित है। तुम्हारा चित्त क्रोध-शील है। पराभव करनेवाले और बलवान् मरुतोंका वेग, स्तोताकी तरह, बहुविध-शब्दकारी है।

९ मरुतो, हमारे पाससे पुराने हथियार अलग करो। तुम्हारी क्रूर बुद्धि हमें व्याप्त न करे।

१० तुम क्षिप्रकर्त्ता हो। तुम्हारे प्रिय नामको हम पुकारते हैं। प्रिय मरुद्गण इससे सन्तुष्ट होते हैं।

११ मरुद्गण सुन्दर आयुधवाले, गतिशील और सुन्दर अलङ्कारवाले हैं। वे हमारे शरीरको सजाते हैं।

१२ मरुतो, तुम शुद्ध हो। शुद्ध हव्य तुम्हारे लिये हो। तुम शुद्ध हो तुम्हारे लिये हम शुद्ध यज्ञ करते हैं। जलस्पर्शी मरुद्गण सत्यसे सत्यको प्राप्त हुए हैं। मरुद्गण शुद्ध हैं, उनका जन्म शुद्ध है और वे अन्यको शुद्ध करते हैं।

१३ मरुतो, तुम्हारे कंधोंपर खादि (एक प्रकारका अलङ्कार वा वलय) स्थित है, उत्तम रुक्म (हार) तुम्हारे हृदय-स्थलमें है। जैसे वर्षाके साथ बिजली शोभा पाती है, वैसे ही जल-प्रदानके समय आयुध (मेघगर्जन) द्वारा तुम शोभा पाते हो।

प्र बुध्न्या व ईरते महांसि प्र नामानि प्रयज्यवस्तिरध्वम् ।
सहस्रियं दम्यं भागमेतं गृहमेधीयं मरुतो जुषध्वम् ॥१४॥
यदि स्तुतस्य मरुतो अधीथेत्था विप्रस्य वाजिनो हवीमन् ।
मक्षू रायः सुवीर्यस्य दात नू चिद्यमन्य आदभदरावा ॥१५॥
अत्यासो न ये मरुतः स्वञ्चो यक्षदृशो न शुभयन्त मर्याः ।
ते हर्म्येष्ठाः शिशवो न शुभ्रा वत्सासो न प्रक्रीळिनः पयोधाः ॥१६॥
दशस्यन्तो नो मरुतो मृळन्तु वरिवस्यन्तो रोदसी सुमेके ।
आरे गोहा नृहा वधो वो अस्तु सुम्नेभिरस्मे वसवो नमध्वम् ॥१७॥
आ वो होता जोहवीति सत्तः सत्राचीं रातिं मरुतो गृणानः ।
य ईवतो वृषणो अस्ति गोपाः सो अद्वयावी हवते व उक्थैः ॥१८॥

---

१४ मरुतो, तुम्हारा अन्तरीक्षमें उत्पन्न तेज विशेष रूपसे गमन करता है। तुम विशेष रूपसे यजनीय हो। जल-वृद्धि करो। मरुतो, तुम सहस्र संख्यावाले, गृहोत्पन्न और गृहमेधियों द्वारा दत्त इस भागका आश्रय करो।

१५ मरुतो, तुम अन्नवाले मेधावीके हव्यसे युक्त स्तोत्रको जानते हो; इसलिये शोभन पुत्र-वालेको शीघ्र धन दो। उस धनको शत्रु नहीं नष्ट कर सकता।

१६ मरुद्गण सततगामी अश्वकी तरह सुन्दर गमनवाले हैं। उत्सवदर्शक मनुष्योंकी तरह शोभन हैं और गृह-स्थित शिशुओंकी तरह सुन्दर हैं। वे क्रीड़ा-परायण वत्सोंकी तरह हैं और जलके धारक हैं।

१७ हमारे लिये धन देते हुए और अपनी महिमासे सुन्दर द्यावापृथिवीको पूर्ण करते हुए मरुद्गण हमें सुखी करें। मरुतो, मनुष्य-नाशक तुम्हारा आयुध हमारे पाससे दूर रहे। सुखसे हमारे अभिमुख होओ।

१८ होतृ-गृहमें बैठा हुआ होता तुम्हारे सर्वत्रगामी दान-कार्यकी प्रशंसा करके तुम लोगोंको भली भाँति बार-बार बुलाता है। कामवर्षक मरुतो, जो होता कार्य-निष्ठ यजमानका रक्षक है, वह माया-शून्य होकर स्तोत्रों द्वारा तुम्हारी स्तुति करता है।

इमे तुरं मरुतो रामयन्तीमे सहः सहस आ नमन्ति ।
इमे शंसं वनुष्यतो नि पान्ति गुरु द्वेषो अररुषे दधन्ति ॥१६॥
इमे रध्रं चिन्मरुतो जुनन्ति भृमिं चिद्यथा वसवो जुषन्त ।
अप बाधध्वं वृषणस्तमांसि धत्त विश्वं तनयं तोकमस्मे ॥२०॥
मा वो दात्रान्मरुतो निरराम मा पश्चाद्दध्म रथ्यो विभागे ।
आ नः स्पार्हे भजतना वसव्ये यदीं सुजातं वृषणो वो अस्ति ॥२१॥
सं यद्धनन्त मन्युभिर्जनासः शूरा यह्वीष्वोषधीषु विक्षु ।
अध स्मा नो मरुतो रुद्रियासस्त्रातारो भूत पृतनास्वर्यः ॥२२॥
भूरि चक्र मरुतः पित्र्याण्युक्थानि या वः शस्यन्ते पुरा चित् ।
मरुद्भिरुग्रः पृतनासु साह्ला मरुद्भिरित् सनिता वाजमर्वा ॥२३॥
अस्मे वीरो मरुतः शुष्म्यस्तु जनानां यो असुरो विधर्ता ।
अपो येन सुक्षितये तरेमाध स्वमोको अभि वः स्याम ॥२४॥

---

१६ ये मरुद्गण यज्ञमें क्षिप्रकारी यजमानको प्रसन्न करते हैं। ये बल द्वारा बलवान् लोगोंको नीचे करते हैं। ये हिंसकसे स्तोताकी रक्षा करते हैं। परन्तु जो हव्य नहीं देता, उसका महान् अप्रिय करते हैं।

२० ये धनी और दरिद्र—दोनोंको उत्तेजित करते हैं। जैसा कि, देवगण अथवा बन्धुगण चाहते हैं—काम-वर्षक मरुतो, तुम अन्धकार नष्ट करो और हमें यथेष्ट पुत्र और पौत्र प्रदान करो।

२१ तुम्हारे दानसे हम बाहर न हों। रथवाले मरुतो, धन-दानके समय हमें पीछे नहीं फेंकना। अभिलषणीय धनोंमें हमें भागी बनाना। कामवर्षक मरुतो, तुम्हारा जो सुजात धन है, उसका भी हमें भागी बनाना।

२२ जिस समय विक्रम-शाली मनुष्य अनेक ओषधियों और मनुष्योंको जीतनेके लिये क्रुद्ध होते हैं, उस समय, रुद्र-पुत्र मरुतो, संग्राममें शत्रुके निकटसे हमारे रक्षक बनना।

२३ मरुतो, हमारे पूर्वजनोंके लिये तुमने अनेक कार्य किये हैं। तुम्हारे पहलेके जो सब काम प्रशंसित होते हैं, उन्हें भी तुमने किया है। युद्धमें तुम्हारी सहायतासे ओजस्वी व्यक्ति शत्रुओंको पराजित करता है। तुम्हारी ही सहायतासे स्तोता अन्न भोग करता है।

२४ मरुतो, हमारा वीर पुत्र बली हो। वह असुर (प्रज्ञावान् पुत्र) शत्रुओंका विधारक हो। उस पुत्रके द्वारा हम सुन्दर निवासके लिये शत्रुओंका विनाश करेंगे। तुम्हारे हम आत्मीय स्थानमें रहेंगे।

तन्न इन्द्रो वरुणो मित्रो अग्निराप ओषधीर्वनिनो जुषन्त ।
शर्मन्त्स्याम मरुतामुपस्थे यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥२५॥



५७ सूक्त

मरुद्गण देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

मध्वो वो नाम मारुतं यजत्राः प्र यज्ञेषु शवसा मदन्ति ।
ये रेजयन्ति रोदसी चिदुर्वी पिन्वन्त्युत्सं यदयासुरुग्राः ॥१॥
निचेतारो हि मरुतो गृणन्तं प्रणेतारो यजमानस्य मन्म
अस्माकमद्य विदथेषु बर्हिरा वीतये सदत पिप्रियाणाः ॥२॥
नैतावदन्ये मरुतो यथेमे भ्राजन्ते रुक्मैरायुधैस्तनूभिः ।
आ रोदसी विश्वपिशः पिशानाः समानमञ्ज्यञ्जते शुभे कम् ॥३॥

२५ इन्द्र, वरुण, मित्र, अग्नि, जल, ओषधि और वृक्ष हमारे स्तोत्रका आश्रय करें। मरुतोंकी गोदमें हम सुखसे रहेंगे। तुम सदा हमें स्वस्ति द्वारा पालन करो।



१ यजनीय मरुतो, मत्त स्तोता लोग यज्ञ-समयमें, बलके साथ, तुम्हारे नामकी स्तुति करते हैं। मरुद्गण विस्तृत द्यावापृथिवीको कम्पित करते हैं। वे मेघोंसे जल बरसाते हैं और ओजस्वी होकर सर्वत्र जाते हैं।

२ मरुद्गण स्तोताको खोजते हैं। यजमानका मनोरथ पूर्ण करते हैं। तुमलोग प्रसन्न होकर हमारे यज्ञमें, सोमपानके लिये, कुशपर बैठो।

३ मरुद्गण जितना दान करते हैं, उतना और कोई नहीं करता। ये हार, आयुध और शरीरकी शोभासे शोभित होते हैं। द्यावापृथिवीका प्रकाश करनेवाले और व्याप्त-प्रकाश मरुद्गण शोभाके लिये समानरूप आभरण प्रकट करते हैं।

ऋधक्सा वो मरुतो दिद्युदस्तु यद्व आगः पुरुषता कराम ।
मा वस्तस्यामपि भूमा यजत्रा अस्मे वो अस्तु सुमतिश्चनिष्ठा ॥४॥
कृते चिदत्र मरुतो रणन्तानवद्यासः शुचयः पावकाः ।
प्र णोऽवत सुमतिभिर्यजत्राः प्र वाजेभिस्तिरत पुष्यसे नः ॥५॥
उत स्तुतासो मरुतो व्यन्तु विश्वेभिर्नामभिर्नरो हवींषि ।
ददात नो अमृतस्य प्रजायै जिगृत रायः सूनृता मघानि ॥६॥
आ स्तुतासो मरुतो विश्व ऊती अच्छा सूरीन्त्सर्वताता जिगात ।
ये नः त्मना शतिनो वर्द्धयन्ति यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥७॥



५८ सूक्त

मरुत् देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

प्र साकमुक्षे अर्चता गणाय यो दैव्यस्य धाम्नस्तुविष्मान् ।
उत क्षोदन्ति रोदसी महित्वा नक्षन्ते नाकं निर्ऋतेरवंशात् ॥१॥

---

४ मरुतो, तुम्हारा प्रसिद्ध आयुध हमसे दूर रहे। यद्यपि हम मनुष्य होनेके कारण तुम्हारे पास अपराध करते हैं, तो भी, हे यजनीय मरुतो, तुम्हारे उस आयुधमें न पड़ें। तुम्हारी जो बुद्धि सबसे अधिक अन्न देनेवाली है, वह हमारी हो।

५ हमारे यज्ञ-कार्यमें मरुद्गण रमण करें। वे अनिन्दित, दीप्ति-युक्त और शोधक हैं। यजनीय मरुतो, कृपा करके अथवा सुन्दर स्तुतिके कारण, हमें विशेष रूपसे पालन करो। अन्नके द्वारा पोषणके लिये हमें प्रवर्द्धित करो।

६ स्तुत होकर मरुद्गण हविका भक्षण करें। वे नेता हैं और सारे जलोंके साथ वर्त्तमान हैं। मरुतो, हमारी सन्तानके लिये जल दो। हव्यदाताको सत्य और प्रिय धन दो।

७ स्तुत होकर मरुद्गण सारे रक्षणोंके साथ यज्ञमें स्तोताके सामने आवें। ये स्वयं स्तोताओंको शत-सङ्ख्या (पुत्रादि) से युक्त करके बढ़ाते हैं। तुम सदा हमें स्वस्ति द्वारा पालन करो।



१ स्तोताओ, तुम सदावर्षक मरुद्वृन्दकी पूजा करो। ये देवताओंके स्थान (स्वर्ग) में सबसे बुद्धिमान् हैं। अपनी महिमासे ये द्यावापृथिवीको भग्न करते हैं। भूमि और अन्तरीक्षसे स्वर्गको व्याप्त करते हैं।

जनूश्चिद्वो मरुतस्त्वेष्येण भीमासस्तुविमन्यवोऽयासः ।
प्र ये महोभिराजसोत सन्ति विश्वो वो यामन् भयते स्वर्दृक् ॥२॥
बृहद्वयो मघवद्भ्यो दधात जुजोषन्निन्मरुतः सुष्टुतिं नः ।
गतो नाध्वा वि तिराति जन्तुं प्र णः स्पार्हाभिरूतिभिस्तिरेत ॥३॥
युष्मोतो विप्रो मरुतः शतस्वी युष्मोतो अर्वा सहुरिः सहस्री ।
युष्मोतः सम्राळुत हन्ति वृत्रं प्र तद्वो अस्तु धूतयो देष्णम् ॥४॥
ताँ आ रुद्रस्य मीह्ळुषो विवासे कुविन्नंसन्ते मरुतः पुनर्नः ।
यत् सस्वर्ता जिहीळिरे यदाविरव तदेन ईमहे तुराणाम् ॥५॥
प्र सा वाचि सुष्टुतिर्मघोनामिदं सूक्तं मरुतो जुषन्त ।
आराच्चिद्द्वेषो वृषणो युयोत यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥६॥



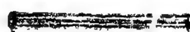
२ हे भीम, प्रवृद्ध-बुद्धि और गमनशील मरुतो, तुम्हारा जन्म दीप्त रुद्रसे हुआ है। मरुद्गण तेज और बलसे प्रभावशाली हुए हैं। तुम्हारे गमनमें सूर्यको देखनेवाला सारा प्राणि-जगत् डरता है।

३ तुम हव्य-युक्तको बहुत अन्न दो। हमारे सुन्दर स्तोत्रका अवश्य सेवन करो। मरुद्गण जिस मार्गको प्राप्त होते हैं, वह प्राणियोंको नहीं विनष्ट करता। वे हमें अभिलषणीय रक्षण द्वारा प्रवर्द्धित करें।

४ मरुतो, तुम्हारे द्वारा रक्षित होकर स्तोता शतसङ्ख्यासे युक्त धनवाला होता है। तुम्हारे द्वारा रक्षित होकर स्तोता आक्रमण-कर्त्ता, शत्रुओंको दबानेवाला और सहस्र धनवाला होता है। तुम्हारे द्वारा रक्षित होकर वह सम्राट् और शत्रु-नाशक होता है। हे कम्पक, तुम्हारा दिया हुआ वह धन बहुत बढ़े।

५ काम-वर्षक मरुतोंकी मैं सेवा करता हूँ। वे फिर कई बार हमारे अभिमुख हों। जिस प्रकट वा अप्रकट पापसे मरुद्गण क्रुद्ध होते हैं, उसे मरुतोंकी स्तुति करके हम धो देंगे।

६ हमने धनी मरुतोंकी उस शोभन स्तुतिको इस सूक्तमें किया है। मरुद्गण उस सूक्तका सेवन करें। अभीष्ट-वर्षक मरुतो, तुम दूरसे ही शत्रुओंको अलग करो। तुम हमें सदा स्वस्ति द्वारा पालन करो।



५ सूक्त

मरुद्गण देवता । अन्तिम मन्त्रके रुद्र देवता । वसिष्ठ ऋषि । बृहती, सतोबृहती, त्रिष्टुप्, गायत्री और अनुष्टुप् छन्द ।

यं त्रायध्व इदमिदं देवासो यं च नयथ ।
तस्मा अग्ने वरुण मित्रार्यमन्मरुतः शर्म यच्छत ॥१॥
युष्माकं देवा अवसाहनि प्रिय ईजानस्तरति द्विषः ।
प्र स क्षयं तिरते वि महीरिषो यो वो वराय दाशति ॥२॥
नहि वश्चरमं चन वसिष्ठः परिमंसते ।
अस्माकमद्य मरुतः सुते सचा विश्वे पिबत कामिनः ॥३॥
नहि व ऊतिः पृतनासु मर्धति यस्मा अराध्वं नरः ।
अभि व आवर्त्सुमतिर्नवीयसी तूयं यात पिपीषवः ॥४॥
ओ षु घृष्विराधसो यातनान्धांसि पीतये ।
इमा वो हव्या मरुतो ररे हि कं मो ष्वन्यत्र गन्तन ॥५॥
आ च नो बर्हिः सदताविता च नः स्पार्हाणि दातवे वसु ।
अस्त्रेधन्तो मरुतः सोम्ये मधौ स्वाहेह मादयाध्वै ॥६॥

---

१ देवो, भयसे स्तोताको बचाओ । अग्नि, वरुण, मित्र, अर्यमा और मरुतो, तुम जिसे सन्मार्गपर ले जाते हो, उसे सुख दो ।

२ देवो, तुम्हारे रक्षणसे तुम्हारे प्रिय दिनमें जो यज्ञ करता है, जो शत्रुको आक्रान्त करता है, जो तुम्हें दूसरे स्थानमें न जाने देनेके लिये तुम्हें बहुत हव्य देता है, वह अपने निवासको बढ़ता हैं ।

३ मैं वसिष्ठ तुम लोगोंमें जो अवर (मन्द) हैं, उन्हें छोड़कर स्तुति नहीं करता । मरुतो, आज सोमाभिलाषी होकर और तुम सब मिलकर हमारे सोमके अभिषुत होनेपर पान करो ।

४ नेताओ, जिसे तुम अभिलषित प्रदान करते हो, उसे तुम्हारी रक्षा युद्धमें बचाती है । तुम्हारी नयी कृपा-बुद्धि हमारे सामने आवे । सोमपानाभिलाषियो, तुम शीघ्र आओ ।

५ मरुतो, तुम्हारा धन परस्पर मिला हुआ है । सोमरूप हवि भक्षण करनेके लिये अच्छी तरह आओ । मरुतो, तुम्हें मैं यह हवि देता हूँ; इसलिये तुम अन्यत्र नहीं जाना ।

६ मरुतो, तुम हमारे कुशोंपर बैठो । अभिलषणीय धन देनेके लिये हमारे पास आओ । मरुतो, तुम लोग अहिंसक होकर इस यज्ञमें मदकर सोमरूप हव्यपर स्वाहा कहकर प्रमत्त होओ ।

सस्वश्चिद्धि तन्वः शुम्भमाना आ हंसासो नीलपृष्ठा अपप्तन् ।
विश्वं शर्धो अभितो मा निषेद नरो न रण्वाः सवने मदन्तः ॥७॥
यो नो मरुतो अभि दुर्हृणायुस्तिरश्चित्तानि वसवो जिघांसति ।
द्रुहः पाशान् प्रति स मुचीष्ट तपिष्ठेन हन्मना हन्तना तम् ॥८॥
सान्तपना इदं हविर्मरुतस्तज्जुजुष्टन ।
युष्माकोती रिशादसः ॥९॥
गृहमेधास आ
युष्माकोती सु
इहेह वः स्व
यज्ञं मरु
त्र्यम्बकं य
उर्वारुकमि

---

७ अन्तर्हित मरुतो, ... तरह आओ । मेरे यज्ञमें आनन्दित और रमण ... बैठें ।

८ प्रशंसनीय मरुतो, ... नाश करना चाहता है, वह पाप-द्रोही वरुण ... तीव तापक आयुधसे विनष्ट करो ।

९ शत्रुतापक, यहीं तुम्हा ... सेवन करो ।

१० मरुतो, तुम गृहमें ...

११ हे स्वयं प्रवृद्ध और ...

१२ हम सुगन्धि (प्रसा ... णमादिशक्ति-वर्द्धन) त्र्यम्बक (ब्रह्मा, विष्णु ... हैं । रुद्रदेव, उर्वारुकफल (बदरीफल) की ... चिर जीवन वा स्वर्ग)से मत मुक्त करो ।

चतुर्थ अध्याय समाप्त

(प्रथम खण्ड समाप्त)